2014
बारहवाँ अंक

ISSN 2319-8567

करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

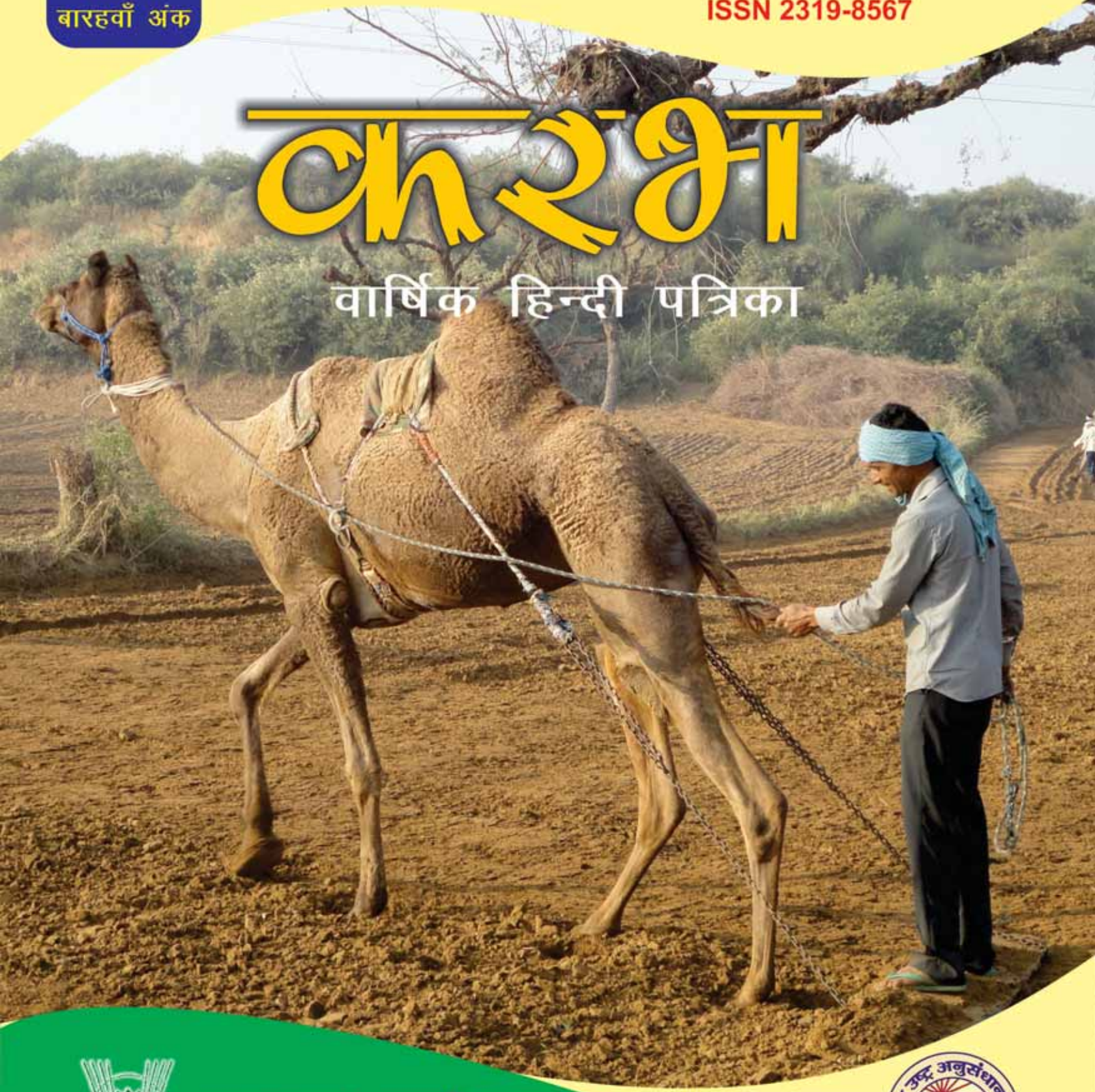

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र
जोड़बीड़, बीकानेर–334 001, (राजस्थान)

भारत सरकार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर

प्रशस्ति-पत्र

वर्ष 2013-14 के दौरान नगर में राजभाषा के सर्वाधिक एवं उत्कृष्ट प्रयोग के लिए राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र, बीकानेर को प्रशस्ति पत्र प्रदान किया जाता है।

(मंजू गुप्ता)
अध्यक्ष नराकास एवं
मंडल रेल प्रबंधक

दिनांक – 30-06-2014

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

करभ

प्रकाशक व संपर्क सूत्र

निदेशक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)

पोस्ट बैग–07, जोड़बीड़, बीकानेर–334 001 (राज.), भारत

दूरभाष : 0151–2230183, 2230858, 2230070

फैक्स : 0091–151–2231213

ई–मेल : nrccamel@nic.in

वेबसाइट : www.nrccamel.res.in

करभ – 2014

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

संरक्षक व प्रकाशक

डॉ. नितीन वसन्तराव पाटिल
निदेशक, भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द, बीकानेर

प्रधान सम्पादक

डॉ. फतेह चन्द टुटेजा
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रभारी राजभाषा

सम्पादक

श्री नेमीचन्द बारासा
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी

संपादक मण्डल

डॉ. राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक
डॉ. संजय कुमार, वैज्ञानिक
डॉ. श्याम सिंह दहिया, वैज्ञानिक
डॉ. काशीनाथ, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
श्री वी.के. पान्डे, प्रशासनिक अधिकारी
श्री भरत कुमार आचार्य, सहायक वित्त एवं लेखाधिकारी
डॉ. राकेश कुमार पूनियाँ, तकनीकी सहायक

मुद्रक

युगान्तर प्रकाशन प्रा. लि.
डब्ल्यू एच–23, मायापुरी, नई दिल्ली–110064
दूरभाषः 011–28115949

नोट : पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार लेखकों के अपने हैं। इन विचारों के लिए प्रकाशक अथवा 'करभ' पत्रिका का सम्पादक मण्डल किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
❖ राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र : उष्ट्र दूध को खाद्य पदार्थ में शामिल करने हेतु अभियान	1
❖ राष्ट्रीय पशुधन नीति : एक विश्लेषण	5
❖ इसलिए उपयोगी है ऊँटनी का दूध	10
❖ ग्लोबल वार्मिंग के संदर्भ में गर्मी तनाव का ऊँट और अन्य पशुओं के उत्पादन पर असर और सुधार हेतु वैज्ञानिक सुझाव	12
❖ वैकल्पिक चिकित्सा	20
❖ ऊँटनी के दूध में निहित अद्वितीय विक्रय बिन्दु (यूएसपी)	24
❖ ऊँटों में तिबरसा रोग का फैलाव और नियंत्रण	27
❖ नयी दुनिया के ऊँट	31
❖ मर्स : मनुष्य और ऊँटों के लिए एक उभरता खतरा	34
❖ ऊँट : संख्या में खतरनाक गिरावट से विलुप्तता की ओर अग्रसर	37
❖ पशुओं से प्राप्त उत्पाद की बाजार में बिक्री व्यवस्था	38
❖ ऊँटों से मनुष्यों में फैलने वाली बीमारियाँ और उनकी रोकथाम	40
❖ हर्बलिज्म अर्थात् जड़ी–बूटी : एक प्रभावी चिकित्सा	43
❖ केन्द्रीय सेवा (आचरण) नियमावली : एक दृष्टि में	47
❖ ऊँटनी के दूध एवं अन्न के यौगिक खाद्य पदार्थ : उत्पादन एवं संभावनाएँ	52
❖ जलवायु परिवर्तन के प्रभाव	56
❖ ऊँटों को राजस्थान का राज्य पशु घोषित करना–सरकार का स्वागत योग्य कदम	58

विषय	पृष्ठ संख्या
❖ कुपोषण : समस्या एवं निदान	59
❖ ऊँट की शारीरिक क्रियाएँ : विलक्षण अनुकूलनता	61
❖ उष्ट्र दौड़ : एक प्राचीन खेल	64
❖ ई–कृषि शिक्षा : कृषि का ई–लर्निंग पोर्टल	66
❖ कीटनाशक रसायनों के प्रयोग में सावधानियाँ	68
❖ थार रेगिस्तान में ऊँट सफारी का बढ़ता कारोबार : एक आकलन	71
❖ जीवन दर्शन : रोटी–सा फुलाएँ जिन्दगी को	73
❖ मेरे पग	74
❖ राजभाषा हिन्दी और उसका कार्यान्वयन	75
❖ हिन्दी भाषा का बाजारीकरण	79
❖ राजभाषा संबंधी कार्यक्रम एवं गतिविधियाँ	84
❖ आपके पत्र	92

डा. एस. अय्यप्पन
सचिव एवं महानिदेशक

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110 001
दूरभाषः 91–11–23382629; 23386711
फैक्सः 91–11–23384773
ई–मेलः dg.icar@nic.in

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि भा.कृ.अ.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा राजभाषा पत्रिका **'करभ'** के 12वें अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। सूचना एवं प्रौद्योगिकी के युग में भी वही किसान–पशुपालक प्रगति कर पा रहे हैं जो समयोचित बदलाव हेतु वैज्ञानिक–तकनीकी ज्ञान को व्यवहार में अपना रहे हैं। ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में प्राप्त वैज्ञानिक उपलब्धियों को परखने हेतु विषय–विशेषज्ञों एवं किसान भाइयों का परस्पर सांझा प्रयास अपेक्षा के अनुरूप परिणाम दिलाने में मददगार साबित हो सकता है। इससे जहां किसान खुशहाल होगा वहीं वैज्ञानिक भी उत्साहवर्धन के साथ मौलिक व नूतन चिंतन में अपना सार्थक योगदान दे सकेंगे।

ऊँट प्रजाति के विकास एवं संरक्षण हेतु जहां भा.कृ.अ.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र प्रतिबद्ध है वहीं राजस्थान सरकार द्वारा ऊँट को राजकीय पशु घोषित करने का प्रयास, मानव सभ्यता के विकास हेतु इस प्रजाति द्वारा प्रदत्त महत्वपूर्ण योगदान के प्रति सच्ची श्रद्धा एवं अपूर्व दूरदर्शिता का परिचायक है। इससे निश्चित रूप से ऊँट एवं ऊँट पालकों को संबल मिलेगा।

साहित्य ज्ञान का हर युग के उत्थान एवं प्रगति में अहम् योगदान रहा है। इस संदर्भ में करभ पत्रिका, ऊँट एवं ऊँट पालकों के कल्याणार्थ अपना अतुलनीय योगदान देते हुए निरंतर अपनी उपयोगिता को सार्थक करे, ऐसी मेरी शुभेच्छा है।

मैं, इस प्रयास के लिए केन्द्र निदेशक एवं पत्रिका के सम्पादन मण्डल को बधाई देता हूँ।

एस. अय्यप्पन

(एस. अय्यप्पन)

भाकृअनुप
ICAR

प्रो. कृष्ण मुरारी लाल पाठक
उपमहानिदेशक (पशु विज्ञान)

भाकृअनुप
ICAR

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि भवन, डा. राजेंद्र प्रसाद मार्ग, नई दिल्ली–110 114
दूरभाषः (कार्या.) 23381119, 23388991–7 एक्सटेंशनः 200
फैक्सः 009–11–23097001, 23387293
ई–मेलः ddgas.icar@nic.in

संदेश

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर की 'राजभाषा वार्षिक पत्रिका 'करभ' के 12 वें अंक के प्रकाशन पर मेरी ओर से शुभ कामनाएं एवं हार्दिक बधाई।

कृषि प्रधान यह भारत देश तकनीकी और ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में निरंतर नूतन ऊँचाइयाँ प्राप्त कर रहा है। इससे प्रत्येक भारतवासी का आत्मविश्वास और अधिक प्रगाढ़ हुआ है। देश की इस प्रगति में कृषक–पशुपालक अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। वहीं आज वे नूतन प्रौद्योगिकी को लेकर उत्साहित एवं आशान्वित है ताकि उनके समाजार्थिक जीवन स्तर में सामयिक परिवर्तन आ सके। इसके लिए यदि तकनीकी ज्ञान का हस्तांतरण सरल, सहज व प्रभावी ढंग से होगा तो बेहतर परिणाम सामने आएंगे।

इस प्रदेश में पशुधन की बात करें तो अलग पारिस्थितिकी एवं सूखा, अकाल, प्राकृतिक आपदा आदि विषम परिस्थितियों में पशुधन के सहारे ही यहां का रहवासी अपनी आजीविका सहजतापूर्वक चला पाता है। पशुधन में यहां 'ऊँट' सर्वोपरि है जो भौगोलिक परिस्थितियों का बखूबी वरण करने वाला जीव है। लेकिन देशकाल परिस्थितियाँ सदा परिवर्तनशील रही है, ऐसे में ऊँट का महत्व एवं पारम्परिक उपयोगिता भी प्रभावित होना स्वाभाविक है। उष्ट्र पर वैज्ञानिक अनुसंधान केन्द्र होने के नाते भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर लगातार इस प्रयत्न में हैं कि उष्ट्र पालन व्यवसाय को बुनियादी एवं व्यावहारिक तौर पर पुनर्जीवित किया जाए जिससे उष्ट्र प्रजाति व ऊँट पालकों के लिए यह व्यवसाय कल्याणकारी सिद्ध हो। केन्द्र ऊँटों के हर पहलू से जुड़ी समस्या के निदान हेतु वैज्ञानिक सहायता, सजग परामर्श एवं सामयिक सुझाव प्रदान करने हेतु तत्पर रहता है। इस केन्द्र द्वारा अपनी रचनात्मक गतिविधियों के माध्यम से ऊँट पालकों को प्रोत्साहित करना प्रशंसनीय है जो समय की मांग भी है।

राजभाषा पत्रिका 'करभ' के इस प्रकाशन पर मेरी ओर से पुनः मंगल कामना तथा लेखक गणों एवं भाषा विद्दों को उनके अतुलनीय योगदान के लिए पुनः बहुत–बहुत बधाई।

(के.एम.एल. पाठक)

भाकृअनुप
ICAR

डॉ. नितीन वसन्तराव पाटिल
निदेशक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
पोस्ट बैग–07, जोड़बीड़, बीकानेर–334 001 (राज.), भारत
दूरभाष : 0151–2230183, 2230858, 2230070
फैक्स : 0091–151–2231213
ई–मेल : nrccamel@nic.in
वेबसाइट : www.nrccamel.res.in

संरक्षक की कलम से

केन्द्र की राजभाषा पत्रिका 'करभ' के बारहवें अंक के प्रकाशन पर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। मरुप्रदेश की भौगोलिक परिस्थितियों से तादात्म्य स्थापित करवाने में ऊँट एक मुख्य घटक के रूप में अपनी पहचान रखता है तथा आज भी यह प्राणी अपनी निर्बाध गति से मरुप्रदेश में रेत के टीलों पर उसी गति से दौड़ रहा है। खेती–बाड़ी, परिवहन, पर्यटन, विविध कुटीर उद्योग आदि में ऊँट की उपयोगिता एवं अपार संभावनाएँ ऊँट पालन व्यवसाय को जीवंत बनाए रखने में आज भी कारगर हैं। परंतु मशीनीकरण के इस युग में ऊँटों के विशाल कुनबे एवं उपयोगिताएं दोनों प्रभावित हुई हैं। ऐसे में उष्ट्र प्रजाति के पुनर्विकास व संरक्षण हेतु राजस्थान सरकार द्वारा ऊँट को 'राजकीय पशु' का दर्जा देने का निर्णय समयोचित एवं सुदृढ़ दूरदर्शिता का परिचायक है। अब ऊँट पालक एवं किसान भाइयों को भी बहु विकल्पी विचारधारा को अपनाते हुए इसके विकास में महत्ती भूमिका निभानी होगी। पारम्परिक ज्ञान के साथ वैज्ञानिक–तकनीकी ज्ञान एवं उपलब्धियों, सामयिक आवश्यकताओं को समझते हुए व्यवसाय में व्यावहारिक एवं नूतन बदलाव लाएं तो ऊँट एवं ऊँट पालकों का कल और अधिक सुनहरा बन सकेगा।

केन्द्र ऊँटों पर वैज्ञानिक अनुसंधान कार्यों के साथ–साथ ऊँट पालकों एवं आमजन से जुड़ाव संबंधी कार्यक्रमों को भी प्राथमिकता देता है ताकि इस व्यवसाय को पुनः सशक्त स्वरूप प्रदान में सहायता मिल सके। इस हेतु यह केन्द्र अपने विविध कार्यकलापों यथा –उष्ट्र मेलों, किसान गोष्ठियों, उष्ट्र दुग्ध प्रतियोगिताओं, उष्ट्र स्वास्थ्य शिविरों, एम्बुलैटरी क्लिनिक सुविधा, स्टॉल व प्रदर्शनी, निःशुल्क प्रजनन सुविधा आदि के माध्यम से नियमित रूप से क्रियाशील रहता है। केन्द्र अपनी गतिविधियों को भी प्रचारित–प्रसारित करने हेतु पुरजोर कोशिश करता है, जिसके अन्तर्गत राजभाषा में विविध विषय वर्गीय वैज्ञानिक साहित्य लेखन, परस्पर वार्ताओं, विभिन्न संचार साधनों को अपना माध्यम बनाता है। इनके पीछे केन्द्र का मूल प्रयोजन जरूरतमंद ऊँट पालकों, किसानों के साथ–साथ आमजन को अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों के माध्यम से लाभान्वित करवाना है।

पत्रिका के इस अंक प्रकाशन पर केन्द्र के सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी अधिकारियों एवं कर्मचारियों एवं अन्य लेखक गणों को हार्दिक बधाई देता हूँ जिनके सहयोग से करभ रूपी राजभाषा साहित्य, जन कल्याणार्थ निरंतर प्रवाहित हैं।

(नितीन वसन्तराव पाटिल)

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र
NRCC

डॉ. फतेह चन्द टुटेजा
प्रभारी राजभाषा

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्)
पोस्ट बैग–07, जोड़बीड़, बीकानेर–334 001 (राज.), भारत
दूरभाष : 0151–2230183, 2230858, 2230070
फैक्स : 0091–151–2231213
ई–मेल : nrccamel@nic.in
वेबसाइट : www.nrccamel.res.in

प्राक्कथन

भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम होती है और सरल व सुग्राही तथा सभी भाषाओं को साथ लेकर चलने वाली आत्मसात् की विशेषताओं से लबरेज भाषा स्वतः ही समृद्ध हो जाती है। उर्दू, फारसी, अरबी, अंग्रेजी आदि तमाम भाषाओं के अनगिनत शब्द जन मानस की भाषा 'हिन्दी' में इस प्रकार प्रयुक्त किए जाते हैं कि एक आम आदमी के लिए इनमें अन्तर करना बहुत मुश्किल है। देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली यह भाषा सूचना एवं प्रौद्योगिकी के इस आधुनिक युग में भी अपना सुदृढ़ स्थान बनाए हुए है।

कहते भी हैं कि जन मानस को जो भा जाए, उसकी आवश्यकता सदैव बनी रहेगी। इस दृष्टि से हिन्दी का भविष्य भी सुनहरा व उज्ज्वल कहा जा सकता है। देश का एक आला अफसर भी सरलता से हिन्दी बोलता–समझता है तो प्रदेश का मेहनतकश किसान भी इसे सहजता से स्वीकारता है। कार्यप्रणाली में विविधता के बावजूद भाषायी दृष्टि से समानता परिलक्षित होना इस भाषा की सबसे बड़ी ताकत कही जा सकती है। एक वैज्ञानिक अनुसंधान केन्द्र होने के नाते भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, ऊँट पालक की योजक कड़ी है जो अंततः जन कल्याण की द्योतक बनती है। केन्द्र राजभाषा नीति कार्यान्वयन के साथ इसके प्रचार–प्रसार को प्राथमिकता देता है और उष्ट्र से सम्बन्धित वैज्ञानिक शोध एवं उपयोगी जानकारी को लघु पुस्तिकाओं, प्रसार पत्रकों आदि के माध्यम से ऊँट पालकों तक पहुंचाता है।

राजभाषा पत्रिका 'करभ' केन्द्र का एक महत्वपूर्ण प्रकाशन है जो निरंतर अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रहा है। इस अंक में वैज्ञानिक, तकनीकी, साहित्यिक आदि विविध विषय वर्गीय आलेखों को शामिल कर इसे रोचक व उपयोगी बनाने का प्रयास किया गया है। आशा है पाठकों को यह रूचिकर लगेंगी और हमें उनके सुझाव भी मिलेंगे।

फतेह

(फतेह चन्द टुटेजा)

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र
NRCC

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र : उष्ट्र दूध को खाद्य पदार्थ में शामिल करने हेतु अभियान

एन.वी. पाटिल, निदेशक एवं राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

अपनी विलक्षण शारीरिक संरचना के आधार पर ऊँट, प्रदेश की भौगोलिक विषमताओं का वरण करने में सर्वाधिक उपयुक्त पशु सिद्ध हुआ है। इसीलिए साहित्य, कला और संस्कृति में भी इसकी गहरी पैठ है। हमारे देश में मुख्यतः बीकानेरी, जैसलमेरी, मारवाड़ी, कच्छी और मेवाड़ी नस्ल के ऊँट पाये जाते है जो कि मुख्य रूप से बोझा ढोने, खेती के काम जैसे– हल चलाने, पानी निकालने, बुवाई करने, सवारी इत्यादि के पारम्परिक कार्यों में उपयोग किए जाते हैं। वहीं यदि ऊँटनी के दूध के महत्व पर चर्चा की जाए तो यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि इसका दूध थार रेगिस्तान का एक ऐसा प्राकृतिक खाद्य है जिसके सेवन से मनुष्य विभिन्न प्रकार के जीवाणु व विषाणु जनित रोगों से बचाव व उपचार करते हुए शारीरिक क्रियाओं के संतुलन से एक स्वस्थ जीवन यापन कर सकता है।

ऊँटनी के गुणकारी दूध का प्राचीन व पारपंरिक उपयोग

प्राचीन काल से ऊँटनी के दूध का औषधि के रूप में उपयोग होता रहा है जैसे कि जहाँगीर बादशाह ने बीमार होने पर ऊँटनी के दूध का सेवन कर स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया था। उष्ट्र दूध भारत के राजस्थान, गुजरात व हरियाणा प्रान्त के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत समय से उपयोग में लाया जा रहा हैं। ग्रामीण क्षेत्र के लोग उष्ट्र दूध से निर्मित चाय, खीर, घेवर के अलावा इसे कच्चा या उबालकर प्रयोग में लाते है। ऊँट शुष्क बरानी क्षेत्रों का एक बहुद्देशीय पशु है जिसका कि उपयोग न केवल पारंपरिक कार्यों अपितु दूध की दृष्टि से भी प्रबल संभावनाएँ हैं। उष्ट्र दुग्ध में रक्षात्मक प्रोटीन जैसे–इम्योनोग्लोबिन, लेक्टोफिरिन, लेक्टापरआक्सीडेज व लाइसोजाइम की अधिकता इसे अन्य पशुओं के दूध से विलक्षणता प्रदान करती हैं तथा इन्हीं गुण–धर्मों के रहते शरीर को जीवाणु व विषाणु के संक्रमण होने पर ये आवश्यक सुरक्षा प्रदान करते हैं। ऊँटनी का दुग्धकाल 13–16 महीने का और औसत दूध उत्पादन 3 से 6 क्रिगा प्रतिदिन प्रति ऊँटनी होता है।

ऊँटनी को एक दूधारू पशु के रूप में स्थापित करना

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र ने ऊँटनी को एक दूधारू पशु के रूप में स्थापित करने की विचारधारा को अपनाते हुए पहल की। कैमल मिल्क कॉफी की स्वीकार्यता का आकलन व इसके उत्साही परिणाम के आधार पर वर्ष 2006 से राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में पर्यटकों हेतु सर्वप्रथम कैमल मिल्क कॉफी की सुविधा प्रारम्भ की गई तो इसी वर्ष में कैमल मिल्क पार्लर की स्थापना के रूप में इसे आधार मिला। ऊँटनी के दूध को विपणन आधार पर प्रोत्साहित करने के प्रयोजन से केन्द्र द्वारा इसके दूध व विकसित दुग्ध उत्पादों के उपयोग व संरक्षण हेतु इसके भण्डारण की आवश्यकता को समझा गया तथा इस मिल्क पार्लर पर ऊँटनी का दूध, लस्सी, सुगन्धित दूध, कुल्फी की बिक्री पैकेजिंग थैलियों के रूप में प्रारम्भ की गई। ऊँटनी के

दूध को प्रोत्साहित किए जाने की मुहिम वर्ष 2008 में और अधिक बलवती हुई तथा केन्द्र देश की पहली उष्ट्र–दुग्धशाला की स्थापना करने में समक्ष हो सका। एक महत्वपूर्ण व सकारात्मक पहल रूपी इस अनूठी 'कैमल डेयरी' ने मानों ऊँटनी के दूध की लोकप्रियता को चार–चाँद लगा दिए तथा आमजन में यह डेयरी कौतूहल का विषय बन गई। यह डेयरी उष्ट्र दूध को स्वच्छता व उचित प्रणाली की कसौटी पर रखते हुए प्रतिदिन केन्द्र के मिल्क पार्लर को दूध की आपूर्ति करता है जिससे केन्द्र द्वारा विकसित विभिन्न दुग्ध उत्पाद यथा–सुगन्धित दूध, कुल्फी, चाय, कॉफी, लस्सी आदि तैयार कर बिक्री की जाती है।

ऊँटनी के दूध लोकप्रियता हेतु मौलिक व व्यावहारिक प्रयास

केन्द्र ऊँटनी के दूध के महत्व व उपयोगिता को प्रचारित व प्रसारित करने हेतु मौलिक व व्यावहारिक प्रयास करने हेतु सतत प्रयत्नशील है। यह केन्द्र प्रदेश आदि में लगने वाले विभिन्न पशु मेलों, उत्सव आदि में अपने द्वारा विकसित उष्ट्र दुग्ध उत्पादों के प्रति जागरूकता व लोकप्रियता बढ़ाने हेतु इसकी बिक्री भी करता है। केन्द्र की मंशा आमजन में ऊँटनी के दूध के प्रति फैली निराधार भ्रान्तियों व मान्यताओं को सिरे से खारिज करना भी है। केन्द्र ने गाँव–गाँव, ढाणी–ढाणी इस मुहिम को आगे बढ़ाया है। इसके लिए केन्द्र ऊँटनी दूहने की प्रतियोगिताओं का आयोजन करता है तथा जीतने वाले प्रतियोगियों को पुरस्कृत भी करता है। ये प्रतियोगिताएं उचित वातावरण का निर्माण करने में सहायक सिद्ध हो रही है वहीं केन्द्र के विकसित स्वादिष्ट उष्ट्र दुग्ध उत्पादों के रसास्वादन हेतु आमजन भी लालायित है।

ऊँटनी के दूध को खाद्य पदार्थ में शामिल करने हेतु मंथन

केन्द्र के इन्हीं प्रयासों की कड़ी में दिनांक 3–5 जनवरी, 2014 तक सार्थक गतिविधियाँ संचालित की गई जिसमें सर्वप्रथम दिनांक 03 जनवरी 2014 को एक दिवसीय गहन विचार–गोष्ठी (ब्रेन स्टोर्मिंग मीट) का आयोजन किया गया। ऊँटनी के दूध का गाय, भैंस, भेड़, बकरी के दूध की तुलना में कार्यात्मक महत्व (फंक्शनल वैल्यु ऑफ कैमल मिल्क एज कम्पेरड टू डिफरेन्ट स्पिसिज्–काऊ, बुफेलो, गोट एण्ड सीप) विषयक इस गोष्ठी में एनआरसीसी के साथ विभिन्न संस्थानों यथा–एनडीआरआई, सीआईआरजी, सीएसडब्ल्युआरआई एवं एनआरसीई के अलावा स्थानीय शासी निकाय उरमूल भी इस महत्वपूर्ण अवसर के साक्षी बने। वास्तव में ऊँटनी के दूध की औषधीय उपयोगिता को देखते हुए इसके उत्पादों का मूल्य संवर्धन व विपणन पर जोर दिया जाना चाहिए क्योंकि गाय, भैंस आदि दूधारू पशुओं के अलावा अन्य दुधारू पशुओं जैसे ऊँट, भेड़, बकरी, दूध के दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण स्रोत हैं परंतु इस ओर पर्याप्त चेतना का अभाव आज भी स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। खासकर ऊँटनी के दूध की मानवीय रोगों हेतु औषधीय उपयोगिता तथा बेहतर उत्पादन क्षमता का भरपूर दोहन किया जाना चाहिए।

उष्ट्र दूध की मुख्य विशेषता यह है कि यह दूध अन्य दुधारू पशुओं के दूध की तुलना में किसी भी प्रकार की एलर्जी नहीं करता है तथा पाचन शक्ति के लिए बेहतर है। अतः ऊँटनी के दूध के प्रति जागरूकता बढ़ाने व इसके औषधीय गुणों को मानव समाज की रोजमर्रा जीवन से जोड़ने के लिए गोष्ठी में अन्य महत्वपूर्ण संस्थानों

(एनडीआरआई, करनाल, एम्स, नई दिल्ली, बार्क, मुम्बई आदि) के समन्वय की भी महत्ती आवश्यकता समझी गई। ऊँटनी के दूध को अनुमोदित एकल खाद्य पदार्थों के रूप में सूचीबद्ध कर गुणवत्ता के आधार पर मूल्य निर्धारित करने की दिशा में प्रतिष्ठित सरकारी एजेंसियों से सम्पर्क साधा जाना चाहिए।

अभियान अन्तर्गत फील्ड स्तर पर दूध की महत्ता उजागर की कवायद

अभियान कार्यक्रम के तहत धोलिया (जिला–जैसलमेर) मैं ऊँट पालकों के साथ एक गहन चर्चा रखी गई। धोलिया गाँव तथा समीपस्थ उष्ट्र बाहुल्य क्षेत्रों के लगभग 115 ऊँट पालकों ने केन्द्र द्वारा आयोजित इस महत्वपूर्ण गोष्ठी में ऊँटनी के दूध की उत्पादन क्षमता का फील्ड स्तर पर स्थिति का मूल्यांकन किया गया तथा ऊँट पालकों को प्रेरित व प्रोत्साहित करने के प्रयोजनार्थ ऊँटनी दूहने की प्रतियोगिता का आयोजन रखा गया। प्रतियोगिता स्थल पर मानों इस प्रतियोगिता में प्रथम आने की होड़–सी मच गई तथा उष्ट्र पालक अपने अनुभूत व अभ्यस्त तौर पर अपनी–अपनी ऊँटनियों को दूहने लगे। इसमें प्रथम तीन स्थान पर रहे ऊँट पालकों को पुरस्कृत किया गया तथा अन्य प्रतियोगियों के उत्साहवर्धन हेतु पांच पारितोषिक ईनाम भी बांटे गए। केन्द्र द्वारा आयोजित इस प्रतियोगिता की सफलता, ऊँट पालकों में ऊँटनी के दूध के प्रति रूझान व जिज्ञासा प्रकट करने वाली गतिविधि के रूप में आंकी जा सकती है। किसान गोष्ठी, ऊँटनी दूहने की प्रतियोगिताएं आदि रचनात्मक एवं वैचारिक सामजस्य के मंच है जहां ऊँट को पारम्परिक उपयोगों से ऊपर उठाते हुए इसे एक दुधारू पशु के रूप में स्थापित करने का वातावरण सृजित होता है।

केन्द्र द्वारा ऊँटनी के दूध को राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य पदार्थ के रूप में मान्यता दिलाने की मुहिम तेज कर दी गई है जिससे ऊँटनी का दूध एक व्यापार की वस्तु बन सकता है। इससे न केवल ऊँट पालकों की आजीविका में सुधार होगा अपितु इस व्यवसाय से जुड़े संपूर्ण पशु पालकों के समुदाय के सामाजिक–आर्थिक जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हो सकेगा। बशर्ते इसे गहनता से लेते हुए इस पर कार्य प्रारम्भ किया जाए। ऊँट पालकों को प्रेरित किया कि वे स्थानीय स्तर पर दूध के उत्पादों का केन्द्र द्वारा विकसित विधि से उष्ट्र दुग्ध उत्पादों का निर्माण शुरू करें तथा यदि इसमें कहीं भी कोई प्रशिक्षण व समस्या आती है तो राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र निःशुल्क प्रशिक्षण व मार्गदर्शन के लिए सदैव तत्पर रहेगा। ऊँटनी का भविष्य, ऊँट के साथ इसलिए भी जोड़े जाने पर जोर दिया जा रहा है क्योंकि यद्यपि भारत दूध उत्पादन की दृष्टि से दूध उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान पर है परंतु अभी भी प्रति व्यक्ति दूध उपलब्धता कम है तथा ये आँकड़ा घरेलू आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता। अतः ऊँटनी का दूध पोषण की दृष्टि से उपयोग लेते हुए जिससे दूध में विद्यमान गुणधर्मों का उपयोग मानव स्वास्थ्य लाभ हेतु लिया जा सके।

ऊँटनी के दूध में विद्यमान गुणधर्मों को देखते हुए यह नितान्त आवश्यक है कि इसके दूध से गुणवत्तापूर्ण उत्पाद तैयार कर बाजार में बिक्री हेतु लाए जाए। ऊँटनी के दूध के भण्डारण एवं शीत गृहों की सुनियोजित एवं ढांचागत व्यवस्था की जानी होगी। इस कड़ी में ऊँटनी दूध की आपूर्ति, दूध के प्रसंस्करण एवं उत्पादों के निर्माण एवं इनकी बिक्री आदि के संबंध में ऊँट पालक एवं एजेंसियाँ पारस्परिक सामजस्य का बेहतर उदाहरण प्रस्तुत करें।

यद्यपि इसके लिए केन्द्र प्रयासरत हैं परंतु ऊँट पालकों एवं किसानों को भी वृहद स्तर पर आगे आना होगा तथा साथ ही इसके लिए प्रचार–प्रसार की भी महत्ती आवश्यकता है। इन गुणवत्तापूर्ण उत्पादों के माध्यम से उनकी आजीविका, कृषि आदि की दशा में सुधार निश्चित रूप से संभव है। क्योंकि नकली दूध एवं इनसे निर्मित उत्पादों के बढ़ते प्रकरण ऊँटनी के दूध हेतु उपयुक्त मार्ग प्रशस्त करता है। इस संबंध में अमूल का उदाहरण एक सार्थक प्रयास को चरितार्थ करता है जहां गुजरात क्षेत्र में दूध के सग्रहण हेतु बेहतर व कारगर तरीके किसानों के समन्वित व संगठित प्रयासों ने इसे फलीभूत कर दिखाया। केन्द्र अपने स्तर पर इन उष्ट्र दुग्ध उत्पादों के निर्माण संबंधी निःशुल्क प्रशिक्षण मुहैया करवाता है जिसके पीछे मूल प्रयोजन इस प्रजाति से जुड़े लोगों को अधिकाधिक लाभ पहुँचाना है।

निष्कर्षतः ऊँटनी की दूध उत्पादन क्षमता, दुग्धकाल व गुण धर्मों के आधार पर तथा आधुनिक युग में इस प्रजाति के संरक्षण व समाज में इसके उपयोग के नये आयाम स्थापित करने की दिशा में ऊँटनी का दूध आज समाज में स्वास्थ्य की दृष्टि से विभिन्न वर्ग विशेष के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। ऊँटनी के दूध के उत्पादन की क्षमता शुष्कीय क्षेत्रों के अन्य दूधारू पशुओं की तुलना में कम लागत युक्त है। क्योंकि यह शुष्कीय वातावरण में भलीभांति अंगीकरण होने के कारण इसकी शरीर कार्यिकी अन्य पशुओं की तुलना में बिना किसी दबाव के सुचारू रूप से कार्य करती रहती है। जिससे इसके दुग्धकाल या दुग्ध उत्पादन की प्रक्रिया पर अकाल व अच्छे किस्म के चारे की अनुपलब्धता होने पर भी महत्वपूर्ण असर नहीं पड़ता है। भारत में ऊँटनी के दूध व दुग्ध पदार्थो के उपयोग को बढ़ाने के लिए इसके पोषण मान व औषधिय गुणों का गाय, भैंस के दूध की तुलना में उपयोगिता को सिद्व कर तथा भविष्य में उष्ट्र दूध की उपलब्धता को समाज में सुनिश्चित करने के लिए ऊँट पालकों को डेरी व्यवसाय के प्रति अग्रसर करना होगा।

राष्ट्रीय पशुधन नीति : एक विश्लेषण

शरत् चन्द्र मेहता, प्रधान वैज्ञानिक, श्याम सिंह दहिया, वैज्ञानिक, अशोक कुमार नागपाल एवं सज्जन सिंह, प्रधान वैज्ञानिक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राष्ट्रीय पशुधन नीति देश के एवं पशुपालकों के हितों की रक्षा करने के लिये बनाई जाती हैं। जहाँ इसके माध्यम से यह सुनिश्चित किया जाता है कि पशु पालन से जुड़े हुए हर क्षेत्र पर उचित ध्यान दिया जाए वहीं पशुपालकों को उचित मार्गदर्शन भी प्राप्त हों। यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि कैसे पशुपालन से देश की विकास दर को और बढ़ाया जा सकता है। वर्तमान में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान 13.7 प्रतिशत है। उसमें से लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा पशुधन उत्पादन से होता हैं। सार रूप में देश की पशुधन नीति इस प्रकार बनाई जाती है कि इससे पशुधन उत्पादन एवं उत्पादकता में सतत् वृद्धि हो लेकिन पर्यावरण, जैव–विविधता, जैव–सुरक्षा एवं किसानों की आजीविका पर उसका कोई विपरित प्रभाव न हो। इसके लिये निम्नलिखित उद्धेश्यों से पशुधन नीति बनाई जाती है:–

- वर्तमान में कम लागत एवं उत्पादन का जो तरीका चल रहा है उसको मदद देते हुए उसकी उत्पादकता को बढ़ाना, गरीब किसानों की आय बढ़ाना तथा समाजिक व आर्थिक उत्थान करना।
- पशुपालन के क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास को गति देना ताकि पशुपालन से अधिक लाभ प्राप्त हो।
- उत्पादन, संग्रहण एवं प्रसंस्करण के लिये आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर संस्थाएं बनाना ताकि उन्नत तकनीक का प्रयोग कर अधिक लाभ कमा सकें।
- वैज्ञानिकों द्वारा बनाई गई नई तकनिकों को किसानों तक पहुँचाना ताकि उनके उपयोग से पशुधन एवं कुक्कुट से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके।
- देश की जैव–विविधता का संरक्षण किया जा सके एवं अच्छी देशी नस्लों का विकास किया जा सके।
- पशुओं को पर्याप्त मात्रा में खान–पान मिल सके ताकि उनकी उत्पादकता में वृद्धि हो।
- पशुओं के स्वास्थ्य की संपूर्ण रक्षा हो, बीमारियों की रोकथाम, नियन्त्रण एवं समूल नष्ट करने के लिये उचित प्रयास हो ताकि पशुओं की मृत्यु दर नियन्त्रण में रहे एवं उत्पादकता बनी रहे।
- पशुधन उत्पादन, संग्रहण एवं प्रसंस्करण हेतु तथा पशुचिकित्सा उपलब्ध कराने हेतु सहकारी समितियों एवं स्वयं सहायता समूहों को बढ़ावा देना।
- उच्च गुणवत्ता के पशुधन उत्पाद बनाना ताकि वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खरे उतरें।
- दूध, ऊन, अण्ड़ा, मांस आदि के प्रसंस्करण को बढ़ावा देना।
- पशुधन उत्पादन के क्षेत्र में कार्य कर रही संस्थाओं को बढ़ावा देना, क्षमता में विस्तार करवाना एवं आ रही दिक्कतों को दूर करना आदि।

- पशुपालन के क्षेत्र में और अधिक निवेश हो उसके लिये उचित वातावरण बनाना एवं आवश्यक सहायता देना।
- पशुपालकों की सहकारी समितियां, स्वयं सहायता समूह बनाया, विभिन्न नस्लों के संक्षरण हेतु संगठन बनाना, इनके माध्यम से उचित तकनिकी वित्तिय एवं अन्य मदद पहुँचाना।

उपरोक्त सभी उद्वेश्यों पर विस्तृत चर्चा इस लेख में करना संभव नहीं है लेकिन इनमें से सबसे महत्वपूर्ण उद्धेश्य है, 'पशुओं की प्रजनन नीति' क्योंकि बाकी सभी बिन्दु इसके आगे बोने सिद्ध होते हैं। जैसे कितना भी खानपान अच्छा हो, कितनी भी पशुचिकित्सकीय सहायता तत्परता से उपलब्ध करवाई जाए एवं कितना भी अच्छा पशु आवास उपलब्ध करवाया जाए फिर भी एक देशी गाय जरसी गाय के बराबर दूध नहीं दे सकती। इसलिये मूल रूप से पशुपालक के पास जो पशु हो वह उच्च आनुवांशिक गुणवत्ता का हो, यह अति आवश्यक है। पशुओं की आनुवांशिक गुणवत्ता में सुधार के साथ–साथ देशवासियों को समुचित मात्रा में पशुधन उत्पाद मिलते रहें, यह भी सुनिश्चित किया जाता है। इस प्रकार पशु प्रजनन नीति माँग एवं परिस्थितियों को ध्यान में रख कर बनाने के साथ इसके दूरगामी प्रभावों एवं उद्धेश्यों को भी ध्यान में रख कर बनाई जाती है।

प्रजनन नीति का सबसे मुख्य अंग है उच्च गुणवत्ता के नर पशुओं का (कृत्रिम/प्राकृतिक) प्रजनन हेतु चयन करना। इसके लिये पशुओं की वंशावली देखना, भाई बहनों की उत्पादन एवं प्रजनन क्षमता का उपयोग करना, पशु स्वयं की उत्पादक एवं प्रजनन क्षमताओं का पता लगाना एवं उसके बच्चों के उत्पादन को देखना। कृत्रिम गर्भाधान में प्रयोग में आने वालो पशु के गुणसूत्रों की जाँच करना, प्रजनन संबन्धित एवं अन्य विशिष्ट बीमारियों की जाँच करना एवं वीर्य का मूल्यांकन कर प्रयोग में लेना आदि। उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ अन्तः प्रजनन नहीं बढ़े, उसका ध्यान रखना। पशु प्रजातियों के लिये राट्रीय पशुधन प्रजनन नीति वर्ष 2013 निम्नलिखित प्रकार से है :–

गाय – गायों को चयनित प्रजनन से अधिक दूध व भार वहन क्षमता के लिये उन्नत करना। देश की जानी मानी देशी नस्लों जैसे थारपारकर, गिर, साहीवाल, रेड–सिन्धी, राठी आदि को चयनित प्रजनन से उन्नत करना एवं उनकी प्रजनन क्षमता में वृद्धि करना। उच्च आनुवांशिक गुणों वाले बैलों का चयन कर कृत्रिम गर्भाधान एवं अन्य आधुनिक तकनिकों से उनका वृहद मात्रा में प्रयोग करना एवं अन्तः प्रजनन को रोकना। देश की अज्ञात कुल की अथवा अवार्णित कम दूध देने वाली गायों को उस क्षेत्र के अनुकूल विदेशी नस्ल की गायों से (संकर) प्रजनन करवाना एवं उनके खान–पान एवं रहन–सहन की व्यवस्था को सुनिश्चित करना। जहाँ खान–पान एवं रहन–सहन की उचित व्यवस्था न हो सके, वहाँ अज्ञात कुल की गायों का अच्छी देशी नस्ल की गायों से प्रजनन करवाना ताकि मृत्यु दर अधिक न हो एवं उत्पादन क्षमता में धीरे–धीरे वृद्धि हो सके।

भैंस – भैसों को दूध क्षमता में वृद्धि के साथ–साथ तीव्र शारीरिक वृद्धि, परिपक्वता एवं उच्च प्रजनन क्षमता के लिये चयनित प्रजनन के माध्यम से उन्नत करना। स्थापित नस्ल के पशुओं को उसी नस्ल के उच्च आनुवांशिकी गुणवत्ता वाले नर पशुओं से प्रजनन करवाना। कम उत्पादन करने वाले पशुओं को देश की सर्वश्रेष्ठ क्षमता वाली नस्ल के चयनित नर पशुओं से प्रजनन करवाना। कृत्रिम गर्भाधान एवं आधुनिक तकनीकों का उचित प्रयोग कर उत्पादकता को बढ़ाना।

भेड़ – भेड़ों को शारीरीक वृद्धि, प्रजनन क्षमता, मांस एवं ऊन की गुणवत्ता एवं मात्रा के लिये चयनित पद्धति से प्रजनन करवाना। साथ में मृत्यु दर को कम रखना। नस्ल विशेष एवं क्षेत्र विशेष की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए छोटे–छोटे स्तर पर नीति बनाना। उच्च गुणवत्ता वाले मेढ़े पर्याप्त मात्रा में किसानों को प्रजनन हेतु उपलब्ध कराना। कृत्रिम गर्भाधान को बढ़ावा देना।

बकरी – बकरी का शारीरिक वृद्धि, प्रजनन क्षमता, मांस की गुणवत्ता के लिये चयनित पद्धति से प्रजनन करवाना। साथ में दूध, मृत्यु दर एवं जुड़वा बच्चे होने की दर में बढ़ोतरी करने पर भी ध्यान देना। नस्ल विशेष एवं क्षेत्र विशेष की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए छोटे–छोटे स्तर पर नीति बनाना। उच्च गुणवत्ता वाले बकरे पर्याप्त मात्रा में किसानों को प्रजनन हेतु उपलब्ध कराना।

सुअर – सुअर को शारीरिक वृद्धि, प्रजनन क्षमता, मांस की गुणवत्ता एवं मात्रा, जीने की क्षमता एवं निम्न गुणवत्ता वाले खाद्य को उपयोग करने की क्षमता हेतु प्रजनन करना। उच्च गुणवत्ता वाली भारतीय नस्लों का संरक्षण करना एवं शेष का उच्च उत्पादन क्षमता वाली एवं बीमार न होने वाली विदेशी नस्लों से संकर प्रजनन करना लेकिन विदेशी गुणों को 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होने देना है।

याक व मिथुन – ऊँची पहाड़ियों पर पाये जाने वाले मौसम के अनुरूप इनका संरक्षण एवं विकास चयनित प्रजनन द्वारा किया जाए एवं जहाँ आवश्यक लगे विदेशी नस्लों से संकर प्रजनन किया जाए।

घोड़ा, गधा, खच्चर – घोड़े, गधों एवं खच्चरों को चयनित प्रजनन से कार्य क्षमता एवं खेल के लिये विकसित किया जाए एवं जहाँ आवश्यक लगे विदेशी नस्लों से संकर प्रजनन किया जाए।

ऊँट – ऊँट को रेगिस्तान में कार्य क्षमता बढ़ाने के लिये दूध उत्पादन के लिये, रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिये एवं खेल के लिये विकसित किया जाए। दो कूबड़ वाले ऊँटों में अन्तः प्रजनन को रोकने के लिये वीर्य को आयात कर प्रजनन करवाया जाए।

पशु संख्या एवं पशुधन नीति

वर्ष 2012 की 19 वीं पशुधन गणना के आँकड़े अभी हाल में उपलब्ध कराये गए। उन्नीसवीं पशुधन गणना वर्ष 2012 के अनुसार देश में कुल 51 करोड़ 20 लाख 57 हजार पशु हैं, इनमें 19 करोड़ 9 लाख 4 हजार गायें, 10 करोड़ 87 लाख 2 हजार भैंसें, 77 हजार याक, 2 लाख 98 हजार मिथुन, 6 करोड़ 12 लाख 88 हजार भेड़े , 13 करोड़ 51 लाख 73 हजार बकरियां, 6 लाख 25 हजार घोड़े, 1 लाख 96 हजार खच्चर, 3 लाख 19 हजार गधे, 4 लाख ऊँट एवं 1 करोड़ 2 लाख 94 हजार सुअर हैं।

मुख्य रूप से यह देखने में आया कि देश की पशुधन संख्या में 3.33 प्रतिशत की गिरावट आई है लेकिन कुछ राज्यों जैसे गुजरात (15.36 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश (14.01 प्रतिशत), असम (10.77 प्रतिशत), पंजाब (9.57 प्रतिशत), बिहार (8.56 प्रतिशत), सिक्किम (7.96 प्रतिशत), मेघालय (7.41 प्रतिशत), छतीसगढ़ (4.34 प्रतिशत) तथा राजस्थान (1.89 प्रतिशत) में बढ़ोतरी हुई है। मादा गौवंशीय पशुओं की संख्या में पिछली पशुधन गणना (2007) से 6.52 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। विदेशी/संकर दुधारू गौवंशीय पशुओं की संख्या में 34.78 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं जबकि स्वदेशी दुधारू गौवंशीय पशुओं की संख्या में 0.17 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं। मादा भैंसों की संख्या में पिछली पशुधन गणना से 7.99 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं तथा दुधारू भैंसों की संख्या में 4.95 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं। विदेशी/संकर गायों एवं

भैंसों में वृद्धि से स्पष्ट होता है कि पशुपालक गाय एवं भैंस का पालन मुख्य रूप से दूध के लिये ही कर रहा है जबकि प्रजनन नीति उच्च भार वहन क्षमता के लिये भी प्रेरित करती है जो कि देशी नस्ल के नर पशुओं में अधिक होती है लेकिन उनकी संख्या में 19.32 प्रतिशत की कमी आई हैं।

वर्तमान परिदृश्य में भेड़, ऊन के लिए कम व मांस के लिए ज्यादा पाली जा रही हैं फिर भी ऊन की माँग अपनी जगह बनी हुई एवं मांस की मांग में कोई कमी नहीं है। बावजूद इसके पिछली पशुगणना की तुलना में भेड़ों की संख्या में 9.07 प्रतिशत कमी आई है इसके मुख्य कारण जीवन शैली में बदलाव आना एवं चरागाह की कमी होना हो सकते हैं क्योकि भेड़ों के रेवड़ को एक स्थान पर रखकर चराना संभव नहीं हैं एवं लगातार भेड़ों के साथ–साथ चराने के लिये घूमने से बच्चों की पढ़ाई एवं अन्य कार्य बाधित होते हैं, इसलिए युवा पीढ़ी धीरे–धीरे इससे दूर होती जा रही है। बकरियाँ मुख्य रूप से मांस के लिये पाली जाती रही है एवं यह दो, तीन एवं कभी–कभी चार बच्चे भी एक साथ दे देती है फिर भी इसकी संख्या में 3.82 प्रतिशत की कमी आना यह बताता है कि जीवन शैली में बदलाव आना एवं चरागाह की कमी इसको भी प्रभावित कर रही है। सुअरों की कुल संख्या में 7.54 प्रतिशत की कमी आई है लेकिन आँकड़ों से पता चलता है कि जहाँ देशी सुअरों की संख्या में 10.37 प्रतिशत की कमी आई है वही विदेशी सुअरों की संख्या में 2.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इससे स्पष्ट होता है कि विदेशी सुअरों का पालन मांस के लिये बहुतायत में होने लगा है।

ऊँटों की संख्या में 22.28 प्रतिशत कमी इसके उपयोग में बदलाव, जीवन शैली में बदलाव एवं घटते हुए चरागाहों की तरफ इशारा करती है। पशुओं के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर वर्ष–भर घुमते रहना लगभग असंभव होता जा रहा है एवं इसके दूध का अधिक प्रचलन में न आना एवं मांस के लिय भी ऊँटों को बेचा जाना इनकी संख्या में कमी आने के कारण हैं। घोड़े और टट्टू की संख्या में पिछली पशुधन गणना की तुलना में 2.08 प्रतिशत की वृद्धि हुई हैं जो कि इनकी तरफ बढ़ते हुऐ रूझान को दर्शाता है। देश में खच्चरों की संख्या में 43.07 प्रतिशत की वृद्धि होना, इनकी पहाड़ी क्षेत्रों में बढ़ती हुई उपयोगिता को दर्शाता है। गधों की संख्या में भी 27.22 प्रतिशत की कमी आई है उसका मुख्य कारण उसके उपयोग में परिवर्तन होना है। देश में कुक्कुटों की कुल संख्या में 12.39 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो कि इनके उत्पाद जैसे अण्ड़ा एवं मांस की माँग बढ़ने की तरफ इशारा करती है।

राजस्थान के परिदृश्य को देखते हैं तो वर्ष 2012 की पशुगणना के अनुसार राज्य में कुल 5 करोड़ 77 लाख 32 हजार 204 पशु हैं एवं 80 लाख 24 हजार 424 कुक्कुट हैं। विभिन्न पशुधन प्रजातियों की संख्या एवं उसकी वर्ष 2007 की गणना से तुलना नीचे सारणी में दी गई है –

आँकड़ों से स्पष्ट होता है राज्य स्तर पर पशु संख्या में बदलाव का तरीका लगभग वैसा ही है जैसा कि राष्ट्रीय स्तर पर है, जैसे विदेशी/संकर गायों एवं भैंसों का बढ़ना एवं कार्य क्षमता के लिये पाले जाने वाले प्राणियों जैसे गधा, ऊँट आदि की संख्या में कमी आना। फिर भी चूँकि ऊँट राजस्थान में मुख्य रूप से (81.25 प्रतिशत) पाला जा जाता है एवं यह यहाँ के सामाजिक जीवन में रचा बसा है इसलिये राजस्थान सरकार ने इसको राज्य पशु धोषित किया है एवं इसके विकास एवं संवर्धन के लिए कुछ कदम उठाये हैं, इनमें प्रमुख है :–

राजस्थान	2007	2012	परिवर्तन	परिवर्तन (%)
पशुधन	56663183	57732204	1069021	1.89
कुक्कुट	4993620	8024424	3030804	60.69
देशी गाय	11303837	11589390	285553	2.53
विदेशी/संकर गाय	815675	1735072	919397	112.72
कुल गाय	12119512	13324462	1204950	9.94
भैंस	11091974	12976095	1884121	16.99
भेड़	11189855	9079702	–2110153	–18.86
बकरी	21502996	21665939	162943	0.76
घोड़ा	25438	37776	12338	48.50
गधा–खच्चर	103016	81468	–21548	–20.92
ऊँट	421836	325713	–96123	–22.79

- ऊँटों के वध पर पूर्ण रोक लगाना।
- ऊँटों के राजस्थान से निष्क्रमण पर नियम बनाना।
- उष्ट्र दुग्ध के औषध उपयोग पर कार्य करना।
- अकाल के दौरान ऊँटों को चारा उपलब्ध कराना।
- उष्ट्र बीमा चालू करवाना।
- ऊँटों के चारागाह की व्यवस्था करना।
- अधिक संख्या में पशु पालक ऊँट पालन करें, इसके लिए बैंक से ऋण की व्यवस्था एवं अनुदान का प्रावधान किया जाना।
- अधिक से अधिक मादाएँ प्रजनन चक्र में आयें उसके लिए बच्चा होने पर पारितोषिक दिए जाना।
- ऊँट पालकों की सहकारी समितियां अथवा स्वयं सहायता समूह बनाना एवं ऊँट पालकों का पंजीकरण भी प्रारंभ किया जाना।
- उष्ट्र दुग्ध उत्पादन को बढ़ाने के लिये प्रजनन कार्यक्रम बनाना।
- इसके दूध को मानव के खाद्य पदार्थ के रूप में मान्यता दिलाना।
- इसके दूध को राज्य की सहकारी दुग्ध शालाओं के माध्यम से जन–जन तक पहुँचाना।

हालांकि राजस्थान सरकार ने ऊँटों को बचाने के लिये उचित कदम उठाते हुए इसके लिये नीति बनाई है लेकिन सभी प्रजातियों के, खास तौर पर देशी प्रजातियों के अच्छे पशु समाप्त न हो, उसके लिये पशुधन से सम्बन्धित समस्त संस्थानों एवं पशु पालाकों उचित प्रयास करने चाहिये।

इसलिए उपयोगी है ऊँटनी का दूध

राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक एवं राकेश कुमार पूनियाँ, तकनीकी सहायक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

आदिकाल से ही दूध को भोजन का एक प्रमुख अंग माना जाता रहा है क्योकि इसमें उपस्थित रासायनिक घटक न केवल सम्पूर्ण पोषण प्रदान करते है बल्कि शरीर को स्वस्थ रखने में भी मदद करते हैं, इसीलिए दूध को आदर्श भोजन के रूप में मान्यता प्राप्त है। हालाँकि सभी दुधारू पशु प्रजातियों का दूध पोषकता लिये हुए होता है परन्तु इसकी गुणवता पर पशु प्रजाति, उम्र, पोषण, स्वास्थ्य तथा दुग्धकाल इत्यादि का बहुत प्रभाव पड़ता है। ऊँटनी का दूध स्वाद एवं गुणवता की दृष्टि से इन सभी से अलग स्थान रखता है। हालाँकि कुछ समय पूर्व तक ऊँटनी के दूध को उष्ट्र पालकों एवं अन्य लोगों द्वारा या तो दूसरे पशुओं से दूध न उपलब्ध होने या अनायास ही काम में लिया जाता रहा है। परन्तु वैज्ञानिक शोधों से यह प्रमाणित हुआ है कि ऊँटनी में न केवल अच्छे दुधारू पशु होने के सभी गुण मौजूद है बल्कि उससे प्राप्त दूध में विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्यवर्धक कारक भी मौजूद होते हैं जो पोषण के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के रोगों के प्रति या तो रोग–प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करते हैं या उसके कुप्रभाव को काफी हद तक कम कर देते हैं। ऊँटनी के दूध में पाये जाने वाले ये कारक निम्नलिखित हैं –

प्रोटीन – ऊँटनी के दूध में प्रोटीन की मात्रा 2–4 प्रतिशत तक पाई जाती है। इस दूध में प्रमुख रूप से कैसीन प्रोटीन एवं अल्प मात्रा में बीटा–लैक्टएल्बुमिन तथा अल्फा लैक्टग्लोबुलिन प्रोटीन पाये जाते हैं। ऊँटनी के दूध में शरीर के लिये जरूरी सभी आवश्यक अमीनो अम्ल मौजूद होते हैं। बीटा–कैसीन की अधिक मात्रा तथा अल्फा–कैसीन की कम मात्रा होने के कारण ऊँटनी का दूध उन बच्चों के लिये भी उपयोगी साबित हुआ हैं जिन्हें गाय के दूध पीने से एलर्जी होती हैं। इसके दूध में मौजूद लाइसोजाइम, लैक्टोफेरीन तथा लैक्टोपरआक्सीडेज प्रोटीन दूध की गुणवता व इसके पोषक मान को काफी लम्बे समय तक बनाए रखते हैं। इसके दूध में एक विशिष्ट प्रोटीन जिसे इंसुलिन के सदृश्य माना गया है, मधुमेह के रोगियों के लिये बहुत लाभकारी होता है। इसके अलावा ऊँटनी के दूध में मौजूद मस्तु–प्रोटीन को भी कैंसर रोधी कारक के रूप में पहचान मिली है।

वसा – वसा दूध में मौजूद ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण ऊर्जा का स्रोत है। ऊँटनी के दूध में वसा की मात्रा 2–4 प्रतिशत तक पाई जाती है। इसके दूध में पाये जाने वाले ज्यादातर वसीय अम्ल छोटी कार्बन श्रंखला वाले एवं असंतृप्त होते हैं जो वृद्धि, पाचन एवं अवशोषण में सहायक होते हैं। असंतृप्त प्रकृति के होने के कारण ये वसीय अम्ल दिल की बीमारी से पीड़ित मरीजो के लिये लाभदायक होता है।

शर्करा – ऊँटनी के दूध में उपस्थित शर्करा भी शरीर को ऊर्जा प्रदान करती है। लेक्टोज इसके दूध में पाई जाने वाली मुख्य शर्करा है, जिसकी मात्रा 3.5 से 5 प्रतिशत पाई जाती है। लेक्टोज के विलयन के रूप में होने के कारण यह लेक्टोज इंटोलेरेंस से ग्रसित लोगो के लिये लाभदायक रहता है।

विटामिन्स – ये ऐसे कार्बनिक पदार्थ होते हैं जो सामान्यतः शरीर द्वारा नहीं बनाये जाते हैं। अतः इन्हे किसी खाद्य पदार्थ के माध्यम से ही ग्रहण किया जाता है। सामान्य तौर पर सभी दुधारू पशुओं के दूध में थोड़ी–बहुत मात्रा में विटामिन उपस्थित होते हैं परन्तु ऊँटनी के दूध में विटामिन

ए, बी, सी तथा ई की मात्रा अन्य पशुओं के दूध से अधिक पाई जाती है। विटामिन की दूध में मौजूदगी न केवल इसके पोषण मान को बढ़ाती है बल्कि यह शरीर में विभिन्न रासायनिक क्रियाओं को भी सुचारू बनाए रखने में मदद करती है। ये शरीर की सामान्य वृद्धि एवं जनन क्षमता को बनाये रखने में मददगार होते हैं।

खनिज पदार्थ– शरीर के विभिन्न जैव–रासायनिक क्रियाओं के लिए जरूरी बहुत से खनिज पदार्थ ऊँटनी के दूध में उपस्थित होते हैं। ऊँटनी के दूध में कैल्शियम, फॉस्फोरस, मैग्निसियम, लोहा, तांबा तथा जस्ता प्रमुख रूप से पाये जाते हैं। इनकी मात्रा अन्य पशुओं के दूध की बजाय अधिक होती है। ये खनिज पदार्थ विभिन्न दैहिक क्रियाओं जैसे अस्थि निर्माण, लाल रक्त कणिका के निर्माण इत्यादि के किये परम आवश्यक होते हैं।

ऊँटनी का दूध मधुमेह, एलर्जी, हृदय रोग, रक्तचाप नियन्त्रण तथा लेक्टोज इंटोलेरेंस जैसे रोगों में लाभदायक होने के साथ–साथ यह ऑटिज्म सदृश्य विकारों, क्षय रोग, अल्सर इत्यादि को ठीक करने में बहुत मददगार साबित हुआ है। हालाँकि ऊँटनी के दूध में इतनी सारी विशेषता होने के बावजूद भी इसका उपयोग कम ही हो रहा है। आधुनिक युग में इस प्रजाति की कार्यक्षमता का ग्रामीण क्षेत्रों में घटते उपयोग व कम होते चरागाह को देखते हुए इस प्रजाति का सरंक्षण व आधुनिक समाज में इसके उपयोग के नए आयाम स्थपित करने की दिशा में ऊँटनी का दूध एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

ग्लोबल वार्मिंग के संदर्भ में गर्मी तनाव का ऊँट और अन्य पशुओं के उत्पादन पर असर और सुधार हेतु वैज्ञानिक सुझाव

अशोक कुमार नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक, फतेह चंद टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, सज्जन सिंह, प्रधान वैज्ञानिक एवं जितेन्द्र कुमार, तकनीकी अधिकारी

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

विकास के हजारों वर्षों के बाद, ऊँट ही एक ऐसा पशु है जो रेगिस्तान की परिस्थितियों के लिए एक असाधारण रूप में रूपांतरित और विकसित हुआ है जो किसी भी अन्य जानवरों में नहीं हुआ है।

रेगिस्तान पारिस्थितिकी तंत्र के शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों की कठोर पारिस्थितिकी में, ऊँट एक रोग एवं अकाल प्रतिरोधी, विनम्र, आसानी से पालने वाला, सवारी और सामान ढोने वाला बहुउद्देश्यीय पशु है। शताब्दियों से ऊँट दूध, परिवहन, ईंधन, खाद और नवीकरणीय ऊर्जा प्रदान करने में अपनी असंख्य भूमिकाओं के साथ सामाजिक आर्थिक प्रणाली की जीवन रेखा रहा है। वर्तमान में ऊँट, अपने दूध में पोषक तत्वों और औषधीय गुणों के महत्व प्राप्त कर रहा है और वैज्ञानिक इनकी उत्पादकता में सुधार लाने के लिए प्रयासरत हैं। ऊँट रेगिस्तान के पर्याय के साथ, किसानों के लिए अकाल के खिलाफ बीमा की भूमिका भी अदा करता है। सदियों से ऊँट रेगिस्तानी संस्कृति और परंपरा का अभिन्न अंग रहा है। लेकिन तेजी से बदलते आधुनिक परिवेश में कृषि जुताई, खेती के तरीके और मोटर चालित परिवहन के कारण और अपनी संख्या में गिरावट के बावजूद इसने अभी भी अपना महत्व नहीं खोया है। सही मायनों में ऊँट रेगिस्तानी क्षेत्रों के लिए परमेश्वर का वरदान है क्योंकि रेगिस्तानी जीवन और जलवायु के लिए इससे उपयुक्त कोई दूसरा पशु नहीं है।

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सौर विकिरण और अधिक आर्द्रता से उत्पन्न उच्च तापमान परिवेश, पशुओं पर तनाव का प्रमुख पर्यावरण कारक हैं और पशु कल्याण की दृष्टि से पशुओं मे गर्मी तनाव की प्रतिक्रिया का अध्ययन महत्वपूर्ण है। शरीर के तापमान को समान बनाये रखने वाले तंत्र का अच्छी तरह से विकसित होने के बावजूद पशु गर्मी तनाव को नियंत्रित रखने के लिए पूरी तरह सक्षम नहीं है। इस बात के स्पष्ट सबूत हैं कि पशु की नस्ल और अनुकूलन के बावजूद अतिताप पशु उत्पादकता के किसी भी रूप के लिए हानिकारक है। पशु कल्याण के गहन और व्यापक प्रबंधन प्रणाली के तहत उष्णकटिबंधीय इलाकों और शुष्क क्षेत्रों में पशुधन उत्पादकता को बनाने और वृद्धि के प्रयास के संबंध में गर्मी तनाव एक बड़ी बाधा एवं नैतिक चिंता है।

इस बात के पुख्ता प्रमाण हैं कि गर्म वातावरण का तनाव पशुओं की उत्पादक और प्रजनन दक्षता को कम करते हैं और इसी तरह ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में पशुओं के प्रबंधन में सहायता करने के लिए अनुसंधान जानकारी भी उपलब्ध है। हालांकि उत्पादक और प्रजनन प्रदर्शन के वांछित स्तर को प्राप्त करने के लिए व्यावहारिक

तरीकों की अभी भी कमी हैं। उप उष्ण कटिबंध और उष्ण कटिबंध क्षेत्रों में उत्पादकता के एक उच्च स्तर के समर्थन हेतु गर्मियों में हरे चारे के साथ, अधिक गर्म वातावरण में पशुओं की सम्पूर्ण आहार की जानकारी महत्वपूर्ण और आवश्यक है।

गर्मी तनाव, पशुधन उत्पादन पर कई प्रकार से नकारात्मक प्रभाव डालता है और इसलिए गर्मी तनाव पशु पालकों पर एक महत्वपूर्ण वित्तीय बोझ समान है। हालांकि अनुसंधान और पोषण संबंधी रणनीति द्वारा गर्मी तनाव के कुछ नकारात्मक प्रभाव को समाप्त किया जा सकता है पर सही रूप में गर्मी तनाव ग्रस्त पशुओं की पहचान करने के लिए जैविक तंत्र (ओं) को समझना आवश्यक है जो थर्मल तनाव से दूध संश्लेषण और प्रजनन सूचकांकों को कम कर देते हैं और नए दृष्टिकोण (यानी आनुवंशिक, प्रबंधकीय और पोषण) खोजना आवश्यक हैं जो उत्पादन को बनाए रखने और उत्पादन बढाने में सहायक हों। आहार प्रबंधन सुधार में, चारे का सेवन बढ़ाने के लिए अथवा प्रोटीन, अमीनो एसिड या अन्य पोषक तत्वों के स्तर को उत्पादन के रूपांतरण करने के लिए किया जाना चाहिए।

दुधारु गायों में गर्मी तनाव के लक्षण एवं जांच

- सुस्ती एवं बेचैनी और कम शारीरिक गतिविधि
- छाया के नीचे या पानी के स्रोत के पास भीड़
- लार में वृद्धि
- हांफना (हक्का–बक्का वास) श्वसन दर में (हांफना) वृद्धि
- पेट गतिशीलता में कमी

पसीना : डेयरी गायों में पसीना दो प्रकार से देखा जा सकता है। पहले प्रकार का सापेक्ष आर्द्रता के कारण, हर समय पर शरीर से पसीना निकलता है। अन्य प्रकार का पसीना, अधिक तापमान के कारण।

गुदा तापमान का बदलाव

गुदा तापमान, गर्मी (थर्मल) संतुलन का एक संकेतक है और गर्म वातावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों का आकलन करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। गर्मी के गंभीर मामलों में 50 प्रतिशत से अधिक सापेक्ष आर्द्रता होने पर गुदा तापमान में वृद्धि पाई गयी है। एक डिग्री सेल्सियस या उससे कम की वृद्धि भी, पशुधन की सभी प्रजातियों में उत्पादकता को कम करने के लिए पर्याप्त है।

हृदय की धड़कन

वातावरण के तापमान बढ़ने से, गर्मी तनाव से पशुओं के दिल की धड़कन में वृद्धि होती है। कम दिल की धड़कन, उच्च पर्यावरण तापमान के लिए एक प्रतिक्रिया के रूप में शरीर में गर्मी उत्पादन की दर को कम करना है।

भूख कम लगना

अमेरिका की राष्ट्रीय अनुसंधान परिषद (1989) के अनुसार 25–26 डिग्री सेल्सियस के तापमान परिवेश पर स्तनपान कराने वाली गायों में खाने की मात्रा में गिरावट शुरू हो जाती है और 30 डिग्री सेल्सियस के ऊपर और अधिक तेजी से गिरावट तथा 40 डिग्री सेल्सियस पर आहार सेवन में 40 प्रतिशत की गिरावट हो सकती है। गर्मी तनाव के तहत भूख में कमी, उच्च शारीरिक तापमान का बढ़ने से रोकने हेतु परिणाम है और पेट भरने से संबंधित हो सकता है।

दैनिक दूध उत्पादन में गिरावट

गर्मी तनाव गैर दोस्ताना क्षेत्रों में डेयरी पशुओं में दूध उत्पादन में गिरावट का प्रमुख कारण स्वीकार कर लिया गया है। कुछ लेखकों ने उच्च पर्यावरण तापमान को एक सीधा नकारात्मक परिणाम के रूप में दूध और दूध वसा में गिरावट बताया है। अन्य शोध के अनुसार जब एक

स्तनपान कराने वाली होल्सटीन गाय को 18 डिग्री सेल्सियस हवा के तापमान से 30 डिग्री सेल्सियस हवा के तापमान में स्थानांतरित किया तो दूध उत्पादन उद्देश्यों के लिए ऊर्जा के उपयोग की दक्षता में 35 प्रतिशत कमी के साथ दूध उत्पादन में 15 प्रतिशत गिरावट हुई। दूध वसा, वसा रहित ठोस और दूध प्रोटीन प्रतिशत क्रमशः 39.7, 18.9 और 16.9 प्रतिशत की कमी हुई।

मेटाबोलिक प्रतिक्रियाएं

गर्मी तनाव, चयापचय वृद्धि में कमी आना, कम थायराइड हार्मोन स्राव और आंतों की कम गतिशीलता के साथ जुड़ा हुआ है। पशुओं में गर्मी तनाव से आम तौर पर पेट की पीएच भी कम हो जाती है। गर्मी तनाव के साथ जुड़े आहार इलेक्ट्रोलाइट संतुलन और एसिड/क्षार संतुलन में काफी परिवर्तन होते हैं। आहार इलेक्ट्रोलाइट संतुलन में शामिल प्रमुख इलेक्ट्रोलाइट्स सोडियम, पोटासियम, क्लोराईड और बाई–कार्बोनेट हैं। सोडियम, पोटासियम और क्लोराईड पसीने में शामिल मुख्य आयन हैं।

गर्मी तनाव कैसे उत्पादन और प्रजनन को प्रभावित करते हैं ? इसे आंशिक रूप से चारे के कम खाने से समझा जा सकता है परन्तु इसमें हार्मोन/एंडोक्राइन स्थिति, जुगाली और पोषक तत्व अवशोषण में कमी और रखरखाव आवश्यकताओं में वृद्धि भी शामिल हैं जिससे उत्पादन के लिए पोषक तत्व/ऊर्जा उपलब्धता में शुद्ध कमी हो जाती है और यही तनाव गर्मी के दौरान नकारात्मक ऊर्जा संतुलन, गायों के देहभार का महत्वपूर्ण कारण है।

संक्षेप रूप में गर्मी तनाव के प्रभाव निम्नलिखित हैं :

- दिन के समय में शारीरिक तापमान बढ़ना।
- भूख न लगना, आंत गतिशीलता धीमी होना।
- दुग्ध उत्पादन और दूध की गुणवत्ता में कमी – वसा और प्रोटीन सामग्री में गिरावट आना।
- शरीर भार में कमी।
- हाइपो केल्सिमिया अथवा दूध बुखार की घटना बढ़ जाना।
- गर्भाशय शोथ अधिक व्यापक होना।
- गर्भाशय भ्रंश ज्यादा आम होना।
- थनैला रोग में वृद्धि।
- गर्भाशय संक्रमण में वृद्धि।
- कीटोन की अम्लता एक आवर्ती समस्या है।
- प्रजनन क्षमता में कमी व कम गर्भाधान, भ्रूण मृत्यु दर बढ़ जाना।
- पशु गर्मी के संकेत नहीं दिखाता और गर्मी के लक्षण दिखने पर संभोग पश्चात गर्भ धारण नहीं करता।
- बछड़े अक्सर समय से पहले और कम देहभार वाले पैदा होते हैं।
- बढ़ते जानवरों में स्पष्ट रूप से देहभार वृद्धि घटना।
- बार – बार पानी पीना और कुल पानी के सेवन का बढ़ना।
- खुले मुंह के साथ तेजी से श्वास।

पानी चयापचय

एक अनुमान के अनुसार दुधारू गायों के शरीर में, पानी शरीर के वजन का 75–81 प्रतिशत हिस्सा होता है और पर्यावरण तापमान, डेयरी गायों में पानी की मात्रा को नियंत्रित करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारकों में से एक है। गर्मी तनाव, एक साथ ऊर्जा और पानी

चयापचय दोनों को प्रभावित करती है। थर्मल तनाव के दौरान, एक त्वरित पानी टर्नओवर (कुल मात्रा) परिणाम स्वरूप, गाय अपने रूमेण में पानी की मात्रा में वृद्धि करती हैं। पशुओं में पानी की कमी, एक सतत प्रक्रिया है जो हर जगह, हर समय होती है और गर्मी तनाव के दौरान अतिरिक्त वाष्पीकरण से बढ़ जाती है। गर्मी तनाव के कारण डेयरी गायों में पानी का उपयोग काफी अधिक बढ़ जाता है।

गर्मी तनाव की पहचान

डेयरी पशुओं के रखरखाव और दूध उत्पादन पर गर्मी का प्रभाव अच्छी तरह से जाना जाता है और इसके अलावा सापेक्ष आर्द्रता से भी बहुत प्रभावित होता है।

मैकडोवेल और उसके साथियों (1976) ने मनुष्यों पर गर्मी के बोझ का वर्णन करने के लिए तापमान नमी सूचकांक (थी) का सुझाव दिया जो तनावपूर्ण थर्मल जलवायु स्थितियो का व्यापक रूप से प्रयोग में लेने हेतु एक अच्छा पैरामीटर संकेत है।

यह संकेत एक विशेष दिन के लिए गीला और सूखी बल्ब हवा का तापमान का एक संयोजन से एक सूत्र में व्यक्त किया जाता है।

थी = 0.72 (ग + सू)+ 40.6

ग – गीला बल्ब तापमान और सू –सूखा बल्ब तापमान

70 या उससे कम का तापमान नमी सूचकांक मूल्य आरामदायक माना जाता है, 75 से 78 का तनावपूर्ण और 78 से अधिक चरम संकटकारी माना गया है। जब पशु अपने उष्णता नियामक तंत्र द्वारा सामान्य शरीर के तापमान को बनाए रखने में असमर्थ हैं। थी का प्रभाव पशुओं की जाति और उत्पादन पर भी निर्भर करता है। थी का प्रभाव गायों में ज्यादा और ऊँटों पर कम देखा गया है। राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर (2012–13) में हुए अनुसंधान में देखा गया कि नवम्बर से फरवरी माह ठंडे थे जब थी सूचांक सुबह 61.5 से 73.14 था और शाम को थी सूचांक 68.6 से 79.04 था। सबसे अधिक सूचांक गर्मी और नमी वाले जुलाई से अक्टूबर के महीने थे जब सुबह सूचांक 78.1 से 82.5 के बीच और शाम को 85.0 से 89.2 था। यह भी देखा गया कि जब ऊँट के बच्चों को ठंडे समय में चरने भेजा गया तो उन्होंने अधिक चारा खाया और पानी पिया, देहभार में अधिक वृद्धि हुई और गर्म समय में चराने पर उन्होंने कम चारे ग्रहण के साथ कम पानी भी पिया देहभार में कम वृद्धि हुई जो गर्मी तनाव के प्रभाव को दर्शाता है।

गर्मी तनाव को कम करने के लिए कदम

पशुओं में गर्मी तनाव को मुख्यता दो प्रबंधन व्यवहार से कम किया जा सकता है : शारीरिक सुरक्षा और पोषण आहार में सुधार

(क) शारीरिक सुरक्षा

- प्राकृतिक छाया

चारागाहों और जंगल में पशुओं हेतु पेड़ एक उत्कृष्ट प्राकृतिक छाया स्रोत हैं। पेड़ सौर विकिरण को रोकने के प्रभावी ब्लॉकर्स नहीं हैं, लेकिन पत्तियों की सतह से नमी के वाष्पीकरण से आसपास की हवा को ठंडा करने में बहुत सहायक हैं जिससे पशुओं को गर्मी तनाव से काफी राहत मिलती है। वास्तव में वृक्ष ही ग्लोबल वार्मिंग को रोकने का एकमात्र विकल्प है।

- कृत्रिम छाया

सौर विकिरण गर्मी तनाव का एक प्रमुख कारक है। ठीक से निर्माण की गयी कृत्रिम छाया संरचनाओं के

उपयोग के माध्यम से सौर विकिरण के प्रभाव को अकेले रोकने से उल्लेखनीय दूध उत्पादन बढ़ जाता है।

इसके भी दो विकल्प उपलब्ध हैं, स्थायी छाया संरचनाएं और पोर्टेबल छाया संरचनाएं–

स्थायी छाया संरचनाएं

स्थायी छाया संरचनाओं (ओरिएंटेशन, फर्श, स्थान, ऊँचाई, हवा का संचार, छत निर्माण, आहार और पानी की सुविधा, कचरा प्रबंधन प्रणाली) के लिए प्रमुख डिजाइन/पैरामीटर जलवायु परिस्थितियों पर निर्भर करते हैं। गर्म और उमस भरे मौसम में एक पूर्व पश्चिम दिशा में लंबी अक्ष के पंक्ति योजना से, बंधे जानवरों को अधिकतम छाया और पसंदीदा अभिविन्यास है। गर्म जलवायु में पशुओं की स्थान की आवश्यकता, अनिवार्य रूप से दोगुना हो जाती है। स्थायी छाया संरचना के तहत प्राकृतिक हवा का आवागमन, ऊँचाई और चौड़ाई, छत की ढलान से प्रभावित होता है। धातु छतों को सफेद पैंट और छत के नीचे सीधे इन्सुलेशन जोड़ने से सौर विकिरण और थर्मल विकिरण को कम किया जा सकता है।

पोर्टेबल या अस्थायी छाया

कपड़ा, दरी, तिरपाल, बोरी से निर्मित पोर्टेबल छाया, पशुओं को गर्मी तनाव से कुछ लाभ प्रदान करते हैं। यदि सम्भव हो तो बिजली के पंखों, कूलर, बोरियों पर पानी छिड़काव से पशुओं को गर्मी से राहत प्रदान की जा सकती है।

(ख) पोषाहार में गड़बड़ी

उच्च पर्यावरण तापमान पर पसीना आना अथवा हांफना, पशुओं में वाष्पीकरण, गर्मी तनाव से मुक्ति/बचाव का प्राथमिक तंत्र है और वाष्पीकरणीय ठंडा करने से शरीर को ठंडा करने के लिए एक महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया है। उच्च तापमान पर पसीने से पानी की कमी के परिणामस्वरूप प्यास और मूत्र उत्सर्जन में वृद्धि होती है। विशाल जल प्रवाह और अधिक पानी की खपत, इलेक्ट्रोलाइट्स की भारी हानि का कारण भी बनते हैं। छाया की बजाय, धूप में बंधे गायों में त्वचा से पोटाशियम की हानि की वृद्धि होने से और पोटाशियम के संरक्षण के प्रयास में मूत्र से सोडियम उत्सर्जन दरों में वृद्धि पाई गई है। गायों में तेज सांस/हाँपना से कार्बन डाई ऑक्साईड अधिक नुकसान होने के

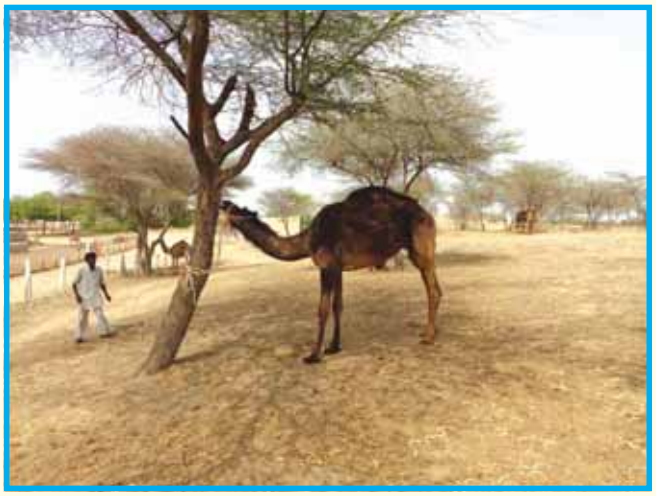

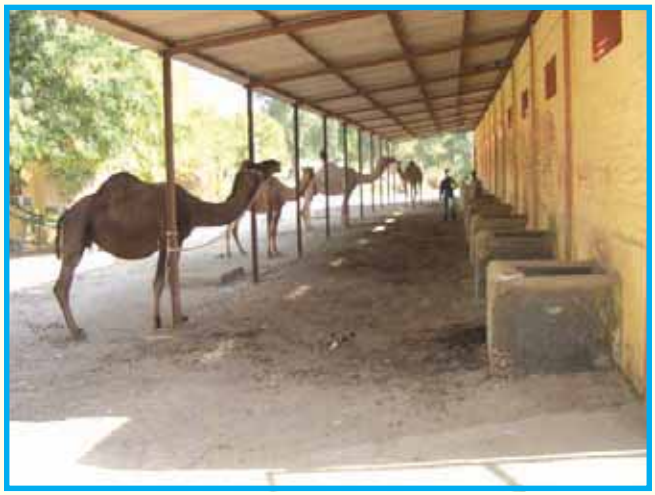

परिणामस्वरूप वसन क्षारमयता होती है और परिणाम स्वरूप मूत्र में बाईकार्बोनेट की मात्रा बढ़ जाती है। इसलिए बाई–कार्बोनेट आयन का आहार में लगातार प्रतिस्थापन, रक्त रसायन विज्ञान के प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण है। गर्मी तनाव के दौरान, आहार में मौलिक इलेक्ट्रोलाइट्स, सोडियम, पोटाशियम और बाईकार्बोनेट की आवश्यकताएं बढ़ जाती है। जिन स्थानों पर पर्यावरण तापमान 24 डिग्री सेल्सियस और सापेक्ष आर्द्रता 50 प्रतिशत से अधिक है वहां आहार इलेक्ट्रोलाइट प्रबंधन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

आहार इलेक्ट्रोलाइट संतुलन का प्रबंधन, पीने के पानी और चारा के लिए आवश्यक शरीर में लवण और इलेक्ट्रोलाइट्स जोड़ने पर आधारित है। आहार इलेक्ट्रोलाइट संतुलन स्थिर समस्थापन (होमीआस्टेसिस) को बढ़ावा देता है, शरीर के तरल पदार्थ के परासरणनियमन (ओस्मोरग्युलेशन) में सहायता करता है, भूख को उत्तेजित करता है और डेयरी पशुओं में सामान्य कंकाल विकास आदि को सुनिश्चित करता है।

गर्मी के कारण तनाव, कम चारे खाने और पेट में चारे की सूक्ष्मजीवियों की किण्वन क्रिया की वजह से पोषण विशेषज्ञ आम तौर पर राशन की ऊर्जा घनत्व में वृद्धि करते हैं। हालांकि, इस आहार के कारण रूमेण पीएच कम हो सकता है परोक्ष रूप से रूमेण एसिडोसिस का जोखिम बढ़ जाता है और अप्रत्यक्ष रूप से अस्वास्थ्यकर रूमेण का नकारात्मक पक्ष/प्रभाव के जोखिम को बढ़ाता है।

समाधान

विशेषज्ञों ने निम्नवत् महत्वपूर्ण सिफारिशें की हैं–

- जानवरों को स्नान कराएं, उन्हें अधिक हवा दें बल्कि उच्च आर्द्रता के मामले में उन्हें स्नान की बजाय पंखे से अधिक हवा दें।
- गर्मी के मौसम में पशुओं के लिए खिलाने का समय बदलें जब मौसम अच्छा और ठंडा हो तभी उन्हें चरने भेजें, गर्मियों के दौरान ठंडे मौसम में/रात में पशुओं को चारा/दाना खिलाएं।
- उन्हें अच्छी गुणवत्ता का पाचक चारा दें।
- हरे चारे की मात्रा में वृद्धि करें।
- उन्हें नियमित रूप से नमक और खनिज मिश्रण दें।
- जो पशु एक ही स्थान में बंधे हैं, दिन में उन्हें तीन/चार बार ताजा पानी दें।
- उनके चारे में 100 ग्राम सोडियम बाइकार्बोनेट मिलाएं। इससे गर्मी के प्रतिकूल प्रभाव से राहत मिलती है।
- अधिक उत्पादन हेतु उन्हें दैनिक 100 ग्राम तेल दें।

ऊँट के कुछ अद्भुत गुण

गर्मी के मौसम में, ऊँटों में प्रति दिन पानी की हानि की दर अन्य घरेलू पशुओं की अपेक्षा सबसे कम है जो कि एक लीटर से भी कम ऊँट में है। इस उल्लेखनीय विशेषता का एक कारण कम थायरोक्सिन उत्पादन जिससे निर्जलीकरण के दौरान चयापचय और फेफड़े से पानी की हानि कम होती है (यागिल और साथी 1979)।

तापमान नियंत्रण और जल संरक्षण की कुशल व्यवस्था ऊँट के कुछ अद्भुत गुण :

(1) ऊँट के शरीर की बाहरी बनावट जैसे लम्बी टाँगें, ऊँचा कद, लम्बी गर्दन, गद्देदार पांव जिसकी वजह से यह रेगिस्तान में बड़ी आसानी से चलता और दौड़ता है और कोई दूसरा पशु घोड़ा, गधा, गाय, भैंस, भेड़, बकरी इसका मुकाबला नहीं कर सकते हैं। इसी गुण के कारण ऊँट को 'रेगिस्तान का जहाज' नाम दिया गया।

(2) ऊँट का आमतौर पर कम चयापचय दर है। वे सूखे भोजन पर दो या तीन सप्ताह तक जीवित रह सकते हैं। वे अकाल अवधि के दौरान अपनी भूख नहीं खोता और पानी स्रोत्र से दूर एक व्यापक क्षेत्र में चर सकते हैं। गर्मियों में 10 दिन लगातार सर्दियों में 20 दिन तक बिना पानी के भी पिये ऊँटों में कोई दुष्प्रभाव नही हुआ है। स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव होने के रूप में, मनुष्य के 12 प्रतिशत की तुलना में, ऊँट अपने शरीर के वजन के 30 प्रतिशत खो सकते हैं।

(3) ऊँट मूत्र प्रणाली में उत्पन्न यूरिया पुनर्चक्रण (रीसाइक्लिंग) के लिए बहुत ही कुशल प्रणाली है। वे कम प्रोटीन आहार के समय शरीर में उत्पन्न यूरिया की 90–96 प्रतिशत को पुनः प्रयोग कर सकते हैं।

(4) विशेष गुर्दे संशोधन जैसे कि गुर्दे मज्जा में अधिक संख्या और लंबे हेनले की कुंडलियाँ लूप जो मूत्र को कम और गाढ़ा कर देते हैं (गुथिएर–पिल्तेर्स और डग्ग, 1981)। पानी की कमी के कारण कम पेशाब करना और सूखी मींगनियां कर पानी की बचत करता है। पानी की कमी के दौरान मूत्र के प्रवाह की दर काफी कम हो जाती है। सामान्यतः पर्याप्त पानी की उपलब्धता के तहत ऊँट प्रतिदिन 5 से 10 लीटर मूत्र करता है जो पानी की कमी के कारण 0.5 लीटर तक गिर जाता है।

(5) ऊँट का कूबड़ वसा ऊतकों से बना होता है जिसमें ऊर्जा संग्रहित होती है। भोजन की कमी के समय इन वसा ऊतकों से ऊर्जा और पानी पैदा होता है। जब ऊँट कूबड़ की वसा का उपयोग करता है तो कूबड़ लंगड़ा और सूखकर नीचे हो जाता है। उचित भोजन और आराम के साथ कूबड़ सामान्य करने के लिए वापस आ जाता है।

(6) ऊँट की आँखों पर लंबी और दोगुनी बालों की लहर होती है जो इसे धूल और रेत से बचाए रखने में मददगार है।

(7) ऊँट की रक्त कोशिकाएं अंडाकार और गोल नहीं हैं, इसकी रक्त कोशिकाओं और प्लाज्मा में अधिक पानी को अवशोषित करने की क्षमता है।

(8) जब भी पानी उपलब्ध होता है, यह उतना पानी पी लेता है जितना पेय के रूप में इसने अपने शरीर से खो दिया। ये एक समय में 100 लीटर पानी पी सकते हैं। नतीजतन शरीर का तरल पदार्थ बहुत पतला हो जाता है। यह एक स्तर है जो आम तौर पर अन्य जानवरों को सहन करने में सक्षम नहीं होगा। उस समय लाल रक्त कण में, बहुत सामान्य आकार के 240 प्रतिशत के रूप में आकार में वृद्धि होती है। बाद में पानी की कमी होने पर रक्त एकाग्रता को बनाए रखने की कोशिश में रक्त द्रव में पानी जाना शुरू हो जाता है। अन्य जानवरों में रक्त में लाल कोशिकाओं के 130 प्रतिशत ऐसी सूज़न कोशिकाओं के फटने से परिणामस्वरूप मौत का कारण बनती है।

(9) ऊँट अपने नथुनों को सिर्फ एक छेद की तरह बंद कर लेते हैं जिससे रेट से बचाव के साथ धूल से बचाव भी होता है।

(10) ऊँट अपने शरीर के तापमान को 36^0 से 42^0 सेंटीग्रेड के बीच समायोजित कर लेता है और रेगिस्तान की गर्मी/सर्दी में अपने शरीर को अनुकुल बनाकर सुरक्षित रखता है।

(11) ऊँटों में पसीने की ग्रंथियाँ अन्य स्तनधारियों के समान होती हैं, लेकिन वितरण में भिन्नता है। पसीने

की ग्रंथियां त्वचा के काफी नीचे और इनका कम वितरण होता है। मध्य शरीर क्षेत्र में पसीने की ग्रंथियों का वितरण 200 प्रति वर्ग सेमी हो सकता है। जब तक शरीर का तापमान पर्याप्त उच्च स्तर तक पहुँच नहीं जाता तब तक पसीना शुरू नहीं होता। गर्मियों में वातावरण के अधिक तापमान पर ग्रंथियां कार्यशील होती हैं और अधिकतम स्राव 280 मिलीलीटर प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र माना गया है। पसीने के स्राव से कुछ विशिष्ट गंध (शिखरस्रावी) भी निकलती है।

(12) जैसे, ऊँट कुशल गुर्दे नियंत्रण के माध्यम से मेटाबोलाइट्स को रोककर गाढ़े मूत्र से पानी की हानि को कम कर सकते हैं, वैसे ही यह आँतों से पानी को पुनः अवशोषण, पानी की हानि को कम करने में भी सक्षम है, जो अन्य पशुओं में संभव नहीं है। ऊँट अपने शरीर के 30 प्रतिशत वजन घटने का सामना कर सकते हैं। यह गर्मियों में और सर्दियों में क्रमशः 20 दिनों एवं 10 दिनों के लिए पानी के बिना रह सकते हैं और तत्पश्चात 10 मिनट के भीतर, एक बार पुनः पानी पीकर नुकसान की पूर्ति कर सकते हैं। (राय एट अल 1994 और 1995)।

(13) मुख्तार और साथियों (1989) ने अपने अनुसंधान में पाया कि ऊँट में भेड़ और बकरियों की तुलना में शुष्क पदार्थ और पानी की मात्रा के अंतरग्रहण की दर और पानी के उत्सर्जन में कटौती अधिक स्पष्ट थे। कम प्रोटीन आहार पर भेड़ में 3.15 ग्राम/प्रतिदिन/किलोग्राम की तुलना में ऊँट में देहभार में 0.58 ग्राम/प्रतिदिन/किलोग्राम की कमी देखी गयी। ऊँट, भेड़ की तुलना में कम नाइट्रोजन उत्सर्जित और नाइट्रोजन संतुलन की बेहतर स्थिति में थे (फरीद और साथी 1979)।

(14) सूखे की स्थिति के लिए ऊँट में कुशल अनुकूलनशीलता। गुथिएर–पिल्तेर्स और डग्ग (1981) की रिपोर्ट ने साबित कर दिया है कि सहेल और अफ्रीका के अन्य शुष्क क्षेत्रों में 1973 की सबसे खराब और गंभीर सूखे में लगभग 100 प्रतिशत गायों की मृत्यु हुई जबकि ऊँटों में यह आंकड़ा 20–30 प्रतिशत था।

ऊँटः भविष्य का पशु

भविष्य के पशु के रूप में ऊँट, पृथ्वी ग्रह के प्यासे क्षेत्रों में समाज और देहाती अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। ऊँट गरीब किसानों के लिए, प्रतिदिन निर्वाह का स्रोत ही नहीं वरन् उनके लिए उन्हें अस्पष्ट भविष्य के खिलाफ एक सुरक्षा के रूप में धन की बैंक गारंटी भी है। समय की मांग है कि ऊँट को एक भाग्य प्राणी के रूप में प्रचारित किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें कम होती पानी परिसंपत्तियों और सूखे जैसी स्थितियों बचाने में अविश्वसनीय क्षमता है। ऊँट जलवायु परिवर्तन और भावी खाद्य असुरक्षा की समस्या से निपटने के लिए सबसे अच्छे उपकरणों में से एक है और सरकारों के अन्वेषण और रणनीति में इसे महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए।

वैकल्पिक चिकित्सा

एफ.सी. टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, ए.के. नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक,
शिरीष नारनवरे, वैज्ञानिक एवं राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

उन सभी चिकित्सा पद्धतियों को वैकल्पिक चिकित्सा कहते हैं जो परम्परागत चिकित्सा पद्धति के अंतर्गत नहीं रखी जा सकतीं, या 'ऐसी पद्धति जिसे एक समान रूप से कभी प्रभावी नहीं माना जाता', इसे प्रायः साक्ष्य आधारित चिकित्सा पद्धति के रूप में देखा जाता है और इसमें वैज्ञानिक आधार के स्थान पर ऐतिहासिक या सांस्कृतिक उपचार पद्धतियाँ शामिल होती हैं – जिन्हें पूरक तथा वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति या कम्प्लीमेंटरी एंड ऑल्टरनेटिव मेडिसीन के तहत रखा जाता है।

कुछ वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ– 1. संपूर्ण स्वास्थ्य 2. विजुअलाइजेशन 3. ध्यान 4. आध्यात्मिक इलाज 5. बायोफीडबैक 6. मानसिक इलाज 7. चुंबक चिकित्सा 8. पिरामिड इलाज 9. मूत्र चिकित्सा 10. हर्बोलॉजी। औषधीय पादप 11. प्राकृतिक चिकित्सा 12. होम्योपैथी 13. पुष्पगंध उपचार 14. एरॉमाथैरेपी 15. आयुर्वेदिक चिकित्सा 16. अमेरिकी चिकित्सा 17. एशियाई चिकित्सा 18. तिब्बती चिकित्सा 19. दक्षिणपूर्व एशियाई चिकित्सा 20. चीनी चिकित्सा 21. एक्यूपंक्चर 22. एक्युप्रेशर 23. ऑस्टियोपेथी 24. अंगमर्दन (खिलाड़ियों का अंगमर्दन) 25. चिकित्सीय स्पर्श 26. रिशियान थैरेपी 27. पोस्चुरल इन्टिग्रेशन 28. अलेक्जेंडर तकनीक 29. पॉलारिटी थैरेपी 30. सेन्सरी एवेयरनेस 31. हाइड्रोथैरेपी स्नान 32. योग 33. नृत्य थैरेपी 34. हँसी थैरेपी 35. संगीत ध्वनि थैरेपी 36. काव्य थैरेपी 37. कला थैरेपी 38. वर्ण थैरेपी 39. पालतू पशु चिकित्सा।

वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ अपने मूल सिद्धांतों में उतनी ही विविध हैं, जितनी अपनी कार्य–विधियों में, जिन न्यायाधिकार क्षेत्रों में वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियां पर्याप्त रूप से प्रचलित हों, वहां उन्हें कानूनी लाइसेंस मिल सकता है तथा उन्हें विनियमित किया जा सकता है। वैकल्पिक चिकित्सा के चिकित्सकों के दावों को सामान्यतः चिकित्सा समुदाय द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता, क्योंकि सुरक्षा तथा प्रभावोत्पादकता का साक्ष्य–आधारित मूल्यांकन या तो उपलब्ध नहीं होता या इन पद्धतियों के लिए यह पूरा ही नहीं किया जाता, यदि वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा किसी वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति की सुरक्षा तथा प्रभावोत्पादकता का प्रमाण दिया जाता है, तो वह मुख्य धारा की चिकित्सा पद्धति बन जाती है।

अमेरिका का नैशनल सेंटर फॉर कम्प्लीमेंटरी एंड ऑल्टरनेटिव मेडिसिन – CAM (कैम)– "विविधतापूर्ण चिकित्सीय तथा स्वास्थ्य सुरक्षा प्रणालियों, पद्धतियों तथा उत्पाद, जो मौजूदा पारंपरिक चिकित्सा पद्धति का अंग नहीं है," के रूप में वर्णित करता है। पूरक चिकित्सा में ऐसी सभी पद्धतियां तथा विचार शामिल होते हैं, जो कई देशों में पारंपरिक चिकित्सा क्षेत्र से बाहर के होते हैं और उसके प्रयोगकर्ता द्वारा उसे बचावकारी या रोगोपचारी, अथवा स्वास्थ्यवर्धक तथा उपचारात्मक के रूप में परिभाषित किया जाता है। उदाहरण के लिए जैवप्रतिपुष्टि का उपयोग सामान्यतः भौतिक चिकित्सा तथा पुनर्वास समुदाय द्वारा

किया जाता है, लेकिन कुल मिलाकर चिकित्सा–विज्ञान समुदाय में इसे वैकल्पिक चिकित्सा के रूप में माना जाता है, तथा यूरोप में कुछ जड़ी–बूटी वाली चिकित्सा पद्धतियां मुख्य धारा की चिकित्सा पद्धतियां हैं, पर अमेरिका में वे वैकल्पिक मानी जाती हैं। चिकित्सा अनुसंधानकर्ताओं का मानना है कि स्वास्थ्य की देखभाल की पद्धतियों को प्रमुख रूप से वैज्ञानिक साक्ष्यों पर आधारित माना जाना चाहिए। यदि किसी चिकित्सा पद्धति का कड़ा परीक्षण हुआ हो, और वह सुरक्षित तथा प्रभावी पाई गई हो, तो पारंपरिक चिकित्सा पद्धति उसे अपना लेगी, चाहे उसे आरंभ में 'वैकल्पिक' ही क्यों न माना गया हो।

वर्गीकरण : पूरक तथा वैकल्पिक चिकित्सा की शाखाओं के लिए कैम ने एक सर्वाधिक प्रयोग में लाई जाने वाली प्रणाली का विकास किया है, यह पूरक तथा वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों को प्रमुख समूहों में वर्गीकृत करती है, जिनमें से कुछ अतिव्यापित हैं।

सम्पूर्ण चिकित्सा प्रणालियाँ : एक से अधिक अन्य समूहों में शामिल हैं, जैसे पारंपरिक चीनी चिकित्सा, होम्योपैथी तथा आयुर्वेद।

मस्तिष्क–शरीर चिकित्सा : स्वास्थ्य के लिए यह एक संपूर्णता वाली विधि को अपनाती है, जो मस्तिष्क, शरीर तथा आत्मा के बीच के अंतर्संबंधों को उद्घाटित करती है। यह इस सिद्धांत पर कार्य करती है कि मस्तिष्क "शारीरिक क्रियाओं तथा लक्षणों" को प्रभावित करता है।

जैव वैज्ञानिक आधार की पद्धति : इसमें प्रकृति में पाए जाने वाले पदार्थों का उपयोग किया जाता है, जैसे जड़ी–बूटियां, भोजन, विटामिन तथा अन्य प्राकृतिक पदार्थ।

प्रहस्तनीय तथा शरीर–आधारित पद्धतियाँ : ये प्रहस्तन या शरीर की गतियों को प्रदर्शित करती हैं, जैसे कि पाद–चिकित्सा या ऑस्टियोपैथिक प्रहस्तन में किया जाता है।

ऊर्जा चिकित्सा : एक ऐसा क्षेत्र है, जो कल्पित तथा विविधतापूर्ण ऊर्जा क्षेत्रों पर आधारित है, जैव क्षेत्र उपचार पद्धतियां उन ऊर्जा क्षेत्रों को प्रभावित करती हैं, जो अनुमानतः शरीर के चारों और होते हैं तथा शरीर को वेधते हैं, ये उपचार पद्धतियां जिन कल्पित ऊर्जा क्षेत्रों पर आधारित होती हैं, उनके अस्तित्व का कोई ठोस प्रमाण नहीं मिला है। जैव–विद्युत चुंबकीय–आधारित उपचार पद्धतियों में विविधतापूर्ण विद्युत चुंबकीय क्षेत्रों, जैसे स्पंदित क्षेत्र, प्रत्यावर्ती धारा या एकांतर–धारा क्षेत्र का गैर–पारंपरिक तरीके से प्रयोग किया जाता है।

उपयोग : विकसित देशों में वैकल्पिक चिकित्सा का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। वर्ष 1998 में किए एक अध्ययन में देखा गया कि वैकल्पिक चिकित्सा का प्रयोग वर्ष 1990 में 33.8 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 1997 में 42.1 प्रतिशत हो गया, युनाइटेड किंगडम में हाउस ऑफ लॉर्ड्स द्वारा 2000 में जारी की गई रिपोर्ट कहती है कि ''युनाइटेड किंगडम में कैम का प्रयोग काफी हो रहा है तथा यह बढ़ रहा है। विकाशसील देशों में संसाधनों की कमी तथा गरीबी के कारण आवश्यक चिकित्साओं तक लोगों की पहुंच सीमित होती है, वैकल्पिक चिकित्सा को आधार प्रदान करने वाले पारंपरिक उपचारों में प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल शामिल हो सकती है या इन्हें स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में समाकलित किया जा सकता है। अफ्रीका की 80 प्रतिशत प्राथमिक स्वास्थ्य देखभालों में पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है और विकसित देशों में समग्र रूप से एक तिहाई जनसंख्या आवश्यक चिकित्सा से वंचित रह जाती है। वर्ष 2004 में लगभग 1,400 अमेरिकी अस्पतालों में किए एक सर्वेक्षण में यह पाया गया कि प्रत्येक चार अस्पतालों में, एक से अधिक अस्पताल पूरक चिकित्साओं,

जैसे ऐक्युपंचर, होम्योपैथी तथा मसाज उपचार की सेवा प्रस्तावित करते थे।

विनियमन – वैकल्पिक चिकित्सा की कौन सी–शाखा वैध है, कौन–सी विनियमित, इनसे जुड़े अधिकार क्षेत्र अलग–अलग हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों की समिति –स्वास्थ्य की उच्चतम प्राप्ति योग्य मानक के अधिकार पर सामान्य टिप्पणी संख्या– 14 (2000) का अनुच्छेद 34 (विशिष्ट वैधानिक उत्तरदायित्व) कहता है कि इसके अलावा, सम्मान करने के उत्तरदायित्व में शामिल है–सरकार द्वारा पाबंदी न लगाना, या परम्परागत बचाव उपचार, उपचार पद्धतियों तथा चिकित्साओं और असुरक्षित औषधियों के विपणन में अवरोध न पैदा करना तथा अवपीड़क चिकित्सीय उपचार को तब तक न रोकना, जब तक कि मानसिक रोग अथवा संचरित होने वाले रोगों की रोकथाम या नियंत्रण के उपचार के लिए एक विशेष आधार मौजूद हो"। इस अनुच्छेद के विशिष्ट क्रियान्वयन को सदस्य देशों पर छोड़ दिया गया है।

आधुनिक औषधि – निर्माण विज्ञान को कड़ाई से विनियमित किया गया है, ताकि दवाई में एक मानक मात्रा में सक्रिय घटक तत्त्व हों तथा वे संदूषण से मुक्त हों। वैकल्पिक चिकित्सा उत्पाद पर समान सरकारी गुणवत्ता नियंत्रण के मानक नहीं होते और उनके बीच सामंजस्य नहीं हो सकता, इससे किसी विशेष खुराक के लिए रासायनिक सामग्री तथा जैविक सक्रियता में अनिश्चितता होती है। निरीक्षण की इस कमी का यह अर्थ है कि वैकल्पिक उत्पाद में मिलावट तथा संदूषण की संभावना बनी रहती है, यह समस्या अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्य द्वारा और भी बढ़ जाती है, क्योंकि विभिन्न देशों का विनियमन अलग–अलग प्रकार और दायरे का होता है, इससे उपभोक्ताओं के लिए दिए उत्पाद के खतरे तथा उसकी गुणवत्ता का आकलन करना मुश्किल हो जाता है।

प्रभावोत्पादकता का परीक्षण – अधिकतर वैकल्पिक चिकित्सा उपचार पैटेंट करने लायक नहीं हैं, जिसके कारण निजी क्षेत्रों द्वारा शोध कार्य हेतु कम निधि (फंड) मिलती है, इसके अतिरिक्त अधिकतर देशों में वैकल्पिक उपचारों का प्रभावोत्पादकता के साक्ष्यों के बगैर विपणन किया जा सकता है, जो खुद निर्माताओं द्वारा वैज्ञानिक अनुसंधानों हेतु निधि प्रदान करने में एक अवरोध है। कुछ लोगों ने चिकित्सीय अनुसंधान के लिए पुरस्कार प्रणाली को अपनाने का प्रस्ताव दिया है, हालांकि अनुसंधान के लिए सार्वजनिक निधिकरण (फंडिंग) मौजूद है। वैकल्पिक चिकित्सा तकनीकों के लिए निधिकरण को बढ़ाना यूएस नैशनल सेंटर फॉर कॉम्प्लीमेंटरी एंड ऑल्टरनेटिव मेडिसिन का एक लक्ष्य था तथा इसके पूर्ववर्ती, ऑफिस ऑफ ऑल्टरनेटिव मेडिसिन ने वर्ष 1992 से 1 –बिलियन डॉलर से अधिक की राशि खर्च की है।

संभावित दुष्प्रभाव – पारंपरिक उपचारों के अवांछित दुष्प्रभावों के लिए परीक्षण किए जाते हैं, जबकि वैकल्पिक चिकित्सा के लिए सामान्यतः किसी प्रकार का परीक्षण नहीं किया जाता। कोई भी चिकित्सा– चाहे वह पारंपरिक या वैकल्पिक हो, रोगियों पर उनके जैविक या मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ते हैं, जो जैविक या मनोवैज्ञानिक दुष्प्रभाव हो सकते हैं। वैकल्पिक चिकित्सा के संबंध में इस तथ्य को झुठलाने के प्रयास के रूप में कभी–कभी प्रकृति के प्रति अपील की भ्रामकता का सहारा लिया जाता है – "जो प्राकृतिक है, वह हानिकारक नहीं हो सकता"।

दुष्प्रभाव की इस सामान्य सोच का एक अपवाद है होम्योपैथी, वर्ष 1938 से यू.एस. फूड एंड ड्रग ऐड्मिनिस्ट्रेशन ने होम्योपैथी उत्पाद को "अन्य दवाओं से अलग कई अन्य तरीकों" में विनियमित किया है। होम्योपैथी उत्पाद के निर्माण में समापन की तिथि से जुड़ी सही निर्माण पद्धतियों का इस्तेमाल नहीं किया जाता, सांद्रता तथा निर्मित उत्पाद

की पहचान तथा शक्ति हेतु जांच नहीं की जाती और अल्कोहल की सांद्रता अन्य पारंपरिक दवाओं के लिए स्वीकृत सांद्रता से अधिक हो सकती है।

उपचार विलंब – ऐसे व्यक्ति जिन्हें एक छोटे रोग हेतु किसी वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति का अनुभव है या उसमें उन्हें सफलता मिली हो, उन्हें इसकी प्रभावोत्पादकता के लिए सहमत किया जा सकता है और उस सफलता के आधार पर अधिक गंभीर, संभवतः जानलेवा बीमारियों हेतु कुछ अन्य वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों के बहिर्वेशन के लिए राजी किया जा सकता है। इस कारण से आलोचक तर्क देते हैं कि ऐसी उपचार पद्धतियां जो छद्म–औषधियों पर आधारित होती हैं, उनकी सफलता को परिभाषित करना काफी खतरनाक होता है। मानसिक स्वास्थ्य पत्रकार स्कॉट लिलिएनफील्ड ने वर्ष 2002 में कहा, "अमान्य या वैज्ञानिक रूप से असमर्थित मानसिक स्वास्थ्य उपचार पद्धतियाँ व्यक्ति को प्रभावी चिकित्सा त्यागने के लिए मजबूत कर सकता है," और इसे उन्होंने "अवसर लागत" के रूप में देखा। ऐसे व्यक्ति जो अपना काफी समय और पैसे अप्रभावी उपचारों में खर्च करते हैं, या तो उनके पास दोनों नहीं बचते अथवा वे ऐसी चिकित्साएं लेने के अवसर चूक जाते हैं, जो अधिक मददगार साबित हो सकती हैं। संक्षेप में कहें तो यहां तक कि अहानिकर चिकित्सा का भी नकारात्मक नतीजा निकल सकता है।

इसकी लोकप्रियता को अन्य कारकों के साथ जोड़ा जा सकता है। एड्जार्ड अर्न्स्ट के साथ एक साक्षात्कार में द इंडिपेंडेंट ने लिखा : ''तब यह इतनी लोकप्रिय क्यों है? अर्न्स्ट इसके लिए प्रदाताओं, ग्राहकों तथा उन चिकित्सकों को दोषी ठहराते हैं, जिसकी लापरवाही ने ऐसा द्वार खोल दिया जो वैकल्पिक उपचार के चिकित्सकों की ओर ले जाता है।'', लोगों को झूठ कहा जाता है। 40 मिलियन वेबसाइटें हैं, जिनमें से 39.9 मिलियन झूठ कहती हैं, और कभी–कभी तो बेहिसाब झूठ। वे कैंसर के रोगियों को गुमराह करती हैं, जिन्हें न केवल सारे पैसे खर्च कर देने के लिए प्रेरित किया जाता है, अपितु उन चीजों से इलाज करने के लिए प्रेरित किया जाता है, जो उनके जीवन को घटा सकती हैं। 'दूसरी तरफ लोग भोले–भाले हैं। इस उद्योग के सफल होने के लिए लोगों का भोलापन जरूरी है।

दवाओं के पारंपरिक उपयोग को संभावित भावी दवाओं के बारे में सीखने के एक मार्ग को मान्यता मिली हुई है। 2001 में, शोधकर्ताओं ने मुख्यधारा की दवा के रूप में उपयोग किये जाने वाले ऐसे 122 यौगिकों की पहचान की जिनकी व्युत्पत्ति 'एथनोमेडिकल (नृजाति–चिकित्सा) वनस्पति स्रोतों से हुई थी; इन यौगिकों का 80 प्रतिशत उसी या संबंधित तरीके से पारंपरिक नृजाति–चिकित्सा के रूप में उपयोग होता रहा था।

प्रागैतिहासिक काल से ही रोगों के उपचार के लिए सभी महाद्वीपों के लाखों–करोड़ों लोगों ने स्थानीय अर्थात् देसी पेड़–पौधों का इस्तेमाल किया है। वैज्ञानिकों के अनुसार बीमारी को ठीक करने के लिए प्राणियों ने कड़वी वनस्पतियों के हिस्से के उपयोग की प्रवृत्ति विकसित की। मुख्यधारा के अध्ययन की इस आधार पर वैद्य आलोचना करते हैं कि वे ऐतिहासिक उपयोग का इस्तेमाल अपर्याप्त मात्रा में करते हैं, जो वर्तमान और अतीत में औषधि की खोज और विकास में बहुत ही उपयोगी हैं। उनका कहना है कि चयन के कारकों जैसे सर्वोत्कृष्ट खुराक, प्रजाति और कटाई के समय और आबादी को लक्ष्य बनाने में परंपरा मार्गदर्शन प्रदान कर सकती है। हर्बल उपचार के लिए आमतौर पर खुराक खास मायने रखती है जबकि प्रभावकारिता और सुरक्षित खुराक को सुनिश्चित करने के लिए अधिकांश औषधि की कड़ाई से जांच होती है। जड़ी–बूटियों के मानकीकरण के कई तरीकों को लागू किया जा सकता है, हालांकि एक ही प्रजाति के पौधे में विभिन्न नमूनों में रासायनिक सामग्री अलग हो सकती है।

ऊँटनी के दूध में निहित अद्वितीय विक्रय बिन्दु (यूएसपी)

गोरखमल एवं बी. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक
भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, पालमपुर–176 061

हर एक व्यक्ति अपने कुछ खास गुणों की वजह से समाज में पहचाना जाता है। इसी तरह बाजार में उपलब्ध किसी भी उत्पादन की पहचान उसमें समाहित कुछ खास गुणों के कारण होती है। कोई भी ऐसा गुण, जिसके कारण व्यक्ति अथवा उत्पाद की पहचान होती है, उसे उसकी यूएसपी कहा जाता है। यूएसपी, यूनिक सेलिंग पॉईंट अथवा यूनिक सेलिंग प्रोपोजिशन का संक्षिप्त रूप है। बाजार में अपनी उपस्थिति दर्ज करने के लिए, हिस्सेदारी और मांग को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि सम्बन्धित उत्पाद की 'यूएसपी' को अच्छी तरह से ज्यादा–से–ज्यादा लोगों के सामने प्रस्तुत किया जाए और उसमें निरंतर नये सुधार करने की कोशिश की जाए। लगभग सभी नामी कंपनियां अपने उत्पादों के यूएसपी की पहचान करने के उपरांत आकर्षक विज्ञापनों द्वारा अपने उत्पादों की मांग एवं उपयोगिता बढ़ाने की कोशिश करती है।

इसी तरह ऊँटनी के दूध के भी कई अनोखे गुण हैं। ऊँटनी के दूध में निहित गुणों/यूएसपी का विज्ञापनों के माध्यम से वर्णन करके इसकी मांग को स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाजार में बढ़ाया जा सकता है। ऊँटनी का दूध स्वाद एवं गुणवत्ता में अन्य पशुओं के दूध से अलग है। ऊँटनी के दूध में कई ऐसे तत्व पाए जाते हैं जो कि अन्य पशुओं के दूध से प्राप्त नहीं किये जा सकते हैं। ऊँटनी के दूध में इतनी विशेषताएं होने के बावजूद स्वाद के कारण इसे पसंद नहीं करते हैं एवं स्वाद के कारण ही दूध की मांग कम रहती है। ऊँटनी के दूध का स्वाद चरका एवं हल्का नमकीन होता है। ऊँटनी के दूध का अलग स्वाद होने का सम्भावित कारण इसके दूध में पोटाशियम की अधिक मात्रा का होना है। ऊँटनी के दूध में पोटाशियम की अधिक मात्रा उच्च रक्तचाप से ग्रसित लोगों के लिए फायदेमंद है। पोटाशियम की अधिकता को यूएसपी में शामिल करना चाहिए। ऊँटनी का दूध कम मूल्य में बिकता है, इस स्थिति का सर्वाधिक नुकसान ऊँट पालक को होता है। ऊँटनी के दूध का सही मूल्य मिल सके, इसके लिए दूध की प्रभावी उपयोगिता बढ़ाना आवश्यक है। इसके लिए ऊँटनी के दूध की यूएसपी की पहचान करके सही तरह से प्रस्तुत करने की आवश्यकता है।

ऊँटनी के दूध में प्रचुर मात्रा में गुणात्मक प्रोटीन्स व अन्य आवश्यक तत्व मौजूद है, जिनकी मानव शरीर को आवश्यकता होती हैं। ऊँटनी के दूध का उपयोग कई बीमारियों में बहुत लाभप्रद पाया गया है। ऊँटनी का दूध पीलिया, यकृत, पेट का अलसर और बवासीर इत्यादि बीमारियों में उपयोगी बताया जाता है। ऊँटनी के दूध को विभिन्न प्रकार के क्षय रोगियों भी उपयोगी पाया गया है। यह देखा गया है कि जिन लोगों को गाय का दूध पीने से एलर्जी होती है, उनको ऊँटनी के दूध का उपयोग करने से एलर्जी नहीं होती है। यह दूध लैक्टेज एंजाइम की कमी से ग्रस्त लोगों द्वारा भी सेवन किया जा सकता है। चूहों में किए गए अनुसंधान से पता चला है कि अल्कोहल से हुए यकृत नुकसान को भी ऊँटनी दूध का उपयोग करके सही किया जा सकता है। ऊँटनी के दूध का सामान्य तापक्रम पर जीवन आठ घण्टे तक होता है। ऊँटनी के दूध की मांग

दिन–प्रतिदिन बढ़ रही है, लेकिन इसकी बाजार में ज्यादा मांग बढ़ाने के लिए दूध के अद्वितीय गुणों का विज्ञापनों एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया द्वारा प्रचार एवं प्रसार करना चाहिए।

ऊँटनी के दूध में लगभग सभी मुख्य संघटक पाए जाते हैं। ऊँटनी के दूध में कैल्शियम, फास्फोरस एवं मैग्निशियम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। दूध में उपस्थित खनिज तत्व आंतों, अस्थियों, दाँतों तथा रक्त के निर्माण एवं अनेक दैहिक कार्यों को चलाने तथा उन्हें नियमित करने के लिए आवश्यक होते हैं।

ऊँटनी और गाय के दूध के संघटन का तुलनात्मक अन्तर तालिका–1 में दिया गया है। तालिका–1 में दिए गए संघटन से मालूम किया जा सकता है कि ऊँटनी एवं गाय के दूध में क्या–क्या अंतर है। ऊँटनी के दूध में वसा एवं कुल ठोस की मात्रा कम होती है। ऊँटनी के दूध में इन्सुलिन की मात्रा लगभग 2.5 गुणा अधिक होती है। राजस्थान की रायका प्रजाति के लोगों में मधुमेह रोग नगण्य है क्योंकि यह प्रतिदिन ऊँटनी का दूध उपयोग में लेते हैं। इसके दूध में जस्ता, लोहा, एवं ताँबा की मात्रा 2.0, 1.0 एवं 0.44 मिलीग्राम प्रतिशत तक होती है जो कि गाय के दूध की तुलना में क्रमशः 5, 20 एवं 22 गुणा अधिक है। जस्ता एवं इन्सुलिन के कार्य सम्पादन में मदद करता है। यह तत्व कोशिकाओं को ऑक्सीकरण से होने वाली क्षति से रक्षा करता है। ऊँटनी के दूध में लघु श्रंखला वसीय अम्ल (सी 4–सी 12) तुलनात्मक रूप से कम एवं असंतृप्त अम्ल (सी 14–सी 18) अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। ऊँटनी के दूध में मस्तु प्रोटीन्स की मात्रा गाय के दूध से लगभग दुगुनी होती है। दूध में मस्तु प्रोटीन्स की प्रचुरता कैंसर अवरोधी मानी जाती है। ऊँटनी के दूध में कई प्रकार के प्रोटीन पाए जाते हैं। रक्षात्मक प्रोटीन दूध की गुणवत्ता

तालिका 1. ऊँटनी एवं गाय के दूध का तुलनात्मक संघटन

संघटक	गाय	ऊँटनी
कुल ठोस (प्रतिशत)	12.5	9.5
वसा (प्रतिशत)	4.1	2.5
इन्सुलिन (माइक्रो युनिट/मिलीलीटर)	16.3	40.5 (गाय के दूध से लगभग 2.5 गुणा अधिक)
विटामिन–सी (मिलीग्राम प्रतिशत)	1.0	5.3 (5 गुणा अधिक)
विटामिन–ई (माइक्रोग्राम प्रतिशत)	100.0	270.0 (2.7 गुणा अधिक)
लम्बी श्रंखला असंतृप्त वसीय अम्ल(प्रतिशत)	2.3	11.6 (5 गुणा अधिक)
जस्ता (मिलीग्राम प्रतिशत)	0.35	2.0 (~5 गुणा अधिक
लोहा (मिलीग्राम प्रतिशत)	0.05	1.0 (20 गुणा अधिक)
तांबा (मिलीग्राम प्रतिशत)	0.02	0.44 (22 गुणा अधिक)
बीटा–केसीन (प्रतिशत)	39	65 (~1.6 गुणा अधिक)
मस्तु प्रोटीन (प्रतिशत)	0.4	0.9 (~2 गुणा अधिक)
बीटा लैक्टएलब्युमिन (मिलीग्राम/मिलीलीटर)	1.2	3.5 (3 गुणा अधिक)
लैक्टोफेरिन (मिलीग्राम/मिलीलीटर	0.5	2.5 (5 गुणा अधिक)
सामान्य ताप पर जीवन (घण्टे)	3	8 (~3 गुणा अधिक)

को लम्बे समय तक बनाए रखने में सहायक होती है। लाइसोजाइम, लैक्टोफेरिन, लैक्टोपरऑक्सीडेज एवं पैप्टीडोग्लाइकान पहचान प्रोटीन पाए जाते हैं। रक्षात्मक प्रोटीन दूध की गुणवत्ता को लम्बे समय तक बनाए रखने में सहायक होती है। लाइसोजाइम, लैक्टोफेरिन, लैक्टोपर–ऑक्सीडेज एवं पैप्टीडोग्लाइकान पहचान प्रोटीन की मात्रा क्रमशः 0.65 प्रतिशत, 2.5 मिलीग्राम प्रति मिलीलीटर, 2.23 यूनिट प्रति मिलिलीटर एवं 10.7 मिलीग्राम प्रतिशत पाई गई हैं। पैप्टीडोग्लाइकान पहचान प्रोटीन गाय के दूध में नहीं पाई जाती है एवं यह प्रोटीन कैंसर मेटासटासिस को रोकने में कारगर पाई गई हैं। ऊँटनी के दूध में मस्तु प्रोटीन्स की मात्रा गाय के दूध से लगभग दुगुनी होती है। दूध में मस्तु प्रोटीन्स की प्रचुरता कैंसर अवरोधी मानी जाती है।

ऊँटनी के दूध में सभी प्रकार के विटामिन्स पाए जाते हैं और इनकी मात्रा पोषण पर निर्भर करती है। ऊँटनी के दूध में नियासिन एवं विटामिन–ई की मात्रा क्रमशः 460.0 एवं 270.0 माइक्रोग्राम प्रतिशत तक होती है। नियासिन व विटामिन–ई की मात्रा गाय के दूध से अधिक पाई जाती है। गाय के दूध में इनकी मात्रा क्रमशः 80.0 व 100.0 माइक्रोग्राम प्रतिशत होती है। विटामिन–ई एक एंटी ऑक्सीडेंट है, जो हमारे शरीर की मूलभूत जरूरतों को पूरा करता है। त्वचा से जुड़ी अनेक बीमारियों के इलाज में भी विटामिन–ई काफी मददगार होता है। विटामिन–ई की मदद से त्वचा पर पड़ने वाली झुरियों से काफी हद तक छुटकारा पाया जा सकता है और इससे त्वचा की प्रतिरोधात्मक क्षमता मजबूत होती है। त्वचा कैंसर में भी विटामिन–ई फायदेमंद बताया गया है। ऊँटनी के दूध में विटामिन–सी की मात्रा 5.3 मिलीग्राम प्रतिशत तक होती है। दो थुई ऊँटनी के दूध में विटामिन–सी की मात्रा 7.50 मिलीग्राम प्रतिशत तक होती है। यह मात्रा गाय, भैंस व अन्य पशुओं की तुलना में काफी अधिक है। मनुष्य विटामिन–सी को संश्लेषित नहीं कर सकता है और इसकी कमी से अनेक रोग पैदा हो सकते हैं। ऊँटनी के दूध का लगातार उपयोग करने से विटामिन–सी की कमी को दूर किया जा सकता है। ऊँटनी के दूध में विटामिन–सी की अधिक मात्रा दूध को लम्बे समय तक रखने में सहायक है। विटामिन्स की उपस्थिति से दूध के पोषक मान में काफी वृद्धि होती है। इनसे शरीर को न तो ऊर्जा मिलती है और न ही शरीर की रचनात्मक इकाइयों में इनका उपयोग होता है। परंतु शरीर की सामान्य वृद्धि, उत्तम स्वास्थ्य तथा प्रजनन क्षमता को सुचारू रूप से चलाते रहने के लिए इनकी विशेष आवश्यकता होती है।

ऊँटनी के दूध का मूल्य संवर्धन करके भी इसकी उपयोगिता को बढ़ाया जा सकता है। राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर ने ऊँटनी के दूध से कई प्रकार के उत्पाद तैयार किए हैं जिनमें विभिन्न स्वादयुक्त कुल्फी, सुगन्धित दूध, किण्वित दूध, पनीर, बर्फी, गुलाब जामुन, चाय व कॉफी शामिल हैं। राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर का भ्रमण करने वाले पर्यटकों में कुल्फी की मांग अन्य उत्पादों से काफी अधिक है। ऊँटनी के दूध से निर्मित कुल्फी ''कम वसा युक्त कुल्फी'' के रूप में प्रचार करके इसकी मांग को बढ़ाया जा सकता है।

आम जनता को भी ऊँटनी के दूध का उपयोग बढ़ाने में मदद करनी चाहिए क्योंकि बाजार में उपलब्ध खुले दूध की प्रमाणिकता का पता लगाना मुश्किल होता है और कभी कभी यह नकली दूध होता है। मिलावटी दूध से पेट में ऐंठन और अपच की समस्या हो सकती है। नकली दूध के सेवन से छोटे बच्चे और बुजुर्ग ज्यादा बीमार होते हैं। नकली दूध का सेवन करना हमारे स्वास्थ्य के लिए नुकसानदेह हो सकता है। स्वच्छ दूध पीने से बीमारियाँ दूर होती हैं और शरीर भी स्वस्थ रहता है। लेकिन दूध में मिलावट के कारण केमिकल के प्रयोग से निर्मित दूध पीने से हमारा स्वास्थ्य बिगड़ सकता है। ऊँटनी के दूध में निहित अद्वितीय विक्रय बिंदुओं (यूएसपी) में क्रमशः जस्ता, लोहा, तांबा, पोटाशियम, विटामिन–सी, विटामिन–ई एवं रक्षात्मक प्रोटीन्स की अति प्रचुरता को शामिल किया जा सकता है।

ऊँटों में तिबरसा रोग का फैलाव और नियंत्रण

संजय कुमार, वैज्ञानिक एवं एस.के. घोरुई, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

तिबरसा रोग ऊँटों में होने वाली सबसे हानिकारक बीमारी है जो उष्ट्र पालकों को भारी आर्थिक नुकसान पहुँचाता है। इस बीमारी को ट्रीपैनोसोमीऐसिस या सर्रा रोग के नाम से भी जाना जाता है। ऊँटों में इस बीमारी का प्रभाव लंबी अवधि (तीन वर्ष या इससे ज्यादा) तक होने के कारण इसका नाम तिबरसा रोग दिया गया है। यह परजीवी रोग पशुओं के खून में पाये जाने वाले प्रोटोजोया ट्रीपैनोसोमा इवान्सी की वजह से होता है। यह रोग अफ्रीका, अरब और एशिया के ऊँटों में उच्च रुग्णता और मृत्यु दर का प्रमुख कारण है। ऊँटों पर इस रोग का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव मुख्य रूप से क्रोनिक (पुरानी) ट्रीपैनोसोमीएसिस से होता है जिसके कारण गर्भपात, बांझपन, कम दूध उत्पादन, वजन कम होना और दुर्बलता में वृद्धि होती है, परिणामस्वरूप जानवरों की काम करने की क्षमता और उत्पादकता में कमी हो जाती है।

रोग – संचारण/बीमारी का फैलाव

ऊँटों के खून में पाये जाने वाले ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया एक जानवर से दूसरे जानवर में पशुओं को काटने वाली मक्खी की विभिन्न प्रजातियों से फैलता है। मक्खियों की विभिन्न प्रजातियों जैसे टेबनस, स्टोमोक्सीस, लीपेरोसिया, हीमेटोपोटा और हीप्पोबोसका आदि तिबरसा रोग को यंत्रवत् (मेकेनीकली) फैलाते हैं। इन मक्खियों द्वारा संक्रमित जानवरों को काटने के बाद एक निश्चित समयावधि तक ही दूसरे जानवर को काटकर उसमें बीमारी के प्रोटोजोया को संचारित कर सकते हैं। इन मक्खियों की गतिविधि गीले मौसम के दौरान बहुत ज्यादा होती है और यह परजीवी के प्रसार में सहायक होता है। सर्रा रोग का प्रकोप अक्सर बरसात के मौसम के दौरान और बाद में अधिक होता है हालांकि इस रोग के छिटपुट मामले पूरे साल भर मिलते रहते हैं।

रोग की चिकित्सीय अभिव्यक्तियाँ

संक्रमित ऊँटों में, इस बीमारी के प्रारंभिक चरण में कोई उल्लेखनीय लक्षण नहीं दिखता है। हालांकि, जानवरों के परिधीय रक्त में परजीवी की उपस्थिति से होने वाले नुकसान के कारण बुखार, कमजोरी और दुबलापन धीरे–धीरे स्पष्ट रूप से बढ़ते जाते हैं और जानवर की स्थिति खराब होती जाती है। ऊँटों में यह रोग काफी लंबी अवधि (तीन से चार वर्षों) तक रह सकता है और दुर्बलता बढ़ने के कारण अंततः पशु की मौत हो जाती है। यह रोग आत्म सीमित चरित्र का होता है जिससे इसका आगे सीमित संक्रमण होता है। पशुओं के आराम देने, अच्छी तरह से खिलाने–पिलाने और अच्छा प्रबंधन से बीमारी से होने वाली हानि में 20 प्रतिशत कमी हो सकती है लेकिन पशु संक्रमण के वाहक बने रहते हैं। बीमारी के उन्नत चरण में संक्रमित ऊँट के शरीर के निचले भागों में सूजन होता है, बाल गिर जाते हैं, त्वचा के नीचे वसा में कमी और कूबड़ लापता होने लगता है। सभी विकसित मांसपेशी अपक्षय से पीड़ित (एट्रोफाइड) हो जाता है। रक्त में पेरासाइटिमिया के वृद्धि के कारण पशुओं में ग्लूकोज की कमी हो जाता है जिससे बेचैनी के लक्षण दिखते हैं जो रेबीज, सांप के काटने या लेप्टोस्पायरोसिस

के लक्षण के सदृश होता है। संक्रमण के इस स्थिति में रोग का निदान शायद ही अनुकूल होता है और अंततः पशु की मौत हो जाती है।

रोग जनन

रोग जनन विभिन्न तरीकों से हो सकता है जैसे (1) खून में ग्लूकोज के स्तर में अत्यधिक कमी से : खून में उपस्थित ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया रक्त शर्करा की बड़ी मात्रा का सेवन करता है जिसके परिणामस्वरूप खून में ग्लूकोज के स्तर में अत्यधिक कमी हो जाती है और लीवर सही तरीके से काम नहीं करता है। यह प्रोटोजोया द्वारा कार्बोहाइड्रेट चयापचय में गड़बड़ी होने के कारण ग्लूकोज के स्तर में अत्यधिक कमी होती है जो एड्रिनल ग्रंथि, अग्न्याशय और थायरॉयड ग्रंथि की खराबी के लिए जिम्मेदार है। प्रोटीन चयापचय में प्रत्यावर्तन के कारण रक्त के ग्लोबुलिन के स्तर में परिवर्तन होता है। (2) अनीमिया/रक्तहीनता : ट्रीपैनोसोमा इवान्सी जहर या प्रोटियोलिटिक एंजाइमों को छोड़ता है जिससे जानवरों में अत्यधिक रक्तहीनता होती है और उनकी मौत हो जाती है। खून में पोटैशियम के स्तर में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण लाल रक्तकण टूटने लगते हैं. (3) स्नायु संबंधी विकार : बीमारी गंभीर होने पर जानवरों में तंत्रिका (नर्वस) लक्षण प्रदर्शित होते हैं।

रोग निदान : डायग्नोसिस

ट्रीपैनोसोम्स परजीवी के प्रतिजनी परिवर्तन (*एंटीजेनिक वेरीयेशन*) के कारण आज तक तिबरसा रोग के किसी भी टीके का विकास नहीं हो पाया है। इस प्रकार, रोग के वाहक स्थिति को परिभाषित करने के लिए नैदानिक उपाय का विकास ही मौजूदा विकल्प है जिससे रोग नियंत्रण की निगरानी में बेहतर रूप से मदद हो सकती है। ऊँटों के खून में मौजूद ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया की पहचान रक्त का गीला धब्बा/सना हुआ रक्त धब्बा के सूक्ष्म (माइक्रोस्कॉपीकल) परीक्षण द्वारा किया जा सकता है। लेकिन रोग के निदान के लिए रक्त या लिम्फ नोड सामग्री की सूक्ष्म परीक्षण के ये तरीके अत्यधिक संवेदनशील नहीं हैं। चूहों में संदिग्ध रक्त के इंजेक्शन लगाने से तीन–चार दिनों के बाद चूहों के खून में ट्रीपैनोसोमा इवान्सी प्रोटोजोया को सूक्ष्म परीक्षण द्वारा देखा जा सकता है। लेकिन ऊँटों में अस्थिर पारासीटेमिया की वजह से माइक्रोस्कॉपीकल (गीला धब्बा/सना हुआ रक्त धब्बा) परीक्षा और जैविक परीक्षा (चूहों में संदिग्ध रक्त के इंजेक्शन द्वारा) 50–80 प्रतिशत तक संक्रमण पता लगाने के स्तर मे कमी आती है। इसी तरह एंजाइम से जुड़े सीरो जैव रासायनिक परीक्षण जैसे इलीजा, फ्लोरोसेंट एंटीबॉडी परीक्षण आदि की सीमाएं हैं जो ट्रीपैनोसोम्स के संक्रमण और इसकी दवा की सफलता या विफलता के बारे में व्याख्या करता है। आणविक परीक्षण जैसे पीसीआर द्वारा इस बीमारी की जांच अत्यधिक संवेदनशील और कारगर साबित हुई है। पीसीआर द्वारा इस बीमारी की जाँच को स्वर्ण मानक के रूप में स्थापित किया गया है लेकिन यह जाँच काफी खर्चीली और समय खपत करने वाली है।

रोग उपचार

ट्रीपैनोसोम्स द्वारा परिवर्तनशील सतह ग्लाइकोप्रोटीन (वीएसजी) व्यक्त कर अद्वितीय प्रतिजनी भिन्नता प्रदर्शित करना, इस रोग के खिलाफ टीका विकसित करने की कोशिश की विफलता के लिए पूर्णतः जिम्मेदार हैं। आज तक ट्रीपैनोसोम्स के किसी भी टीके का विकास नहीं होने के कारण ट्रिपैनोसोमियासिस का नियंत्रण अभी भी विवेकपूर्ण कीमोथेरेपी और रसायन–रोगनिरोध पर निर्भर करता है। हालांकि, कीमोथैरेपी और रसायन रोगनिरोध की वर्तमान

रणनीति की भी सीमाएँ हैं जैसे कम दवाओं की उपलब्धता, उपलब्ध ट्रीपैनोसोम्स की दवाओं के खिलाफ प्रतिरोध विकसित होना और दवाओं की विषाक्तता इत्यादि। ऊँटों में आमतौर पर निम्नलिखित दवाओं का इस्तेमाल ट्रिपैनोसोमियासिस/तिबरसा रोग के उपचार के लिए किया जाता है।

क) क्यूनापारामीन : यह दवा दो रूपों में उपलब्ध है–

1. **क्यूनापारामीन क्लोराइड :** यह दवा खून में धीरे धीरे स्रावित (रिलीज) होता है और रसायन–रोग निरोध के रूप में कार्य करता है।

2. **क्यूनापारामीन डायलमीथाइसलफेट :** यह दवा इंजेक्शन के बाद रक्त में जल्दी ही उपचार के स्तर तक पहुँच जाता है और चिकित्सकीय दवा के रूप में इस्तेमाल होता है। 3–5 मिलीग्राम/किग्रा शरीर भार के अनुसार त्वचा में इंजेक्शन के रूप में दिया जाता है।

क्यूनापारामीन क्लोराइड और क्यूनापारामीन डायलमीथाइसलफेट दवाओं का 1:1.5 के अनुपात में संयोजन प्रोसाल्ट के रूप में कार्य करता है। 5 मिलीग्राम/किग्रा शरीर भार के अनुसार त्वचा में इंजेक्शन के रूप में दिया जाता है।

ख) सुरामीन (नागानोल, मोरानील) इस दवा का इस्तेमाल तिबरसा रोग के उपचार के लिये 0.4–0.6 ग्राम/45 किग्रा शरीर भार के अनुसार नसों में इंजेक्शन के रूप में किया जाता है।

ग) आइसोमेटामीडियम क्लोराइड हायडरोक्लोरेट – रोग के उपचार के लिये 0.5–1 मिलीग्राम/किग्रा शरीर भार के अनुसार नसों में या मांस में और इसका उपयोग अधिक प्रभावी दवाओं के अभाव में करनी चाहिए।

रोग नियंत्रण

ऊँटों में तिबरसा रोग के नियंत्रण के लिये तीन तरह के दृष्टिकोण की जरूरत है :

क. जल्दी से रोग निदान के बाद प्रभावी दवा के साथ प्रभावित पशुओं का उपचार पूरी तरह से इलाज में मदद मिल सकती है।

ख. जानवरों को रोग के जोखिम होने पर रसायन रोग निरोध करना : बीमारी होने वाले स्थानिक क्षेत्रों में भारी वर्षा या अन्य कारणों से मक्खी की जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि होती है। ऐसे स्थानों पर पशुओं में मानसून के मौसम की शुरुआत में रसायन–रोगनिरोधी दवा दिया जाना चाहिए। रोगनिरोधी के रूप में क्यूनापारामीन डायलमीथाइसलफेट (पानी में घुलनशील) और क्यूनापारामीन क्लोराइड (पानी में अघुलनशील) का 16.7 प्रतिशत जलीय घोल का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

ग. मक्खी का नियंत्रण : रोग के फैलाव में मक्खियों के विभिन्न प्रजातियों जैसे टेबनस, स्टोमोक्सीस, लीपेरोसिया, हीमेटोपोटा और हीप्पोबोसका आदि सहायक है। इनका नियंत्रण भौतिक और रासायनिक तरीके से किया जा सकता है।

1. **भौतिक नियंत्रण** – पशुओं के शेड से गोबर, नम बिस्तर आदि को नियमित रूप से हटाना चाहिए। तेज धूप के दौरान जानवरों को नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि तेज धूप जानवरों को टेबनस और स्टोमोक्सीस जैसी मक्खियों को काटने के लिए सहायक होती है। खाइयों, जल निकायों आदि में उपजे झाड़ियों को साफ करना चाहिए इससे मक्खियों के प्रजनन को कम करने में मदद मिलती है।

2. **रासायनिक नियंत्रण** – मक्खियों की जनसंख्या बढ़ने के मौसम में जानवरों और आसपास के स्थानों पर कीटनाशक दवाओं का छिड़काव करना चाहिए। स्थिर पानी के ऊपरी सतह पर मिट्टी के तेल का छिड़काव करने से टेबनस मक्खियों को मारने में मदद मिलती है।

तिबरसा रोग से पीड़ित ऊँट

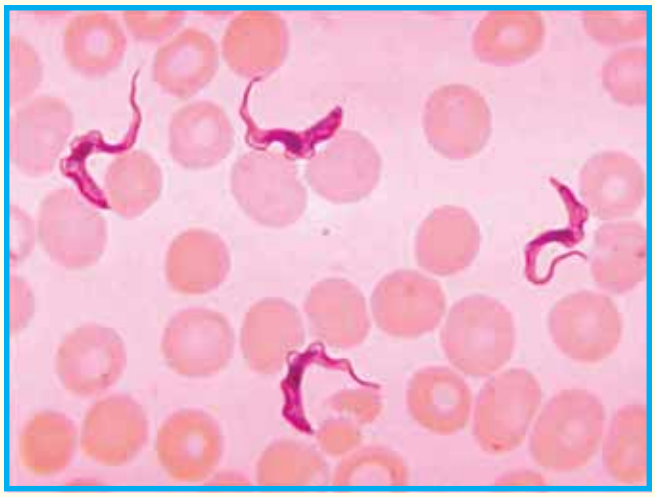

ऊँट के रक्त में *ट्रीपैनोसोमा इवान्सी*

ऊँट में *ट्रीपैनोसोमीएसिस* फैलाने वाली मक्खी

मैं दुनिया की सब भाषाओं की इज्जत करता हूँ पर मेरे देश में हिन्दी की इज्जत ना हो, यह मैं नहीं सह सकता।

– आचार्य विनोबा भावे

नयी दुनिया के ऊँट

श्याम सिंह दहिया, शिरीष नारनवरे, वैज्ञानिक एवं राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट को सामान्य नागरिक द्वारा एक विशालकाय व कूबड़ वाले स्तनपायी पशु के रूप में जाना जाता है। ऊँट प्रजाति में पशु को मुख्यतः दो वर्गों में बांटा गया है – पुरानी दुनिया के ऊँट – जिसमें एक कूबड़ व दो कूबड़ ऊँट आते हैं व नई दुनिया के ऊँट – जिनमें लामा, गुआनेको, अलपाका व विकुगना आते हैं। पुरानी दुनिया के ऊँट सामान्तयः आकर में बड़े व वजन में 450 से 650 किलो तक के होते हैं जबकि नयी दुनिया के ऊँट आकर में छोटे व वजन में 35 से 200 किलो तक होते हैं।

एक कूबड़ ऊँट पश्चिमी एशिया व पूर्वी अफ्रीका के गरम व शुष्क रेगिस्तान में पाए जाते हैं। हमारे देश में ये सबसे ज्यादा संख्या में राजस्थान प्रदेश के बीकानेर जिले में पाए जाते हैं। एक कूबड़ ऊँट को मुख्यतः माल ढोने, दूध, पर्यटन व बालों के लिए पाला जाता हैं। दो कूबड़ ऊँट मध्य व पूर्वी एशिया में पाए जाते हैं व भारत में दो कूबड़ ऊँट लेह–लद्दाख क्षेत्र में पाए जाते हैं। दो कूबड़ ऊँट को मुख्यतः माल ढोने, पर्यटन व बालों के लिए पाला जाता हैं। विश्व संरक्षण यूनियन द्वारा दो कूबड़ ऊँट को संरक्षित घोषित किया गया है।

नयी दुनिया के ऊँटों को दो वर्गो में बाँटा गया है जिनमें की प्रत्येक वर्ग में दो जातिया हैं– (अ) लामाःलामा व गुआनेको (ब) विकुगनाःविकुगना व अल्पाका। लामा व अलपाका को मनुष्य द्वारा पालतू बनाया गया है किन्तु गुआनेको व विकुगना अभी भी जंगल में ही जीवनयापन करते हैं। अपनी लम्बी गर्दन को बचाने के लिए सभी नयी दुनिया के ऊँटों की गर्दन पर मोटी त्वचा होती हैं।

लामा (चित्र 1) दक्षिण अमेरिका में पाला जाने वाला एक पशु है जिसे उसके मांस व माल ढोने की क्षमता के लिए पाला जाता हैं। लामा का वजन तकरीबन 130 से 200 किलो तक होता है। इनके कान लम्बे व थोड़े अंदर की तरफ मुड़े हुए 'केले' के आकार के होते हैं। लामा की पीठ पर कोई कूबड़ नहीं होता हैं। लामा के पैर पतले व खुर पुरानी दुनिया के ऊँटों की तुलना में अलग व ज्यादा ऊपर होते हैं। इसकी पूँछ छोटी व इसके शरीर के बाल लम्बे, ऊनी व मुलायम होते हैं। मादा लामा करीब एक साल की उम्र में वयस्क होती हैं जबकि नर लामा तीन साल की उम्र तक वयस्क हो पाते हैं तथा मादा लामा का गर्भकाल तकरीबन 11.5 महीने (350 दिन) का होता हैं। लामा के नवजात बच्चे को 'क्रिआ' कहते हैं व जन्म के समय इसका

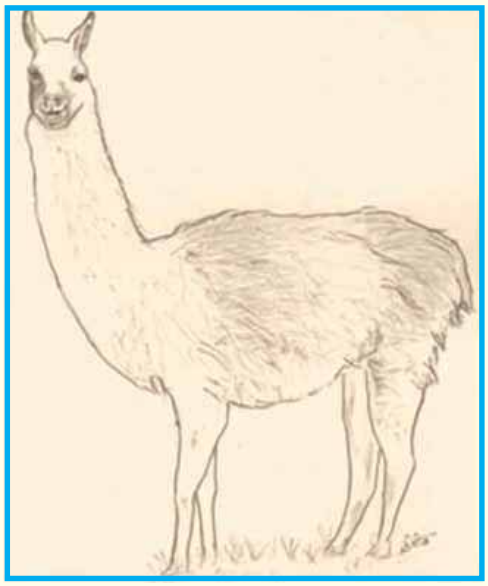

चित्र 1. लामा

वजन 9–14 किलो तक हो सकता हैं। लामा के दूध में गाय और बकरी के दूध की अपेक्षा वसा व नमक कम तथा फॉस्फोरस व कैल्शियम खनिज ज्यादा होते हैं। मादा लामा एक बार में केवल 60 मिलीलीटर दूध ही देती हैं जिसकी वजह से क्रिआ (cria) को अपनी पोषक खुराक को पूरा करने के लिए बार–बार दूध पीना पड़ता हैं। लामा अपने आस–पास उगने वाले विभिन्न पौधों व कम पानी पर गुजारा कर सकते हैं। ये अपने वजन का 25 से 30 प्रतिशत तक का भार 10–15 किलोमीटर तक एक दिन में ले जा सकते हैं, इनकी यही खूबियाँ इन्हें पहाड़ी परिवेश के लिए उपयोगी साबित करती हैं। लामा केवल माल ढोने के लिए ही उपयोगी नहीं बल्कि इनका मांस मनुष्य के खाने के लिए, इनकी खाल से विभिन्न प्रकार के उपयोगी सामान व इनके बालों से रस्सियाँ, कम्बल व कपड़े भी बनाये जाते हैं। लामा का गोबर इंधन के रूप में भी काम में लाया जाता हैं।

गुआनेको (चित्र 2) दक्षिण अमेरिका में पाया जाने वाला एक जानवर हैं जो कि 3.5 फीट व वजन में करीब 90 किलो का होता हैं। गुआनेको को पालतू लामा का वंशज माना जाता हैं किन्तु लामा की तुलना में गुआनेको का चेहरा

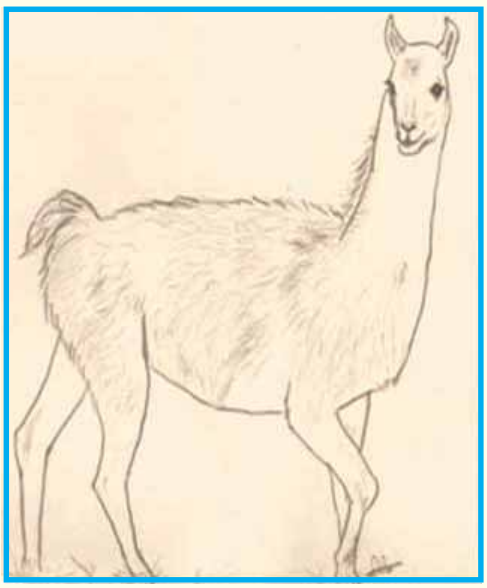

चित्र 2. गुआनेको

स्लेटी रंग का व शरीर हल्के से गहरे भूरे रंग के व नीचे की तरफ सफेद रंग का होता हैं। इसके कान छोटे व सीधे होते हैं। गुआनेको तकरीबन 20 से 25 साल तक जीता हैं व पहाड़ी शेर ही उनके एकमात्र परभक्षी है। नर गुआनेको बहुत अच्छे तैराक होने के साथ ही पहाड़ी क्षेत्र में 55 किलोमीटर तक की गति से भागने की क्षमता भी रखते हैं। गुआनेको की एक विशेषता होती हैं कि वे अपनी जरूरत के सभी पोषक तत्व अपने आस–पास के कैक्टस व उन पर लगी ओस को चाट कर पूरा कर लेते हैं। नवम्बर से फरवरी के दौरान संसर्ग पश्चात् साढ़े ग्यारह महीने के बाद मादा नवजात गुआनेको को जन्म देती हैं। नवजात गुआनेको को चुलेंगो (*chulengo*) कहा जाता हैं। चुलेंगो जन्म के तुरंत बाद ही चलना शुरू कर देते हैं। गुआनेको को विशेष तौर पर उनके मुलायम व गर्म बालों के लिए जाना जाता है जिसकी तुलना विश्व की बेहतरीन पश्मीना से की जाती है व इसकी कीमती परिधानों में अपनी एक खास पहचान हैं।

विकुगना (चित्र 3) दक्षिण अमेरिका में केन्द्रीय पठार के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में पाए जाते हैं। वे मूलतः पेरू, उत्तरी–पश्चिम अर्जेंटीना, बोलिविया और उत्तरी चिली के रहने वाले हैं। विकुगना पेरू का राष्ट्रीय पशु हैं। ऐसा माना जाता हैं कि ये पालतू अलपाका के वंशज हैं। पहले इसका शिकार बहुत बड़ी तादाद में किया जाता था किन्तु 1974 में इसे विलुप्त होने से बचाने के लिए कानूनी संरक्षण प्रदान किया गया। स्वभाव में विकुगना गुआनेको के जैसे ही हैं यद्यपि इनका चेहरा उनसे छोटा व कान गुआनेको से लम्बे होते हैं। विकुगना का वजन 35 से 65 किलो तक हो सकता हैं। मार्च से अप्रैल में संसर्ग पश्चात् ग्यारह महीने के बाद मादा नवजात बच्चे को जन्म देती हैं। विकुगना की ऊन अत्यंत ऊँचे दर्जे की व बहुमूल्य होती हैं क्योंकि इसे तीन सालों में केवल एक बार काटा जाता हैं और इसके लिए विकुगना को जंगल से पकड़ कर लाना पड़ता हैं। विकुगना के पीठ पर गहरे पीले भूरे रंग के तथा गले व सीने पर लम्बे सफेद बाल होते हैं। विकुगना की ऊन विश्व में उपलब्ध सभी ऊनों से महीन होती हैं जिसका व्यास केवल बारह माइक्रोमीटर का

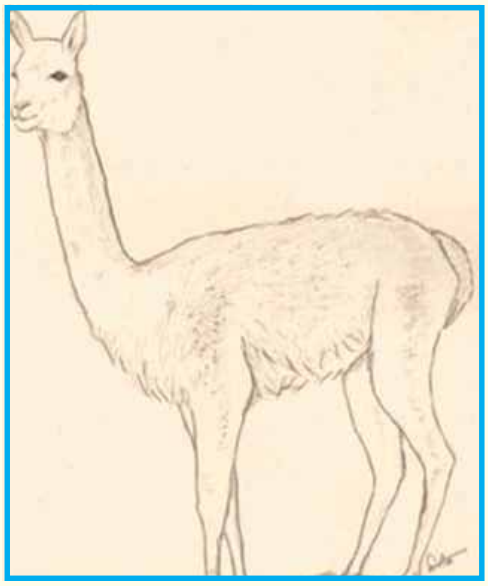

चित्र 3. विकुगना

होता है। इंका रोयल्टी के अलावा इनका वध करना व सामाजिक उपयोग करना सरकार के नियम विरुद्ध है। वर्तमान में, पेरू सरकार द्वारा मंजूर किया गया चाकू (chacu) द्वारा ही विकुगना की ऊन से बने उत्पादों की बिक्री होती हैं, इससे यह सुनिश्चित होता है कि विकुगना को सही तरीके से पकड़ कर, जीवित अवस्था में ऊन काटने के बाद जंगल में वापिस छोड़ दिया गया है और अगले दो सालों में उसी जानवर की ऊन नहीं काटी जाएगी। सरकार द्वारा इस पूरी प्रक्रिया को सुनियोजित ढंग से चलाने से यह भी सुनिश्चित होता है कि इसका ज्यादा से ज्यादा फायदा इससे जुड़े गाँव वासियों तक पहुंचे।

अल्पाका (चित्र 4) दक्षिण अमेरिका में पाया जाने वाला ऊँट प्रजाति का एक सदस्य हैं। देखने में यह एक छोटा लामा जैसा ही प्रतीत होता है किन्तु इनको माल ढोने के लिए नहीं बल्कि इनके बालों के लिए पाला गया था। अल्पाका के बालों को ऊन की तरह ही गूंथ कर विभिन्न प्रकार के सामान तैयार किये जाते हैं। अल्पाका के बाल 52 से भी ज्यादा प्राकृतिक रंगों में पाये जाते हैं। अल्पाका आकार में विकुगना से बड़े लेकिन नए ऊँट जगत के अन्य जानवरों से छोटे होते हैं। अल्पाका को पूरी तरह से उनके बालों व मांस के लिए जाना जाता है। अल्पाका और लामा को सफलतापूर्वक प्रजनन कराया गया व उनसे पैदा होने वाले बच्चे को हुँरिजों (huarizo) कहते हैं जिनको की उनकी अनोखी ऊन के लिए जाना जाता है। नर अल्पाका 1–3 साल की उम्र में तथा मादा अल्पाका 1–2 साल में वयस्क होते हैं। मादा अल्पाका का गर्भकाल 345.15 दिनों का होता है, प्रायः एक बार में एक ही बच्चे (जिसे क्रिआ/ *cria* कहा जाता है) का जन्म होता है। क्रिआ के जन्म के लगभग दो सप्ताह बाद ही मादा अल्पाका प्रजनन के लिए तैयार हो जाती है। अल्पाका की एक खास आदत होती है कि वे अपना गोबर एक जगह इकठ्ठा करते हैं जहाँ पर वो चरते नहीं, इनकी इस आदत से अंदरूनी परजीवियों के फैलने पर नियंत्रण बना रहता है।

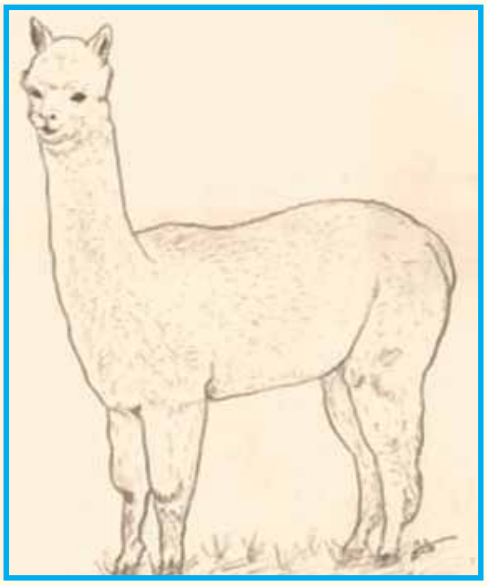

चित्र 4. अल्पाका

स्त्रोतः

http://en.wikipedia.org/wiki/Llama, http://animals.nationalgeographic.com/animals/mammals/llama/, http://en.wikipedia.org/wiki/Alpaca, http://en.wikipedia.org/wiki/Guanaco, http://en.wikipedia.org/wiki/Vicuna

मर्स : मनुष्य और ऊँटों के लिए एक उभरता खतरा

शिरीष नारनवरे, वैज्ञानिक, अविनाश कुमार शर्मा, अनुसंधान सहयोगी, श्याम सिंह दहिया, वैज्ञानिक एवं एफ.सी. टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

मध्य पूर्व रेस्पिरेटरी सिन्ड्रोम (मिडिल ईस्ट रेस्पिरेटरी सिन्ड्रोम 'मर्स') बीमारी कोरोना वायरस के द्वारा होती है। मनुष्यों में यह बीमारी श्वसन प्रणाली (फेंफड़ों और श्वास नलियों) को प्रभावित करती है। अधिकांश मर्स रोगियों में बुखार, खांसी और सांस की तकलीफ के लक्षण के साथ गंभीर श्वसन बीमारी होती है, इस बीमारी से पीड़ित लगभग 30 प्रतिशत मनुष्यों की मृत्यु हो जाती है।

सर्वप्रथम यह बीमारी सितम्बर, 2012 में सऊदी अरब में रिपोर्ट की गई। अब तक मर्स के सभी मामले अरब प्रायद्वीप और आस–पास के देशों जैसे– बहरीन, इराक, ईरान, इसराइल, पश्चिमी तट, गाजा और जॉर्डन, कुवैत, लेबनान, ओमान, कतर, सऊदी अरब, सीरिया, संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) और यमन में पाये गए हैं।

यह वायरस संक्रमित व्यक्ति के नजदीकी संपर्क में आने वाले व्यक्तियों तथा देखभाल करने वाले व्यक्तियों में फैलने की संभावना अधिक रहती है। मर्स किसी को भी प्रभावित कर सकता है। यह बीमारी एक साल की छोटी उम्र से लेकर 94 साल की उम्र के व्यक्तियों को प्रभावित कर सकता है।

मर्स से जुड़े मामले स्थानीय रूप से सऊदी अरब, जॉर्डन, कतर, ओमान, कुवैत, लेबनान, यमन, कैनरी द्वीप और संयुक्त अरब अमीरात में सूचित किये गए हैं। इस कोरोना वायरस की उत्तरी और पूर्वी अफ्रीका और अरब महाद्वीप में फैलने की व्यापक संभावना है। इन सूचित देशों में यात्रा के कारण फ्रांस, जर्मनी, इटली, ट्यूनीशिया, मलेशिया, फिलीपींस, ग्रीस, मिस्र, संयुक्त राज्य अमेरिका (यू.एस.ए.), नीदरलैण्ड और ब्रिटेन में भी इस रोग का स्थानीय प्रसारण हो चुका है।

बीमारी का महामारी विज्ञान बताता है कि इसमें कई प्रकार से पशुओं द्वारा मनुष्यों में प्रसारण होता है और कभी–कभी द्वितीयक प्रसारण एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य में भी हो सकता है। मिस्र, सऊदी अरब और अन्य सूचित देशों में यात्रा के कारण भी कोई व्यक्ति संक्रमित हो सकता है। इन मध्य पूर्वी देशों में पशुधन का ज्यादा आवागमन भी ज़ूनोटिक प्रसारण का कारण होता है।

लक्षण और जटिलताएं – ज्यादात्तर लोगों में मर्स कोरोना वायरस संक्रमण की पुष्टि बुखार, खांसी, सांस की तकलीफ के साथ गंभीर श्वसन बीमारी के लक्षणों के रूप में होती है। कुछ लोगों को जठरांत्र के लक्षण के साथ दस्त और उल्टी भी होती है। मर्स से संक्रमित कुछ लोगों में गंभीर जटिलताएं जैसे निमोनिया और गुर्दे की विफलता के लक्षण भी प्रकट होते हैं। कुछ लोगों में हल्के लक्षण जैसे जुकाम होता है और कभी–कभी कुछ लोगों में लक्षण प्रकट भी नहीं होते, ऐसे लोग जल्दी स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर लेते हैं।

जिन व्यक्तियों को पूर्व से ही मुधमेह, कैंसर और पुरानी फेंफड़ों की बीमारी, हृदय की बीमारी और गुर्दों की बीमारी है और व्यक्ति जिनकी प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर हैं, ऐसे व्यक्तियों के संक्रमित होने पर यह बीमारी काफी गंभीर हो सकती है। मर्स कोरोना वायरस संक्रमण के लगभग 2–14 दिनों बाद लक्षण प्रकट करता है।

मर्स से संक्रमित होने वाले संभावित व्यक्ति

1. **अरब प्रायद्वीप से हाल ही में आए यात्री** – अगर हाल ही में अरब प्रायद्वीप व निकट देशों की यात्रा के 14 दिन के भीतर अगर खांसी या श्वास की तकलीफ या बुखार के लक्षण प्रकट हो तो स्वास्थ्य सेवा प्रदाता की मदद लेनी चाहिए और अपनी हाल ही की यात्राओं का उल्लेख भी करना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को घर पर ही रहना चाहिए तथा कार्य स्थल और स्कूल से दूरी बना लेनी चाहिए और साथ ही भविष्य की यात्राओं को भी टालना चाहिए ताकि दूसरों में बीमारी के संक्रमण की संभावना कम हो जाए।

2. **अरब प्रायद्वीप की यात्रा करने वाले बीमार यात्री से निकट संपर्क** – यदि आप अरब प्रायद्वीप की हाल ही में यात्रा करने वाले व्यक्ति के संपर्क में आए हो जिसे यात्रा के बाद से 100 डिग्री फेरनहाइट या अधिक बुखार हो और श्वास लेने में तकलीफ, कफ, खांसी, सांस की बीमारी, ठंड लगना, शरीर में दर्द, गले में खराश, सिरदर्द, दस्त, उल्टी, नाक बहना आदि लक्षणों से पीड़ित हो तो उसके संपर्क के बाद के 14 दिन तक अपने स्वास्थ्य की लगातार निगरानी करनी चाहिए।

3. **स्वास्थ्य देखभाल पेशेवर** – अब तक आधे से ज्यादा मामलों में यह पाया गया है कि मर्स का प्रसार स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं से जुड़े हुए व्यक्तियों में होने का खतरा सबसे अधिक है। स्वास्थ्य देखभाल पेशेवर मर्स कोरोना वायरस के मरीज का उपचार करने से संक्रमित हो सकते हैं साथ ही मर्स कोरोना वायरस के मरीजों के संबंधित अथवा मिलने आने वाले व्यक्ति भी यदि नजदीकी सम्पर्क में आए तो संक्रमित हो सकते हैं।

4. **हज यात्रा** – अब तक दो मनुष्यों में सऊदी अरब हज यात्रा के बाद मर्स के लक्षण विकसित हुए हैं, जबकि इन दो अपुष्ट मामलों के अलावा हज से संबंधित मर्स कोरोना वायरस का संक्रमण का कोई भी दूसरा मामला सामने नहीं आया। इसके अलावा हर देशों में अब हज यात्रा के बाद व्यापक परीक्षण हो रहे हैं। जिससे यह पाया गया है कि मर्स के प्रसारण और निर्यात में हज यात्रा का किसी भी तरह से सीधा संबंध नहीं है।

ऊँटों में मर्स

जॉर्डन के जाँच कर्ताओं ने जॉर्डन के उन क्षेत्रों के ऊँटों, बकरी, भेड़ व गाय की सिरोलाजिकल जाँच के परिणामों को प्रकाशित किया जहाँ मनुष्यों में मर्स मामलों की पहचान हुई थी। मर्स कोरोना वायरस के खिलाफ एंटीबॉडी सभी ऊँट सीरा में पाई गई, वहीं अन्य पशुधन प्रजातियों के सभी नमूने नकारात्मक थे। इस अनुसंधान के आधार पर इस रोग के प्रसार में ऊँटों की भूमिका होने की प्रबल संभावनाएँ जताई जा रही है।

मनुष्यों के अलावा मर्स कोरोना वायरस ऊँटों में कतर, ओमान, मिस्र और सऊदी अरब व चमगादड़ों में सऊदी अरब में पाया गया है। कई अन्य देशों में ऊँटों में मर्स कोरोना वायरस के परीक्षण सकारात्मक पाए गए जो यह दर्शाता है कि ऊँट इन देशों में पहले से संक्रमित है, या

उससे मिलते–जुलते वायरस से संक्रमित है। यह सम्भावना है कि मनुष्य भी इन ऊँटों के संपर्क में आने से संक्रमित हो सकते हैं। इस दिशा में अनुसंधान की आवश्यकता है कि मनुष्य, ऊँटों, चमगादड़ और अन्य जानवरों के संपर्क में आने से मर्स कोरोना वायरस से संक्रमित हो सकता है। हाल ही के नवीनतम अनुसंधानों से पता चला है कि ऊँट मर्स कोरोना वायरस संक्रमण का सीधा स्त्रोत है!

ऊँटों में लक्षण : संक्रमित ऊँटों में श्वास लेने में तकलीफ, सांस की बीमारी, नाक में पानी बहना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। मर्स कोरोना वायरस मुख्यतः युवा ऊँटों को प्रभावित करता है।

सावधानियाँ

1. जब प्रभावित फार्म स्रोत क्षेत्र का भ्रमण करना हो तो उचित सावधानियाँ बरतनी चाहिए। हाथ सही से धुले होने चाहिए। बीमार पशुओं से परहेज करना चाहिए। ऐसे भोजन से भी परहेज करना चाहिए जो पशु स्राव से संक्रमित होने की संभावना हो। भोजन को पकाने में हमेशा स्वच्छता का ध्यान रखना चाहिए।

2. प्रभावित क्षेत्र के बाहर के देशों को उच्च स्तर की निगरानी रखनी होगी (उन यात्री और मजदूरों पर जो मध्य पूर्व की यात्रा से लौट रहे हो)। डब्ल्यू एच.ओ. की स्वास्थ्य संबंधी दिशा–निर्देशों को संक्रमण नियंत्रण प्रक्रियाओं के साथ लागू करना चाहिए। डब्ल्यू एच ओ ने सदस्य देशों से अनुरोध किया है कि वे सभी पुष्टि व संभावित मामलों की सूचना व जानकारी उसे प्रदान करें।

रोकथाम – वर्तमान में मर्स कोरोना वायरस संक्रमण को रोकने के लिए कोई टीका नहीं है। सी.डी.सी. नियमित रूप से लोगों को श्वास तकलीफ से बचने के लिए रोजमर्रा के निवारक उपाय करने की सलाह दे रही है। साबुन और पानी से 20 सैकण्ड तक हाथ धोएं। साबुन और पानी उपलबध न हो तो एल्कोहल आधारित कीटाणुनाशक से हाथ धोएं। जब भी खांसी या छींक आए, तो नाक और मुंह को टिश्यू पेपर से ढके और टिश्यू पेपर को कचरा पात्र में डालें। बिना धुले हाथों से आँखों, नाक और मुँह को स्पर्श करने से बचें। बीमार व्यक्ति के साथ चुंबन, साथ खाना खाने व बर्तन उपयोग करने से बचें। खिलौने व दरवाजों के हत्थों को साफ व कीटाणु रहित रखें।

उपचार – मर्स कोरोना वायरस संक्रमण के लिए कोई विशेष एंटीवायरल उपचार नहीं है। मर्स से पीड़ित व्यक्ति की चिकित्सकीय देखभाल, लक्षणों से राहत में मदद कर सकती है। गंभीर मामलों में आंतरिक अंगों की विशेष चिकित्सकीय देखभाल करनी होती है।

इस बीमारी के जनता के स्वास्थ्य पर सम्भावित खतरे तथा ऊँटों में इसके प्रसार की मुख्य भूमिका को देखते हुए भारत में भी ऊँटों के टोलों, मेलों और विपणन प्रणाली पर विशेष निगरानी रखने की जरूरत है।

राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा हैं।

–महात्मा गांधी

ऊँट : संख्या में खतरनाक गिरावट से विलुप्तता की ओर अग्रसर

सज्जन सिंह, प्रधान वैज्ञानिक एवं राधाकृष्ण, वरिष्ठ तकनीकी सहायक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

मरूधरा के अतीत में आजीविका का साधन, आवागमन का एक मात्र सहारा व 'रेगिस्तान का जहाज' कहलाने वाला यह जीव आज अपनी पहचान बनाए रखने के लिए प्रयासरत है। 2010 में दुनिया में लगभग 14 मिलियन ऊँट थे जिसमें लगभग 90 प्रतिशत एक कूबड़ीय ऊँट थे। इनकी अधिक संख्या सोमालिया देश की घुमन्तु जाति के पास थी। इथोपिया जैसे देश में खाद्य पदार्थों व पेय में ऊँट का मांस व दुग्ध की मात्रा अधिक पायी जाती है। इस प्रकार की उपयोगिता रखने वाले पशु की संख्या जहां अन्य देशों में बढ़ रही है वहीं भारत में इनकी संख्या एक खतरनाक स्तर तक गिर गई थी।

भारत में 53.40 प्रतिशत क्षेत्र शुष्क व अर्धशुष्क है जहां का पारिस्थितिकी तन्त्र अति भंगुर है। यहां तापमान की अति पराकाष्ठा से बढ़ती आर्द्रता तथा अनियमित वर्षा के कारण जहां अन्य पशु प्रजातियों को विचलित किया है, ऊँट भी इसके प्रभाव से अछूता नहीं रहा है। 2007 की गणना के हिसाब से पिछले 50 वर्षों में ऊँटों की संख्या 1.0 मिलियन से घटकर 0.52 मिलियन रह गयी थी। वैसे तो पशुओं की संगणना वर्ष 1919 से प्रारम्भ हुई थी तथा प्रत्येक 5 साल बाद एक बार आयोजित की जा रही है। संगणना के सर्वे से प्राप्त डाटा का उपयोग योजनाओं में नीति निर्धारण व शोध गतिविधियों के लिए होता है। 2012 की संगणना 19 वीं पशुधन संगणना थी। 19 वीं पशुधन संगणना जो वर्ष 2012 में की गई, में पशुधन जनसंख्या में 2007 की संगणना के मुकाबले कुल पशु संख्या में 3.30 प्रतिशत की गिरावट दिखाई गयी है। कुछ प्रदेशों में जैसे गुजरात (15.36 प्रतिशत), उत्तरप्रदेश (14.01 प्रतिशत), असम (10.77 प्रतिशत), पंजाब (9.57 प्रतिशत), बिहार (8.56 प्रतिशत), सिक्किम (7.96 प्रतिशत), मेघालय (7.41 प्रतिशत) तथा छत्तीसगढ़ (4.34 प्रतिशत) में पशुधन की संख्या में बढ़ोतरी दर्ज हुई है। दुधारू पशुओं की संख्या में भी 4.51 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है। इस संगणना का विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि जहां पशुधन संख्या में वृद्धि हुई वहीं भेड़ों में 9.07 प्रतिशत, बकरियों में 3.82 प्रतिशत,सूअरों में 7.54 प्रतिशत, गधों में 27.22 प्रतिशत तथा ऊँटों में 22.48 प्रतिशत की कमी पिछली (2007) संगणना के मुकाबले दर्शाई गई है।

भारत सरकार द्वारा संगणना आधारित आंकड़ों का अवलोकन यह दर्शाता है कि शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्र में जीविका व रोजगार में अहम योगदान रखने वाले पशु, एक चिंतनीय विषय है। ऊँट की अहमियत और योगदान की पहचान कर राजस्थान सरकार का यह प्रयास ऊँट को राजकीय पशु घोषित किया है। शायद राजस्थान सरकार का यह प्रयास ऊँटों की घटती संख्या में स्थिरता ला सके। राजस्थान सरकार ऊँट का वध रोकने व गैर कानूनी व्यापार रोकने के लिए भी एक कानून बनाने की दिशा में काम कर रही है। चरागाह जहां ऊँट स्वतंत्र रूप से विचरण कर अपना भोजन ग्रहण करते थे, की सरकारी तंत्र द्वारा तारबन्दी व खेती उपयोगिता के लिए इन क्षेत्रों में ऊँट विचरण पर पाबंदी ने ऊँट पालन को महंगा बना दिया। किसान लाभ–हानि के आधार पर ऊँट को पालने में असहाय महसूस करता है। जिस प्रकार से गायों के रखरखाव के लिए गौशालाओं की व्यवस्था का जाल पूरे देश में फैला हुआ है, उसी आधार पर ऊँट शालाओं का गठन हों तथा इन संस्थाओं को स्वावलम्बी व आत्म निर्भर बनाने की तरफ ध्यान देकर इन्हें स्थायित्व प्रदान करना होगा।

राष्ट्रीय स्तर पर दीर्घकालिक योजनाएं तैयार कर ऊँट की वाहक शक्ति व स्वस्थ दुग्ध उत्पादन कर ऊँट को अर्थक्षम बनाकर ही इसकी घटती संख्या पर काबू पाया जा सकता है।

पशुओं से प्राप्त उत्पाद की बाजार में बिक्री व्यवस्था

राजेश कुमार सावल, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

पशुओं से कई प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते हैं जिन्हें बाजार में आर्थिक लाभ के लिए बेचा जाता है इसका ज्ञान होना अति आवश्यक है कि आज के दौर में इन उत्पादों की बिक्री व्यवस्था कैसी है व किन कारणों से हैं अतः यह भी विचार का विषय है कि यह व्यवस्था कैसी हो ताकि उत्पाद से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त हो। पशुओं से मिलने वाले उत्पाद में दूध व दूध के उत्पाद, पशुधन खाद, ऊन, मांस एवं पशुओं की खाल (चमड़ा) मुख्य हैं।

दूध व दूध से बने उत्पादों की बिक्री व्यवस्था :– ग्रामीण क्षेत्रों में कुछ लोग दूध या तो बिचोलियों को बेचते है या स्वयं बाजार में बेचते हैं जो शहरों से कम दूरी पर अपने दुधारू पशुओं को पालते हैं। कुछ किसान स्वयं दूध में से क्रीम निकलवा कर बेचते हैं तो कुछ बिचोलिए से यह कार्य करवाते हैं। कुछ लोग डेरियों को दूध बेचते हैं तो कुछ मिठाई बनाने वाली दुकानों को बेचते हैं। दूध से निकलने वाली क्रीम भी घी बनाने वाले खरीदते हैं एवं कुछ क्रीम बिस्कुट व बेकरी में बनाए जाने वाले अन्य उत्पाद में इस्तेमाल होते हैं। डेयरी में यह दूध पास्तुरीकृत कर बेचा जाता है। दूध से बने उत्पादों में मुख्य घी बनाकर मक्खन व मावा बना कर बेचते हैं। डेयरी में दूध की कीमत उसमें पाई जाने वाली वसा पर निर्भर करती है। दूध से बनी मिठाई वाले दूध की कीमत उस में से निकलने वाले मावा के वजन पर देते है। वैसे ही घी की मात्रा पर क्रीम की कीमत आंकी जाती है। डेयरियों में दूध सिंगल टोन या डबल टोन का बना कर व पास्तुरीकृत करके प्लास्टिक की थैलियों में डाल कर बेचते हैं। जिसमें सब खर्चो को जोड़ कर ही उसकी कीमत तय की जाती है। कुछ लोग दूध की मिठाई स्वयं या कारीगरों से बनवाते हैं व कुछ ठेके पर बनवाते हैं जो बने उत्पाद की कीमत तय करता है।

जानवरों की बिक्री व्यवस्था :– जानवर भी पशु पालन व्यवसाय के उत्पाद है। मुख्यतः भेड़–बकरी ही मांस के लिए ही बेची जाती है। कुछ जानवर दूसरे पशु पालकों को भी बेचे जाते हैं। इसकी कीमत निर्भर करती है उसकी उम्र, वजन एवं स्वास्थ्य पर कि नर है या मादा, बुढ़े एवं बीमार व उम्र से छोटे रह गए, से जानवरों की कीमत कम आंकी जाती है। इनमें वयस्क जानवरों एक साल के करीब की कीमत सबसे अधिक आंकी जाती है। नर, मादा के बनिस्पत अधिक महंगें बिकते हैं। इसके पश्चात् जानवर कैसे बेचे गए? वह उनकी कीमत तय करते हैं। जैसे एक–एक कर छोटे समूह या बड़े समूह में बेचे गए। यह भी कीमत निश्चित करता है कि जानवर या तो स्वयं नजदीकी शहर में ले जाकर बेचे या बिचोलियों को बेचें या छोटे समूह में कसाइयों ने गांवों से खरीदीं। इसके अतिरिक्त बकरी की कीमत भेड़ की तुलना में अधिक आंकी जाती है क्योंकि उसके मांस को लोग अधिक पंसद करते हैं।

खाद/गोबर की बिक्री व्यवस्था :– प्रायः मरुस्थलीय क्षेत्रों में ईंधन की कमी के कारण या तो गाय/भैंस के गोबर को कडे बना कर सुखाते हैं व भोजन बनाने के लिए जलाते हैं। जिससे उन्हें अतिरिक्त ईंधन नहीं जुटाना पड़ता। परन्तु अधिकतर लोग गोबर को सुखाकर ईंट भट्टे वाले को ईंधन के लिए बेचते हैं जो करीब 50 रूपये प्रति क्विन्टल बिक जाता है। गोबर/मींगनी की बिक्री खाद के रूप में भी की जाती है। जागरूक पशु पालक गोबर से जीवाणु जनित खाद बनाकर स्वयं भी इस्तेमाल करते हैं व कुछ उसे बेचते भी हैं, वह गोबर की खाद के बनिस्पत महंगी बिकती है।

ऊन की बिक्री व्यवस्था :– प्रायः देखा गया है कि भेडों की ऊन साल में तीन बार कतरी जाती है। कुछ पशु पालक खड़े जानवरों को ऊन के लिए बेचते हैं यानि स्वयं नहीं कतरते हैं पर एक निश्चित रकम पर रेवड़ की ऊन कतरवाते हैं। इसमे नग/प्रति जानवर या प्रति भेड़ कितनी ऊन उतरी, इसका कोई हिसाब नहीं होता। कुछ लोग ऊन ठेके पर कतरवाते हैं, इनसे ऊन से मिलने वाली आय कम होती है क्योंकि ऊन कतरने के लिए धन देना पड़ता है। परन्तु कुछ भेड़ पालक स्वयं ही ऊन कतरते हैं। ऊन की कीमत निर्भर करती है कि वह बिचोलियों को बेची गई या स्वयं ऊन मंडी में बेची और मंडी में ऊन का भाव क्या था? कुछ भेड़ पालक स्वयं ही ऊन का वर्गीकरण कर उसे बेचते हैं जिससे उन्हें अधिक कीमत मिलती है। गांवों में ऊन भी चरखे पर काती जाती है। कुछ ऊन के उत्पाद बना कर बेचते हैं जिससे उन्हें ऊन की अधिक कीमत मिलती है। बकरियों के बाल भी साल में एक बार कतरे जाते हैं। इससे बनी रस्सी, चारपाई बनाने में काम आती है। अतः कुछ इस उत्पाद को भी बेचते हैं।

मांस एवं इससे बने उत्पादों की बिक्री :– यह कार्य प्रायः कसाई ही करते हैं, कुछ स्वयं ही पशुओं को अपनी दुकानों पर वध करके उनसे मिलने वाले मांस को बेचते हैं। परन्तु कुछ ठेके पर यह कार्य करवाते हैं जिससे बिकने वाले मांस की कीमत कम हो जाती है। कुछ मांस के कई उत्पाद बना कर बेचते हैं। जिससे बने उत्पाद की कीमत और भी बढ़ जाती हैं।

खाल की बिक्री व्यवस्था :– प्रायः कसाई खटीकों को कच्ची खाले ही बेच देते हैं। कुछ खाल का प्राथमिक उपचार स्वयं ही करते है परन्तु कुछ खटीक ही खालों को उपचारित व साफ कर, उन्हें चमड़े की वस्तुएँ बनाने के लिए तैयार करते हैं जिससे उनकी कीमत में इजाफा होता है।

आज की खुली बाजार व्यवस्था में पशुओं से प्राप्त उत्पाद की बिक्री व्यवस्था से अधिक मुनाफा पशु पालक को कैसे मिले ? यह सभी को सोचना होगा। क्योंकि इनमें पशु पालक ही सबसे कमजोर कड़ी है तथा उसे सबसे अधिक नुकसान सहना पड़ता है क्योंकि पशु पालक की आमदनी निम्नलिखित पर निर्भर करती है :–

1. चारे की कीमत पर
2. घरेलू स्तर पर बनाए गए चारे की कीमत पर या फैक्ट्री से बने चारे दाना पर
3. साल के किस समय मौसम में जानवर बेचे गए
4. चराई क्षेत्र में स्रोत्रों की कमी
5. मंडी में ऊन का भाव
6. गांव से शहर की दूरी
7. बिचोलियों द्वारा दूध की खरीद
8. गांव में दूध/दूध के उत्पादों की कम मांग
9. बिचोलियों द्वारा गांव से जानवरों की खरीद
10. दूध व दूध से बने उत्पादों के लिए गांव में रेफ्रीजरेशन की सुविधा
11. दूध व दूध से उत्पादों को बेचने के लिए ट्रांसपोर्ट की सुविधा
12. निष्क्रमण के दौरान आर्थिक सुरक्षा
13. गांवों में दूरभाष की कमी

अगर पशु पालक छोटे–छोटे समूहों में संगठित हो कर अपने उत्पादों की बिक्री करें तो इससे उन्हें आर्थिक लाभ हो सकता है तथा वह आज की इस खुली बाजार व्यवस्था में अधिक धन कमा सकते हैं एवं उत्पादों की बिक्री पर स्वयं नियंत्रण रख सकते हैं।

ऊँटों से मनुष्यों में फैलने वाली बीमारियाँ और उनकी रोकथाम

राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

आमतौर पर ऐसा देखा गया है कि ऊँट पालक और किसान इस बात से अनजान रहते हैं कि ऊँटों की कई बीमारियाँ मनुष्यों में भी फैल सकती हैं। रायका, ऊँट दुग्ध दोहक, ऊँटों की देखभाल व सार–संभाल में लगे लोग और ऊँटों के दूध व मांस को खाने वालों में ऐसे रोगों के फैलने का खतरा ज्यादा रहता है। प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य आम जनता और खासकर उष्ट्र पालन में लगे लोगों के बीच बीमार ऊँटों से फैलने वाले ऐसे छुआछूत के रोग जिन्हें अंग्रेजी में 'जुनोटिक डिजीज' कहा जाता है, के बारे में जागरूकता फैलाना है।

ऊँटों से फैलने वाली संक्रामक बीमारियों को उनके फैलने के तरीकों के आधार पर निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा जा सकता है :–

1. हवा, एरोसोल, ड्रॉपलेट व सीधे संपर्क से फैलने वाली बीमारियाँ

कैमल पॉक्स : यह रोग आर्थोपॉक्स नामक विषाणु से होता है जो मनुष्यों में स्माल पॉक्स रोग उत्पन्न करने वाले वैरिओला वायरस से मिलता–जुलता होता है। कैमल पॉक्स मध्य पूर्व, एशिया और अफ्रीका के ऊँटों में आमतौर पर पाया जाता है। रोग के वायरस बीमार पशुओं के दूध, सलाइवा, आँखों के स्राव व नासिका स्राव में विद्यमान रहते हैं और इन संक्रमित पदार्थों के सीधे संपर्क में आने या कीटों द्वारा फैलाए जाने पर ऊँट बीमारी से ग्रस्त हो सकते हैं। कम उम्र के ऊँट में बीमारी ज्यादा गंभीर रूप ले लेती है, पर वयस्क ऊँटों में बीमारी ज्यादा नुकसानदायक नहीं होती। बीमार ऊँटों से सीधे संपर्क में आने वाले, खासकर दूध निकालने वाले इस रोग के शिकार हो सकते हैं। इस रोग में हाथों या शरीर के अन्य भागों में छोटे–छोटे दर्ददायक फफोले बन जाते हैं।

ऊँटों में नियमित टीकाकरण द्वारा इस रोग का बचाव किया जा सकता है। यदि किसी ऊँट में छोटे–छोटे दाने पहले सिर और तत्पश्चात् पैर व शरीर के अन्य भाग में नजर आएं और ऊँट को बुखार हो तो तुरंत डॉक्टरी जाँच करवाएँ। ऐसे बीमार पशुओं को अन्य पशुओं से अलग कर दें तथा उनसे सीधे संपर्क में आने से बचें। ऐसे पशुओं को छूने के पश्चात् हाथ को साबुन से अच्छी तरह से धोएं।

खारिश (मैंज) : मैंज ऊँटों की एक प्रमुख बीमारी है जो सार्कोप्टिश स्कैबियाई नामक माईट (सूक्ष्म कीट) से होती है। इस बीमारी में शरीर के बाल गिर जाते हैं, चमड़ी मोटी हो जाती है तथा बीमार पशु धीरे–धीरे कमजोर होता जाता है। सीधे संपर्क में आने पर यह बीमारी मनुष्यों में भी फैल सकती है। मनुष्य के हाथ, उँगलियों के बीच के भाग, कलाई, कुहनी व शरीर के अन्य भागों में खारिश हो सकती है। ऊँट की सवारी करने वालों में रोग के लक्षण जाँघों में दिखाई दे सकते हैं।

इस बीमारी को मनुष्यों में फैलने से रोकने के लिए यह आवश्यक है कि बीमार ऊँट व मनुष्यों का ईलाज एक साथ किया जाए। ऊँटों में आइवरमेक्टीन नामक दवा इस रोग में

काफी प्रभावकारी पायी गई है। मनुष्यों में हैक्साक्लोरो साइक्लो हेक्सेन व अन्य कई दवाइयाँ उपयोग में लाई जा सकती है।

ऐंथ्रेक्स : यह रोग वैसिलस ऐंथ्रेसिस नामक बैक्टीरिया से होता है जो कि गोपशु, बकरियों, ऊँटों व अन्य पालतू पशुओं को भी प्रभावित कर सकता है। संक्रमित पशुओं की अचानक मौत हो जाती है। कभी–कभी मृत्यु के पश्चात् रक्त मिश्रित स्राव शरीर के विभिन्न छिद्रों यथा–मलद्वार, नासिका, योनीद्वार से प्रकट हो सकते हैं। ऐसे स्रावों में रोगों के जीवाणु भी पाए जाते हैं। संक्रमित पदार्थों के संपर्क में आने पर मनुष्यों में हाथों या शरीर के अन्य भागों में लाल फफोले व सूज़न उत्पन्न हो सकती है। कभी–कभी फेंफड़ों में भी संक्रमण हो सकता है और व्यक्ति की मौत भी हो सकती है। हालांकि ऊँटों में ऐंथ्रेक्स की बीमारी कम होती है, पर यह काफी खतरनाक बीमारी है। अतः ऐसे ऊँट जिनमें इस बीमारी के लक्षण दिखाई दें, तो उनकी मृत्यु के पश्चात् मृत शरीर के निष्पादन में सावधानी बरतनी चाहिए।

एम.ई.आर.एस.कोरोना वायरस इंफेक्शन : यह बीमारी ऊँटों के लिए ज्यादा खतरनाक नहीं है। इसमें बीमार ऊँट को थोड़ी सांस लेने में तकलीफ होती है, नासिकाओं से स्राव आता है और फेंफड़ों में हल्की सूज़न आ जाती है। परंतु मनुष्यों में यह बीमारी जानलेवा हो सकती है। हाल के दिनों में मनुष्यों में इस बीमारी का पता कई देशों यथा–सऊदी अरब, मलेशिया, जॉर्डन, कतर, कुवैत, आमन, बांग्लादेश, इटली, जर्मनी व इंग्लैण्ड में लगने के पश्चात् विश्व स्वास्थ्य ने हाई अलर्ट जारी कर दिया है। ऊँट इस वायरस को मनुष्यों तक फैलाते हैं। मनुष्यों के बीच इसका संक्रमण तेजी से एक दूसरे के बीच फैलता है। ऊँट पालक, स्लाउटर हाउस वर्कर और पशु चिकित्सकों में इसके संक्रमण की संभावना ज्यादा होती है। बीमार पशु व मनुष्य के नाक और आँखों के स्राव में इसका वायरस पाया जाता है। मूत्र, मल, दूध व मांस में भी इसके वायरस पाए जाते हैं। अतः ऊँटों में यदि सांस संबंधी बीमारी के लक्षण दिखाई दें तो सावधानी बरतते हुए साफ–सफाई का ख्याल रखा जाना चाहिए। नासिका और आँखों के स्राव को छूने के पश्चात् हाथ अच्छी तरह साबुन से धो लें। मुँह–नाक पर पट्टी लगाकर ऐसे पशुओं के साथ काम करें।

2. बीमार पशुओं के दूध से फैलने वाली बीमारियाँ

यदि कैमल मिल्क को पीने से पहले अच्छी तरह उबाला या पास्तुरीकृत न किया जाए तो कई तरह की बीमारियों के फैलने का खतरा बना रहता है। यथा :–

ब्रुसेल्लोसिस : इस बीमारी से पशुओं में गर्भपात हो जाता है। गर्भपात के पश्चात् पेशाब, गर्भपात बच्चे, प्लैसेंटा आदि में बीमारी के जीवाणु काफी संख्या में रहते हैं। अतः ऐसे संक्रमित पदार्थों को छूने से बचना चाहिए। यदि किसी ऊँटनी में गर्भपात हो गया हो तो ऐसे बच्चे या ऊँटनी के शरीर से निकले स्राव का निष्पादन अच्छी तरह से करना चाहिए तथा उन्हें छूने के पश्चात् साबुन से हाथ धो लें। मनुष्यों में इस बीमारी से शरीर में दर्द, सिर दर्द और नुपंसकता हो सकती है। गर्भवती स्त्रियों में गर्भपात हो सकता है।

तपेदिक : ऊँटों में तपेदिक माइक्रोबैक्टीरियम वोभिस द्वारा होता है। बीमार ऊँट धीरे–धीरे कमजोर होते जाते हैं तथा कभी–कभी सांस की बीमारी के लक्षण दिखाई दे सकते हैं। बीमार ऊँटनियों के दूध व नासिका स्राव में इसके जीवाणु पाए जाते हैं। अतः दूध को अच्छी तरह उबालकर पिएं। साफ–सफाई का ध्यान रखें तथा समय समय पर ऊँटों की जाँच करवाएं।

स्कारलेट फीवर : यह बीमारी स्ट्रेप्टोकोकस पायोजनीज नामक बैक्टीरिया द्वारा पैदा किए टॉक्सिन (जहर) से होती है। यह जीवाणु ऊँटनियों में थनैला रोग पैदा करता है। मनुष्यों में यह बीमारी दूध से फैल सकती है। बच्चों में यह बीमारी गंभीर रूप भी ले सकती है। इसमें बुखार, साँस संबंधी तकलीफ व त्वचा में लाली दिखाई देती है।

दस्त : ऊँटों में दस्त करने वाले कारक जैसे क्रिप्टोस्पोरिडियम, ई.कोलाई व रोटा वायरस मनुष्यों में भी संक्रमण पैदा कर सकता है तथा दस्त या पेचिस के लक्षण पैदा कर सकता है। बच्चों, बुढ़ों या एड्स से संक्रमित व्यक्तियों में यह बीमारी गंभीर रूप से सकती है। इसके अलावा क्यू फीवर, डिप्थीरिया व टायफाइड का संक्रमण भी ऊँटों से मनुष्यों में फैल सकता है।

3. बीमार पशुओं के मांस से फैलने वाली बीमारियाँ

भारत में बहुत कम लोग ऊँट का मांस खाते हैं पर कई देशों में यह काफी प्रचलित है। यदि मांस बीमार पशु का हो या संक्रमित हो गया हो तो उसे खाने से निम्नलिखित बीमारियाँ मनुष्यों के बीच फैल सकती है :–

सिस्टीक हाईडेटिडोसिस : यह एक फीता कृमि के लार्वे से उत्पन्न रोग है। कुत्तो में यह फीता कृमि पाया जाता है। कुत्तो के मल में उसके अण्डे निकलते हैं जिसे यदि ऊँट अपने चारे के साथ खा लें तो उसका लार्वा शरीर के विभिन्न अंगों यथा– फेंफड़े, जिगर, तिल्ली और हृदय में विकसित हो जाते हैं। यदि मनुष्य इन अंगों के मांस बिना अच्छी तरह पकाए खा ले तो बीमारी उसमें भी फैल सकती है। अतः कभी भी कच्चा मांस नहीं खाना चाहिए। ऊँट के मांस की जांच अनुभवी या अधिकृत विशेषज्ञों द्वारा करवाकर ही उसे बिक्री के लिए बाजार भेजना चाहिए।

टॉक्सोप्लाजमोसिस : बिल्ली इस बीमारी को ऊँटों तक फैलाती हैं। संक्रमित ऊँटों के मांस में इसके कारक पाए जाते हैं। संक्रमित पशु का मांस बिना पकाए खाने से यह बीमारी मनुष्यों में फैल सकती है। स्त्रियों में इसकी वजह से गर्भपात हो सकता है।

ऊपर वर्णित बातों से यह स्पष्ट है कि ऊँट कई बीमारियों को मनुष्यों तक पहुँचा सकते हैं। ऊँट पालक, ऊँट के दूध व मांस के उपभोक्ता व ऊँटों के नजदीक संपर्क में आने वाले लोग इन बीमारियों के शिकार हो सकते हैं। साफ–सफाई का ध्यान रखने, समय पर बीमार ऊँटों की जांच/इलाज कराने व अच्छी तरह से उबाले या पकाए गए दूध व मांस के उपयोग से इन बीमारियों से बचा जा सकता है।

> शिक्षा एक ऐसे वातावरण की बुनियाद है, जिसमें मनुष्य मैत्री एवं समानता के धरातल पर मिलते हैं।
>
> **–मौलाना अबुल कलाम आजाद**

हर्बलिज्म अर्थात् जड़ी–बूटी : एक प्रभावी चिकित्सा

एफ.सी. टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, ए.के. नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक, श्याम सिंह दहिया, वैज्ञानिक, नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी एवं अविनाश शर्मा, अनुसंधान सहयोगी

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ड्रग शब्द डच शब्द 'ड्रूग' (droog), फ्रेंच शब्द ड्रोग (Drogue) से आया है, जिसका अर्थ 'सूखा पेड़' है। हर्बलिज्म, वनस्पतियों और वनस्पति सारों के उपयोग पर आधारित एक पारंपरिक औषधीय चिकित्सा पद्धति है। इसे आयुर्वेदिक दवा, चिकित्सकीय वैद्यकी, जड़ी–बूटी औषध, वनस्पति शास्त्र और पादपोपचार के रूप में भी जाना जाता है। जड़ी–बूटी या वानस्पतिक दवा में कभी–कभी फफूंदीय या कवकीय तथा मधुमक्खी उत्पादों, साथ ही खनिज, शंख–सीप और कुछ प्राणी अंगों को भी शामिल कर लिया जाता है। प्राकृतिक स्रोतों से व्युत्पन्न दवाओं के अध्ययन को भेषज–अभिज्ञान कहते हैं।

विभिन्न वनस्पतियां ऐसे तत्वों का संश्लेषण करती हैं जो प्राणियों के स्वास्थ्य के रखरखाव के लिए उपयोगी होते हैं, अनेक गौण चयापचयी होते हैं, जिनमें से कम से कम 12,000 अलग–थलग कर दिए गये हैं – अनुमान के अनुसार यह संख्या कुल का 10 प्रतिशत से भी कम है। कई मामलों में, एल्कालोइड्स जैसे सार पदार्थ सूक्ष्म जीवों, कीड़े–मकोड़ों और शाकाहारी प्राणियों की लूट–खसोट से पेड़–पौधे के सुरक्षा तंत्र के रूप में भी काम करते हैं। भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए मनुष्य द्वारा उपयोग में लाये जाने वाली अनेकों वनस्पतियों और मसालों में उपयोगी औषधीय यौगिक हुआ करते हैं।

नुस्खे की दवा की तरह, अनेक जड़ी–बूटियों के प्रतिकूल प्रभाव की संभावना रहती है। इसके अलावा, मिलावट, अनुपयुक्त सूत्रीकरण या वनस्पति और दवा की अंतःक्रिया के बारे में समझ की कमी से प्रतिकूल प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं जो कभी–कभी जीवन के लिए खतरा या घातक बन सकती हैं।

अक्सर देसी चिकित्सक दावा करते हैं कि उन्होंने बीमार पशुओं की खाद्य प्राथमिकता में बदलाव लाकर, कुछ ऐसी कड़वी वनस्पति कुतरते देखकर सीख हासिल की है, जिन्हें वे आमतौर पर पसंद नहीं करते हैं। कार्यक्षेत्र के जीव वैज्ञानिकों ने चिंपांजी, मुर्गी, भेड़ और तितली जैसी विभिन्न प्रजातियों के पर्यवेक्षण के आधार पर इसकी पुष्टि करने वाले प्रमाण पेश किये हैं। तराई गोरिल्ला, अफरामोमुम मेलेग्वेटा के फल से अपने आहार का 90 प्रतिशत ग्रहण करते हैं, यह अदरक के पौधे का एक नजदीकी पौधा है, जो एक शक्तिशाली सूक्ष्मजीवनिवारक है और यह स्पष्टतया शिंगेलोसिस तथा उस जैसे संक्रामकों को दूर रखता है।

ओहिओ वेस्लेयन युनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने पाया कि कुछ पक्षी अपने बच्चों को नुकसानकारी जीवाणुओं से बचाने के लिए सूक्ष्मजीवनिवारक तत्व से भरपूर सामग्री से घोसले बनाया करते हैं।

बीमार पशु टेनिन और एल्कालोइड जैसे गौण चयापचयी से भरपूर पौधों की तलाश किया करते हैं। चूंकि इन पादप रसायनों में प्रायः एंटी–वायरल (वाइरसरोधी), एंटी–बैक्टीरियल (जीवाणुनाशक), एंटी–फंगल (कवकरोधी) और एंटी–

हेल्मिन्थिक (कृमिरोधी) तत्व हुआ करते हैं, जो जंगल में रहने वाले पशुओं की आत्म–चिकित्सा के लिए एक विश्वसनीय मामला हो सकता है।

कुछ जानवरों में विशेष पाचन प्रणाली होती है, खासकर कुछ वनस्पतियों के विषैले तत्वों से निपटने के मामले में उनका पाचन तंत्र अनुकूलित होता है. जैसे कि कोअला, युक्लिप्टस की पत्तियों और शाखाओं पर रह सकते हैं, यह पेड़ अधिकांश प्राणियों के लिए खतरनाक है। कोई पेड़ या पौधा किसी खास पशु के लिए अगर हानिरहित हो, फिर भी मनुष्यों के खाने के लिए सुरक्षित नहीं भी हो सकता है। देसी जनजातियों की औषधि से संबंधित लोगों द्वारा इन खोजों का पारंपरिक संग्रह किया गया, जो सुरक्षा की सूचना और सावधानियां अगली पीढ़ियों को बताते गए।

खाद्य–जनक रोगाणुओं के खतरे की रोकथाम के लिए भोजन में जड़ी–बूटी तथा मसालों का उपयोग विकसित हुआ, उष्णकटिबंधीय जलवायु में जहां रोगाणुओं की भरमार होती है, वहां व्यंजन अधिक मसालेदार होते हैं। इसके अलावा, जो मसाले सबसे अधिक शक्तिशाली सूक्ष्मजीवरोधी होते हैं, उनका चयन किया जाता है। सब्जियां मांस से कम मसालेदार होती हैं, क्योंकि शायद वे अधिक सूक्ष्मजीवरोधी होती हैं।

इतिहास–लिखित रिकॉर्ड के अनुसार, जड़ी–बूटियों के अध्ययन का इतिहास 5,000 साल पीछे सुमेरियाइयों तक जाता है, जिन्होंने कल्पवृक्ष, अजमाद और अजवायन जैसे पौधों के सुस्थापित औषधीय उपयोग का वर्णन किया है। भारतीय आयुर्वेद ने हल्दी जैसी जड़ी–बूटी का उपयोग संभवतः ई.पू. 1900 में शुरू किया। आयुर्वेद में प्रयोग की जाने वाली अन्य अनेक जड़ी–बूटियों और खनिजों के बारे में चरक तथा सुश्रुत जैसे प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों ने ई.पू. पहली सहस्राब्दी के दौरान वर्णन किया। ई.पू. छठी सदी में सुश्रुत ने सुश्रुत संहिता में 700 औषधीय वनस्पतियों, खनिज से तैयार होने वाली 64 दवाओं और प्राणी स्रोतों से बनने वाली 57 औषधियों का वर्णन किया। जड़ी–बूटी पर पहली चीनी पुस्तक, शेंनोंग बेंकाओ जिंग संभवतः ई.पू. 2700 में संकलित हुई, इस पुस्तक में 365 औषधीय वनस्पतियों और उनके उपयोग की सूची है, इसमें मा–हुआंग नामक झाड़ी भी शामिल है, जिसने आधुनिक चिकित्सा को एफेड्राइन दवा से परिचय करवाया।

सुरक्षित यूनानी तथा रोमन औषधीय प्रथाओं ने बाद में पश्चिमी औषधि को पद्धति प्रदान की। हिप्पोक्रेट्स ने ताजा हवा, विश्राम और शुद्ध आहार के साथ कुछ सरल जड़ी–बूटी संबंधी दवाओं के उपयोग की सलाह दी, दूसरी ओर गलेन ने वानस्पतिक, प्राणी तथा खनिज सामग्रियों सहित दवाओं के मिश्रण की बड़ी खुराकों की सिफारिश की। यूनानी चिकित्सक ने औषधीय पौधों के गुणों और उनके उपयोग के बारे में प्रथम यूरोपीय ग्रंथ डी मटेरिया मेडिका को संकलित किया। ई.सं. पहली सदी में, डायोस्कोराइड्स ने 500 से अधिक पौधों के बारे में एक सार–संग्रह लिखा, जो 17 वीं सदी में भी एक आधिकारिक संदर्भ बना रहा।

बीमारिस्तान नाम से ख्यात चिकित्सा विद्यालय फारस और अरब देशों के बीच मध्ययुगीन इस्लामी दुनिया में 9वीं सदी से दिखने शुरू हुए, जो उस जमाने के मध्ययुगीन यूरोप की तुलना में कहीं अधिक उन्नत थे।

विश्वविद्यालय प्रणाली के साथ–साथ, लोक औषधि का पनपना जारी रहा, पंद्रहवीं सदी में मुद्रण के आविष्कार के बाद जड़ी–बूटियों से संबंधित सैकड़ों प्रकाशन से मध्य युग

के बाद सदियों के लिए जड़ी–बूटियों के महत्व के निरंतर जारी रहने का पता चलता है। सबसे पहले प्रकाशित होने वाली पुस्तकों में कुछ है थियोफ्रास्ट्स की हिस्टोरिया प्लांटारम, डायोस्कोराइड्स की डी मटेरिया मेडिका, एविसेना की कैनन ऑफ मेडिसिन और एवेनजोअर की फार्मेकोपीया।

पंद्रहवीं, सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियां जड़ी–बूटियों के लिए महान युग रहीं, उनमें से अनेक लैटिन और यूनानी के बजाय अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओँ में सबसे पहले उपलब्ध हुईं। 1526 में, अंग्रेजी में पहली जड़ी–बूटी संबंधी अनाम लेखक की पुस्तक ग्रेटे हर्बल प्रकाशित हुई।

हालांकि, दूसरी सहस्त्राब्दी ने उपचारात्मक प्रभावों के स्रोतों के रूप में वनस्पतियों द्वारा स्थापित सर्वश्रेष्ठ स्थिति में हल्का क्षरण देखना शुरू किया, काली मौत से इसकी शुरुआत हुई, जिसे रोक पाने में उस समय की चार तत्व चिकित्सा प्रणाली शक्तिहीन साबित हुई। एक शताब्दी बाद, परासेल्सस ने सक्रिय रासायनिक दवाओं (जैसे कि आर्सेनिक, तांबा सल्फेट, लौह, पारा और गंधक) के इस्तेमाल की शुरुआत की। उपदंश (सिफलिस) के तत्काल उपचार की जरुरत को देखते हुए इनके जहरीले प्रभाव के बावजूद इन्हें स्वीकार किया गया। रसायन शास्त्र और अन्य शारीरिक विज्ञानों के तेज विकास से बीसवीं सदी की परंपरागत प्रणाली के रूप में रसायनोपचार–रासायनिक दवा–का दबदबा बढ़ता गया।

आधुनिक मानव समाज में भूमिका

- गैर–औद्योगिक समाजों में बीमारी के इलाज के लिए जड़ी बूटियों का उपयोग लगभग असीम है। बीसवीं सदी के अंत में हर्बल औषधि का नित्य प्रयोग बहुत सारी परंपराओं पर हावी हो गया।
- ग्रीक और रोमन स्रोत पर आधारित 'शास्त्रीय' हर्बल चिकित्सा पद्धति।
- विभिन्न दक्षिण एशियाई देशों से सिद्ध और आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति।
- चीनी हर्बल मेडिसीन (चीनी वनस्पति शास्त्र)।
- पारंपरिक अफ्रीकी औषधि।
- यूनानी–हकीम औषधि।
- शामैनिक हर्बलिज्म : दक्षिण अमेरिकी और हिमालय क्षेत्रों से होने वाली अधिकांशतः आपूर्ति संबंधी सभी सूचना के लिए एक वाक्यांश
- देशी अमेरिकी औषधि

मौजूदा समय में चिकित्सकों के लिए उपलब्ध अफीम, एस्पिरिन, डिजिटलिज (हत्पत्री) और कुनैन समेत कई औषधियों का एक लंबा इतिहास है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का अनुमान है कि मौजूदा समय में दुनिया की 80 प्रतिशत आबादी कुछ हद तक प्राथमिक स्वास्थ्य संबंधी देखभाल के लिए हर्बल दवा का उपयोग करती है। दुनिया के विकासशील देशों में प्रयोग के अलावा, हर्बल औषधियों को औद्योगिक देशों में प्राकृतिक चिकित्साशास्त्रियों द्वारा प्रयोग किया जाता है।

हाल के वर्षों में, पौधों से प्राप्त की गयीं औषधियों और पूरक आहार का उपयोग और इनके खोज में बहुत तेजी आयी है। औषध विज्ञानी, अणुजीव वैज्ञानिक, वनस्पतिशास्त्री और प्राकृतिक–उत्पादों के रसायनशास्त्री पृथ्वी भर में पादप रसायनों की तलाश कर रहे हैं, ताकि विभिन्न बीमारियों के इलाज को विकसित किया जा सके। दरअसल, विश्व

स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, संयुक्त राज्य अमेरिका में इस्तेमाल होने वाली लगभग 25 प्रतिशत आधुनिक दवाओं को पौधों से विकसित किया गया है।

आज व्यापक रूप से उपयोग होने वाली आधुनिक दवाओं को उच्च पौधों के 120 सक्रिय यौगिकों में से विच्छेदित किया गया है, इनमें से 80 प्रतिशत ने इनके आधुनिक चिकित्साविधान संबंधी उपयोग और पारंपरिक उपयोग, जिनसे इन्हें विकसित किया है, के बीच सकारात्मक सहसंबंध को सिद्ध किया है। दुनिया भर के पौधों की दो–तिहाई से अधिक प्रजातियां–जिनमें से अनुमानित रूप से कम से कम 35,000 औषधीय गुणों से भरपूर हैं, ये विकासशील देशों से आती हैं। आधुनिक भेषज कोश के कम से कम 7000 चिकित्सकीय यौगिक पौधों से प्राप्त किए गए हैं। इसके कुछ उदाहरण डालिया की जड़ों से इंयुलिन, सिनकोना से कुनैन, अफीम से मोरफिन और कौडीन तथा हत्पत्री से डिगोक्सिन है।

आधुनिक चिकित्सक जो फाइटोथेरापिस्ट कहलाते हैं – जड़ी–बूटियों की प्रक्रिया को इसके रासायनिक घटक के साथ व्याख्या करने की कोशिश करते है। ज्यादातर आधुनिक वैद्य मानते हैं कि आपात स्थितियों में जहां समय मायने रखता है, भेषज (फार्मास्यूटिकल्स) प्रभावी होता हैं, इसका उदाहरण वहां हो सकता है, जहां किसी मरीज को एक दिल का बड़ा दौरा पड़ा हो, जिसमें जान को खतरा है, बहरहाल उनका दावा है कि मरीज की बीमारी को रोकने में जड़ी–बूटियां लंबी अवधि में मददगार हो सकती है, और इसके अलावा, ये पोषण और प्रतिरोधक क्षमता भी प्रदान करती हैं, भेषज में जिसका अभाव होता है, वे अपने लक्ष्य को इलाज के साथ–साथ बीमारी की रोकथाम में देखते हैं।

वैद्य पौधों के विभिन्न हिस्सों, जैसे जड़ और पत्तों से निकाले गए अर्क का उपयोग करते हैं, लेकिन कोई विशेष पादप रसायन विच्छेदित नहीं करते। भेषज दवा का आधार एकल उपादान के पक्ष में होता है जिसकी खुराक कहीं अधिक आसानी से प्रमाणित कर सकते हैं, एकल यौगिकों का पेटेंट कराना भी संभव है, ताकि धन कमाया जाए. आमतौर पर वैद्य एकल सक्रिय संघटक की अवधारणा को खारिज कर देते हैं, उनका तर्क है कि जड़ी बूटियों में विभिन्न तरह के पादप रसायन विद्यमान होते हैं जो परस्पर को प्रभावित कर उपचारात्मक प्रभाव में वृद्धि करते हैं तथा विषाक्तता को कम करते हैं।

आक न अैळो काटिये, नाम न घालिये घाव।
रोहिड़ै रा काटणिया, थारो दरगा होसी न्याव।।
अकारण आक को नहीं काटना चाहिए, नीम के चोट नहीं पहुँचानी चाहिए और रोहिड़ै जैसे उत्तम लकड़ी के वृक्ष को काटने वाले तेरा न्याय तो ईश्वर के दरबार में होगा। मरुभूमि के लिए वृक्षों का विशेष महत्व है।

केन्द्रीय सेवा (आचरण) नियमावली : एक दृष्टि में

विजय कुमार पान्डे, प्रशासनिक अधिकारी
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

प्रत्येक सरकारी सेवक से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वह न सिर्फ अपनी सरकारी सेवा के निष्पादन के दौरान बल्कि अपने व्यक्तिगत जीवन में भी एक अच्छे नागरिक की तरह आचार–व्यवहार करें। सरकारी सेवक से की गई अपेक्षाएं एवं कार्य–कलापों के नियमन के लिये एक नियमावली के रूप में केन्द्रीय सेवाएँ (आचरण) नियमावली, 1964 जारी की गई हैं। ये नियम न सिर्फ केन्द्र सरकार के सभी विभागों के सेवकों पर लागू होते हैं वरन् केन्द्र सरकार के विभिन्न विभागों के पूर्ण प्रशासकीय नियन्त्रण में कार्यरत निगमों एवं स्वायत्तशासी निकायों में कार्यरत सेवकों पर भी लागू होते हैं।

इन नियमों के अन्तर्गत सरकारी सेवक

- हमेशा पूर्ण ईमानदारी बनाये रखकर अपने कार्य के प्रति पूर्ण समर्पण रखेगा और ऐसा कोई कृत्य नहीं करेगा जो एक सरकारी सेवक के लिये अनुपयुक्त/अशोभनीय हों।

यह सुनिश्चित करने के लिये कि उसके अधीन कार्यरत सभी सरकारी सेवक पूर्ण ईमानदारी एवं कार्य के प्रति पूर्ण समर्पण बनाए रखें, सभी सम्भव कदम उठायेगा।

उस अवस्था को छोड़कर जबकि वह अपने वरिष्ठ के अर्न्तगत कार्य कर रहा हो, अपने सरकारी कार्यों के निष्पादन या उसे दी गई शक्तियों का प्रयोग करते समय वह अपने सर्वोत्तम निर्णय से भिन्न कार्य नहीं करेगा।

वरिष्ठ द्वारा सामान्यतः लिखित में निर्देश दिये जावेंगे एवं जहां तक संभव हो मौखिक आदेशों से बचा जाना चाहिए। अपरिहार्य परिस्थिति में वरिष्ठ द्वारा उसे दिये गये मौखिक निर्देशों को, जितना शीघ्र संभव हो, लिखित में पुष्टिकरण लेगा एवं वरिष्ठ का यह दायित्व होगा कि वह अपने निर्देशों की लिखित में पुष्टि करें।

अपने सरकारी कार्यों के निष्पादन के दौरान अशिष्टता/अभद्र तरीके से पेश नहीं आएगा एवं उसे सौंपे गये कार्य के निष्पादन में देरी करने के तौर–तरीके नहीं अपनाएगा या जान–बूझकर विलम्ब नहीं करेगा।

विवाह के लिये नियत आयु, पर्यावरण को बचाने, सांस्कृतिक विरासत एवं वन्य जीवन को बचाने एवं महिलाओं के विरूद्ध होने वाले अपराधों को रोकने के लिये सरकार द्वारा जारी नीतियों का हमेशा पालन करेगा।

किसी महिला के कार्य स्थल पर उसके यौन उत्पीड़न के किसी भी कृत्य में शामिल नहीं होगा। वह सरकारी सेवक जो कार्य–स्थल का प्रभारी हो, कार्य स्थल पर किसी महिला के यौन उत्पीड़न को रोकने के लिये सभी कदम उठाएगा। (नियम–3)

- परोक्ष या अपरोक्ष रूप से अपने परिवार के किसी सदस्य को किसी कम्पनी या फर्म में रोजगार दिलाने में अपने पद या प्रभाव का उपयोग नहीं करेगा।

'क' वर्ग के सरकारी सेवक अपने किसी आश्रित को किसी ऐसी कम्पनी/फर्म जिससे वह सरकारी लेनदेन/कार्य करता हो, में रोजगार की अनुमति सरकार की बिना पूर्व स्वीकृति के नहीं देगा।

उसे जैसे ही यह जानकारी मिलती है कि उसके परिवार के सदस्य ने किसी कम्पनी या फर्म में रोजगार स्वीकार किया हैं, इसकी सूचना नियत प्राधिकारी को देगा एवं यह भी बतायेगा कि उसके, उस कम्पनी/फर्म से कोई सरकारी लेनदेन/कार्य के सम्बन्ध हैं या कभी भी थे। (नियम–4)

- किसी राजनीतिक दल या संगठन जो राजनीति से जुड़ा हो, का न तो सदस्य होगा न ही किसी भी तरह से सहायता करेगा और न ही किसी राजनैतिक आन्दोलन या गतिविधि में भाग लेगा। (नियम–5)
- ऐसी किसी समिति/संस्था/संघ से नहीं जुड़ेगा, जिसके उद्देश्य या कार्य कलाप देश की स्वतन्त्रता/प्रभुसत्ता और अखण्डता या सार्वजनिक व्यवस्था या नैतिकता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करें। (नियम–6)
- देश की प्रभुसत्ता एवं अखण्डता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाले, देश की सुरक्षा, दूसरे देशों के साथ मित्रतापूर्ण रिश्तें, सार्वजनिक व्यवस्था, शालीनता या नैतिकता, न्यायालय की अवमानना की श्रेणी में आने वाले ऐसे किसी प्रदर्शन से न तो जुड़ेगा, न ही किसी प्रदर्शन में भाग लेगा। साथ ही वह अपने या किसी अन्य सरकारी सेवक के किसी मामले के लिये हड़ताल या शारीरिक दबाव/अवपीड़न में शामिल भी नहीं होगा। (नियम–7)
- बिना पूर्व स्वीकृति के वह किसी समाचार पत्र या सामयिक प्रकाशन या इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का संचालन या प्रबंधन इत्यादि गतिविधियों में भाग नहीं लेगा, जब तक कि यह उसके मूल कर्त्तव्यों/सेवा से सम्बन्धी कार्य न हो। (नियम–8)
- रेडियो प्रसारण, इलैक्ट्रॉनिक मीडिया या स्वयं के नाम से या किसी दूसरे के नाम से या फिर गुमनाम प्रेस को ऐसा कोई वक्तव्य या अपनी राय नहीं देगा, जो कि भारत सरकार या किसी राज्य सरकार की किसी नीति या कार्यवाही के विरूद्ध हो या फिर केन्द्र एवं राज्य सरकार के सम्बन्धों में उलझन पैदा करती हो या केन्द्र सरकार एवं किसी दूसरे देश के सम्बन्धों में उलझन पैदा करती हो।
- नियम–3 में वर्णित कारणों को छोड़कर, बिना पूर्व स्वीकृति के किसी व्यक्ति, समिति या संस्था द्वारा की जा रही जाँच में अपनी गवाही नहीं देगा, लेकिन यह नियम सरकार, संसद या राज्य विधानसभा द्वारा गठित जाँच संस्थाएं, न्यायिक जाँच या सरकार के नियन्त्रण में कार्यरत किसी प्राधिकारी द्वारा गठित प्रशासनिक जाँच में दी गई गवाही पर लागू नहीं होते हैं। (नियम–10)
- सूचना के अधिकार, 2005 एवं इसके अन्तर्गत बनाये गये नियमों के तहत अपनी सेवा के निष्पादन के दौरान किसी व्यक्ति को नियमानुसार सूचना जारी कर सकता हैं, लेकिन सरकार के किसी विशिष्ट या सामान्य आदेश के तहत उसे दी गई सेवाओं के निष्पादन के लिये आवश्यक होने की अवस्था को छोड़कर, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी सरकारी दस्तावेज या

वर्गीकृत सूचना को किसी दूसरे सरकारी सेवक या व्यक्ति जिसे ऐसी सूचना या दस्तावेज देने के लिये वह अधिकृत न हो, नहीं देगा। (नियम–11)

- कुछ विशिष्ट कारणों को छोड़कर, बिना पूर्व स्वीकृति के ना तो किसी तरह की सहायता/योगदान स्वीकार करेगा या धन इकट्ठा करने के लिये किसी अन्य गतिविधि में शामिल हो सकेगा। (नियम–12)
- उपलब्ध छूट को छोड़कर, न तो किसी तरह का उपहार (गिफ्ट) स्वीकार करेगा और न ही अपने परिवार के सदस्य या उसके लिए कार्य कर रहे किसी अन्य व्यक्ति को उपहार स्वीकार करने की अनुमति देगा।

विवाह, विवाह की सालगिरह, अंतिम संस्कार या अन्य धार्मिक उत्सवों पर, जबकि उपहार देना सामाजिक और धार्मिक मान्यता के अनुरूप हो, एक सरकारी सेवक अपने किसी नजदीकी सम्बन्धी या व्यक्तिगत मित्र जिससे उसके सरकारी लेन–देन/कार्य के सम्बन्ध न हों, से उपहार स्वीकार कर सकता है, लेकिन यदि उसकी कीमत ''क'' संवर्ग के लिये रू. 7,000/– से अधिक, ''ख'' संवर्ग के लिये रू. 4,000/– से अधिक, ''ग'' संवर्ग के लिये रू. 2,000/– से अधिक एवं ''घ'' संवर्ग के लिये रू. 1,000/– से अधिक है, तब उसे इसकी सूचना सरकार को देनी आवश्यक हैं।

उपरोक्त अवसरों के अतिरिक्त, ''क'' एवं ''ख'' वर्ग के सरकारी सेवक रू. 1,500/– से अधिक की एवं ''ग'' व ''घ'' वर्ग के सरकारी सेवक रू. 500/– से अधिक का कोई उपहार सरकार की पूर्व स्वीकृति के बिना स्वीकार नहीं कर सकेगा। (नियम–13)

- न तो दहेज लेगा, न ही देगा और न ही इसके लिये किसी को उकसाएगा। इसी प्रकार वह परोक्ष या अपरोक्ष रूप से वर या वधु के माता–पिता या अभिभावक से दहेज की मांग नहीं करेगा। (नियम–13ए)
- बिना पूर्व स्वीकृति के वह स्वयं या अन्य सेवक की प्रशंसा या विदाई भाषण सम्बोधन या प्रशंसा पत्र प्राप्त नहीं करेगा और ना ही उसके या अन्य कर्मचारी के सम्मान में होने वाली किसी बैठक या मनोरंजन कार्यक्रम में भाग लेगा। यद्यपि किसी सरकारी कर्मचारी या अन्य कर्मचारी की सेवानिवृत्ति या स्थानान्तरण पर होने वाले गैर सरकारी एवं अनौपचारिक/अनाधिकारिक प्रकृति के विदाई/सम्मान समारोह में भाग ले सकेगा। वह सार्वजनिक संस्था द्वारा आयोजित सादे एवं कम खर्च वाले मनोरंजन कार्यक्रम में भाग ले सकेगा। (नियम–14)
- उपलब्ध प्रावधानों को छोड़कर, बिना पूर्व स्वीकृति के परोक्ष या अपरोक्ष रूप से किसी व्यवसाय या किसी दूसरे रोजगार को ग्रहण नहीं करेगा, न ही इंश्योरेन्स एजेन्सी/कमीशन एजेन्सी जिसे उसके परिवार के सदस्य चलाते हों, का साथ देगा/प्रचार करेगा। इसी प्रकार वह किसी बैंक या कम्पनी एक्ट, 1956 या अन्य किसी नियम या सहकारी समिति (व्यावसायिक कार्यों) में गठित किसी कम्पनी के पंजीकरण, प्रमोशन या प्रबंधन इत्यादि की गतिविधियों में भाग नहीं लेगा। वह प्रायोजित मीडिया कार्यक्रमों, प्राइवेट एजेन्सी द्वारा बनाये जा रहे कार्यक्रमों या किसी विडियो मैग्जीन इत्यादि बनाने में भी शामिल नहीं होगा।

बिना पूर्व स्वीकृति के वह अवैतनिक, सामाजिक एवं चैरिटेबल कार्यों, साहित्य, कला या वैज्ञानिक प्रकृति के

कार्यों या गैर पेशेवर खेलकूद गतिविधियों में भाग ले सकेगा। (नियम–15)

- अपने परिवार के सदस्य के द्वारा इन्श्योरेन्स एजेन्सी/कमीशन एजेन्सी चलाने या रखने की अवस्था में इसकी सूचना सरकार को अवश्य देगा। बिना नियत प्राधिकारी की पूर्व स्वीकृति के किसी प्राइवेट या सार्वजनिक संगठन के लिये या निजी व्यक्ति के लिये किये गये किसी कार्य के लिये किसी तरह का शुल्क स्वीकार नहीं करेगा। (नियम–15)
- उसे आवंटित सरकारी भवन का कब्जा किसी अन्य व्यक्ति को लीज, किराये या अन्य कारण के लिये नहीं सौंपेगा। आवंटित भवन का आवंटन निरस्त होने की अवस्था में निर्धारित अवधि में भवन को खाली करेगा। (नियम–15)
- शेयर, स्टॉक या अन्य निवेश में सट्टा नहीं लगायेगा, लेकिन वह स्टॉक ब्रोकर या अन्य किसी अधिकृत एवं लाइसेन्सधारी या पंजीकृत व्यक्ति के माध्यम से कभी–कभार निवेश कर सकेगा।

सरकारी बैंक या अन्य सार्वजनिक लिमिटेड कम्पनी से सामान्य लेन–देन को छोड़कर, स्वयं या अपने परिवार के सदस्य या अन्य किसी व्यक्ति के माध्यम से न हो कोई राशि उधार लेगा न देगा, और न ही राशि जमा करवाएगा। साथ ही वह ब्याज पर या अन्य शुल्क के लिये कोई राशि किसी व्यक्ति को उधार नहीं देगा। लेकिन वह अपने किसी सम्बन्धी या मित्र को बिना ब्याज के पूर्णतः उधार के रूप में अल्प राशि दे सकेगा एवं ले भी सकेगा, या मूल व्यापारकर्त्ता के यहां जमा खाता चला सकेगा या उसके व्यक्तिगत कर्मचारियों को उनका वेतन अग्रिम भी दे सकेगा। (नियम–16)

- अपने व्यक्तिगत मामलों का इस तरह से प्रबन्ध करेगा कि बार–बार की ऋणग्रस्तता या दिवालियापन से बचा जा सके। यदि किसी सरकारी सेवक के विरूद्ध किसी ऋण की वसूली के लिये कोई विधिक कार्यवाही प्रारम्भ होती हैं या उसे दिवालिया घोषित किया जाता है तो, उसे इसकी सूचना पूर्ण तथ्यों के साथ सरकार को तुरन्त देनी होगी। (नियम–17)
- अपनी प्रथम नियुक्ति के समय स्वयं के नाम, परिवार के किसी सदस्य के नाम की अचल सम्पत्ति, शेयर, डिबेन्चर, बैंक जमाएं, अन्य चल सम्पत्ति सहित, सम्पत्ति एवं दायित्वों का पूर्ण विवरण की घोषणा करेगा। तत्पश्चात् उसे यह घोषणा सरकार द्वारा नियत समय पर प्रति वर्ष भी करनी होगी।

बिना सरकार को पूर्व जानकारी दिये अपने या अपने परिवार के किसी सदस्य के नाम से किसी अचल सम्पत्ति का लीज, मोर्टगेज, क्रय, विक्रय, गिफ्ट या अन्य माध्यम से अर्जन या निपटान नहीं करेगा एवं यदि यह लेन–देन ऐसे किसी व्यक्ति से हो जिससे उसके सरकारी लेनदेन/कार्य के सम्बन्ध हो तब उसे सक्षम अधिकारी से इस प्रकार के लेनदेन की पूर्व स्वीकृति लेनी होगी।

स्वयं के नाम या परिवार के सदस्यों के नाम पर दो माह के मूल वेतन से अधिक कीमत की चल सम्पत्ति के लेन–देन के मामलों में एक माह के अन्दर नियत प्राधिकारी को सूचित करेगा एवं यदि ऐसा लेन–देन किसी ऐसे व्यक्ति से किया जाता है जिससे उसके सरकारी लेन–देन/कार्य के सम्बन्ध हो, तब उसे लेन–देन की पूर्व स्वीकृति लेनी होगी।

नियत प्राधिकारी की बिना पूर्व स्वीकृति के विदेश में कोई भी अचल सम्पत्ति का क्रय–विक्रय, मोर्टगेज, गिफ्ट,

लीज या अन्य माध्यम से अपने या परिवार के सदस्य के नाम से अर्जन या निपटान नहीं करेगा। (नियम–18)

- किसी भी ऐसे सरकारी कार्य/मामले में जो किसी चरित्रहनन अथवा आलोचना की विषय–वस्तु बनें, की सरकार की पूर्व अनुमति के बिना किसी न्यायालय की शरण में अथवा प्रेस के समर्थन के लिये नहीं जा सकेगा। (नियम–19)
- सेवा सम्बन्धी मामलों में अपने हितों के लिये उच्च अधिकारियों पर किसी तरह का राजनीतिक या अन्य बाहरी दबाव/प्रभाव ना तो डालेगा, ना ही इसके लिये प्रयास करेगा। (नियम–20)
- किसी ऐसे व्यक्ति जिसका पति या पत्नी जीवित हो, से ना तो विवाह करेगा ना ही इस हेतु सहमति देगा। पति या पत्नी के जीवित रहने की अवस्था में दूसरे व्यक्ति से ना तो विवाह करेगा और ना ही इस हेतु सहमति देगा जब तक कि ऐसा करने का प्रावधान उसके एवं दूसरे व्यक्ति के पर्सनल लॉ में क्षम्य हो तथा इसके लिये सरकार से अनुमति ली गई हो।

ऐसे व्यक्ति जो भारतीय नागरिक नहीं हैं, से विवाहित होने या विवाह करने की अवस्था में इसकी सूचना तुरन्त सरकार को देनी होगी। (नियम–21)

- अपनी उपस्थिति वाले क्षेत्र में नशीले पेय या दवाइयों के उपयोग के बारे में लागू कानून का दृढ़ता से पालन करेगा। अपने कार्य समय के दौरान किसी नशीले पेय या दवाई के प्रभाव में नहीं रहेगा एवं यह सुनिश्चित करेगा कि नशीले पेय या दवाइयों के प्रभाव के कारण किसी भी समय उसकी कार्य क्षमता/कार्य निष्पादन प्रभावित न हो।

सार्वजनिक स्थान पर नशीले पेय या दवाइयों का सेवन नहीं करेगा। नशे की अवस्था में सार्वजनिक स्थान पर नहीं दिखेगा। नशीले पेय एवं दवाइयों का अधिक प्रयोग नहीं करेगा। (नियम–22)

- 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे को काम पर नही लगाएगा। (नियम–22।)

यह ''आचरण नियमावली'' विस्तृत नियमों का केवल एक सार संग्रह है। जिसका उद्देश्य सरकारी सेवक को हिन्दी भाषा में आचरण नियमों की आरम्भिक जानकारी देना मात्र हैं ताकि वे अपने दैनिक कार्य–कलापों एवं आचार–व्यवहार में तत्परता एवं सजगता बनाए रखें। इस सार संग्रह को नियमों की सम्पूर्णता की दृष्टि से नहीं माना जाना चाहिए। यहां यह भी उल्लेख करना मेरा दायित्व समझता हूं कि इस नियमावली का प्रयोग किसी विधिक या प्रशासनिक कार्यवाही/प्रकरण में करना प्रासंगिक नहीं होगा क्योंकि यह नियमों का हिन्दी भाषा में सार रूप हैं न कि पूर्ण नियम हैं। अतः इसे पढ़ते हुए अथवा इन्हें कहीं उद्घृत करते समय पाठक इस बात का ध्यान अवश्य रखें।

जीवन का अर्थ है समय। जो जीवन से प्यार करते हों, वे आलस्य में समय न गँवाएँ।
–अज्ञात

ऊँटनी के दूध एवं अन्न के यौगिक खाद्य पदार्थ : उत्पादन एवं संभावनाएँ

देवेन्द्र कुमार, वैज्ञानिक, राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक
एवं राकेश कुमार पूनियाँ, तकनीकी सहायक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

हमारे देश में आबादी का एक महत्वपूर्ण अनुपात अप्रत्यक्ष रूप से भूख की चपेट में है और कोरोनरी हृदय रोगों, कैंसर एवं मधुमेह जैसी घातक बीमारियों की दर में बढ़ोतरी के कारण अत्यधिक मृत्युदर भी देखी जा रही है। ये सभी समस्याएं आहार से सम्बंधित हैं। अक्सर भारतीय खाद्य प्रणाली में विविधता की कमी के कारण ही आहार द्वारा सभी पोषक तत्वों की उपलब्धता नहीं हो पाती है। कुछ पोषक–विरोधी तत्वों और अवरोधकों की उपस्थिति के कारण भी कुछ महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की उपलब्धता प्रभावित होती है। दूध को पोषक तत्वों एवं सक्रिय अवयवों के स्रोत के रूप में अद्वितीय माना जाता है, लेकिन दूध में भी कुछ सूक्ष्म पोषक तत्व (लोहा, तांबा और कुछ विटामिन) और फाइबर की कमी पाई जाती है। इसलिए उपयुक्त सूक्ष्म पोषक स्रोतों एवं घटकों के साथ दूध का अनुपूरण कर मानव स्वास्थ्य को बढ़ावा देने की जरूरत है। दूध में पोषक तत्वों और स्वास्थ्य कारकों की पूर्ति हेतु अनुपूरक स्रोतों के रूप में फल और सब्जियाँ, अनाज, बाजरा, फलियां और कुछ तिलहन फसलों सहित कई अन्य विकल्पों को अपनाया जा सकता है। दूध में अन्य वस्तुओं की पूरक भूमिका केवल पोषण और स्वास्थ्य के मामले में ही नहीं बल्कि इसके संवेदी और भंडारण गुणवत्ता विशेषताओं में भी बढ़ोतरी हो सकती है। समग्र खाद्य पदार्थों के निर्माण में उपयोग हेतु दो या दो से अधिक असंबंधित स्रोतों से सामग्रियों को अनुपात में निर्धारित करने की आवश्यकता है।

एक योजनाबद्ध वर्गीकरण द्वारा समग्र डेयरी खाद्य पदार्थों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है।

- तरल दूध और अनाज के साथ उत्पाद (खीर या पायसम, दलिया)
- फल और सब्जियों के साथ दूध उत्पाद (गाजर हलवा, पेय पदार्थ)
- किण्वित दूध उत्पाद (मैंगो श्रीखंड, फल दही और लस्सी, सब्जी रायता, कलान)
- किण्वित दूध–अनाज/बाजरा आधारित उत्पाद (दही चावल, राबड़ी, किष्क, तरहना)
- दूध और फली आटा आधारित उत्पाद (सोहन हलवा, कढ़ी)
- दूध घटकों का उपयोग मिष्ठान्न एवं बेकरी उत्पाद के रूप में

कई ऐसे उत्पादों के उदाहरण दुनिया के अलग–अलग हिस्सों में मौजूद हैं और इनमे से कुछ उत्पादों का पहले से ही वाणिज्यीकरण किया जा चुका है।

हालांकि, दूध के साथ किसी भी वस्तु का संयोजन अक्सर उसके भौतिक–रासायनिक गुणों में महत्वपूर्ण परिवर्तन और असंतुलन पैदा करता है। अतः इन सभी समस्याओं और परिणामी घटनाओं पर काबू पाने के लिए एक स्पष्ट

रणनीति की समझ आवश्यक है। पोषण एवं चिकित्सीय गुणवता को बढ़ाने के लिए या विकसित उत्पादों की कार्यक्षमता में सुधार लाने के लिए प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ में दूध घटकों को एकीकृत करने वाले अनुसंधानों में वृद्धि की प्रवृत्ति देखी जा रही है।

कार्यात्मक खाद्य पदार्थ

विश्व खाद्य बाजार में सबसे तेजी से बढ़ते क्षेत्र कार्यात्मक खाद्य पदार्थों एवं इससे सम्बंधित उत्पाद है। वर्तमान में 'फंक्शनल फूड्स' और 'न्युट्रास्युटिकल्स' के एक समान परिभाषा की कमी है। अक्सर उन उत्पादों को इस समूह में शामिल किया जाता है जो सामान्य रखरखाव और विकास के लिए आवश्यक मात्रा से परे स्वास्थ्य लाभ या वांछनीय मनोवैज्ञानिक प्रभाव प्रदान करने हेतु अन्य जैविक रूप से सक्रिय घटकों व आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता प्रदान की क्षमता शामिल हैं। इन उत्पादों का स्वाद पारंपरिक खाद्य पदार्थों के समान होता हैं लेकिन इसे समृद्ध या सिद्ध स्वास्थ्य लाभ रखने वाली सामग्री के साथ तैयार किया जाता है। कार्यात्मक खाद्य पदार्थों के उदाहरण में कैल्शियम समृद्ध दूध, प्रोबायोटिक डेयरी खाद्य पदार्थ, फाइटोस्ट्रोलयुक्त मक्खन और फाइबर समृद्ध बेकरी खाद्य पदार्थ शामिल हैं।

महत्वपूर्ण पोषक तत्वों और उसमें मौजूद बायोएक्टिव घटकों की उपस्थिति के कारण दूध को एक "सम्पूर्ण आहार" के रूप में माना जाता है। दूध प्रोटीन, लैक्टोज डेरिवेटिव, बायोएक्टिव पेप्टाइड्स सहित फैटी एसिड की भूमिका को विभिन्न प्रकार के बीमारियों के उपचार व रोकथाम में अच्छी तरह से स्थापित किया जा चुका है।

दूध आधारित प्रोबायोटिक खाद्य पदार्थ, विश्व व राष्ट्रीय स्तर पर कार्यात्मक खाद्य श्रेणी में प्रमुख क्षेत्र हैं। हालांकि, खाद्य उत्पादों की नई रेंज के निर्माण में इन बायोएक्टिव घटकों का समायोजन प्रारंभिक अवस्था में ही है। मोटापा, मधुमेह, कोरोनरी हृदय रोग (सीएचडी), कैंसर, ऑस्टियोपोरोसिस, रक्ताल्पता आदि जीवन–शैली की बीमारियों के बढ़ते अनुपात के साथ कार्यात्मक खाद्य पदार्थों और न्यूट्रास्यूटिकल्स के महत्व में वृद्धि पाई गई है। पोषक तत्वों में काफी विविधता के कारण कम्पोजिट डेयरी खाद्य पदार्थ इन आहार से संबंधित स्वास्थ्य समस्याओं में से कुछ का मुकाबला करने में एक प्रभावी तरीका हो सकता है।

मोटा अनाज और उनके प्रसंस्करण की स्थिति और संभावनाएँ

हमारे भोजन में गेहूं और चावल सहित अन्य अनाज कैलोरी, प्रोटीन और सूक्ष्म पोषक तत्वों के प्रमुख स्रोत हैं। आजकल प्राथमिक प्रसंस्करण एवं मिलिंग से कई सूक्ष्म पोषक तत्व, फाइबर आदि की हानि होती है। दूसरी ओर बहुत से परंपरागत भोजन की तैयारी दूध एवं अनाज/आटा के संयोजन से तैयार किया जा रहा हैं। यह न केवल इन वस्तुओं के स्वाद को बढ़ाता है बल्कि इससे पोषक क्षमता में वृद्धि होती है। माल्टेड दूध उत्पाद दूध और अनाज के मिश्रण पर आधारित 'समग्र डेयरी फूड्स' का एक उतम उदाहरण है जो कि विशेष रूप से बच्चों एवं अन्य सभी आयु वर्ग के लोगों के लिए एक सर्वोतम खाद्य पदार्थ है।

जौ और जई दो प्रमुख लघु अनाज फसलें हैं जिसके कुछ अद्वितीय कार्यक्षमता वाले घटकों की उपस्थिति के कारण इनका उपयोग कई उत्कृष्ट दुग्ध उत्पाद के निर्माण में इस्तेमाल किया जा सकता है। हालांकि, हमारे देश में इनकी खेती बड़े पैमाने पर चारा फसल के रूप में की जाती है और उक्त मोटे अनाज का सेवन बहुत ही कम मात्रा में कुछ जातीय समूहों द्वारा किया जाता है। कुछ उद्योगों द्वारा औद्योगिक स्तर पर माल्ट उत्पादन शुरू कर दिया गया है जिसका उपयोग मुख्य रूप से विभिन्न पेय उत्पाद बनाने में किया जा रहा है। भारत मोटे अनाज का प्रमुख उत्पादक है जिसमे ज्वार, बाजरा, रागी, काकुम, कोदो, कुटकी व सावा इत्यादि शामिल है। किन्तु हमारे देश में इन मोटे अनाजों का उत्पादन निरंतर घट रहा है।

पारंपरिक अनाजों के अनुपात में इन अनाजों में प्रोटीन, खनिज लवण एवं विटामिन्स प्रचुर मात्रा में पाई जाती है। सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे कैल्शियम, लोहा, फॉस्फोरस, जिंक, विटामिन्स एवं सल्फर युक्त एमिनो अम्ल की मात्रा भी अधिक पाई जाती है। उच्च अनुपात में गैर–स्टार्च पॉलिसैकराईड, आहार फाइबर की उपस्थिति और कम ग्लाइसेमिक सूचकांक के कारण इसका उपयोग एक आदर्श संघटक के रूप में मधुमेह, कोरोनरी हृदय रोगी इत्यादि लोगों के लिए खाद्य पदार्थो में इस्तेमाल किया जाता है।

दूध और अनाज आधारित उत्पादों की गुणवत्ता

हालांकि, दूध में अनाज/बाजरा/फल और सब्जियों के मिश्रण से मुख्य रूप से दूध के अणुओं के साथ अनाज के कई घटकों की प्रतिक्रिया के कारण कई तकनीकी समस्याएं हो सकती है। दूध में इन खाद्य सामग्रियों के मिश्रण से नमक संतुलन होने की संभावना होती है जिससे दूध प्रोटीन में अस्थिर हो जाता है। लोहे एवं अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व, वसा युक्त डेयरी उत्पादों के ऑक्सीकरण को बढ़ावा देते है जिससे इसकी उत्पादों के स्वाद और भंडारण स्थिरता प्रभावित होती है। हालांकि, उपयुक्त सूत्रीकरण और प्रौद्योगिकीय उपायों को अपनाकर इन प्रतिकूल प्रभावों से बचा जा सकता है। दूध या दूध उत्पादों जैसे माल्टेड खाद्य पदार्थ, किण्वित उत्पादों और डेसर्ट जैसे खाद्य पदार्थों में बाजरा/अनाज उत्पादों के शामिल किए जाने पर इसकी स्वीकार्यता में वृद्धि पाई गई है।

यौगिक डेयरी खाद्य पदार्थ

माल्टेड और पूरक आहार

दुनिया में माल्टेड अनाज दूध खाद्य पदार्थों को भी व्यापक रूप से निर्मित किया जा रहा है और बाजार में भी काफी प्रचलित है। माल्टिंग की प्रक्रिया से अनाज में मौजूद एंजाइमों का सक्रिय होना एवं पोषक–विरोधी घटकों के स्तर में कमी होने से यह मूल्य संवर्धन हेतु और अधिक उपयुक्त हो जाता है। पोषक तत्वों के पूर्व–पचा रूप में मौजूद होने के कारण इसका उपयोग विशेषतः शिशुओं के और वृद्ध व्यक्तियों के लिए बने खाद्य पदार्थ में आदर्श सामग्री के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। वर्तमान में व्यावसायिक रूप से उपलब्ध माल्टेड दूध उत्पादों में जौ या गेहूं के मिश्रण से बनाया जा रहा है, हालांकि अन्य मोटे अनाज/बाजरा के माल्ट फार्म के उपयोग के लिए पर्याप्त गुंजाइश है। अक्सर इस प्रकार के खाद्य पदार्थों की पोषण क्षमता को बढ़ाने एवं पाचनशक्ति में सुधार के लिए अंकुरण, किण्वन और प्रसंस्करण के विभिन्न तरीकों का उपयोग किया जाता है, और तिलहन या पशु उत्पादों को मिश्रित कर खाद्य पदार्थ की ऊर्जा शक्ति को बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है। आम तौर पर अनाज को दूध के ठोस के साथ संयोजन कर शिशुओं हेतु खाद्य पदार्थों की तैयारी की जाती है। कुछ वैज्ञानिकों ने तो प्रसंस्कारित जौ, चना, दूध पाउडर एवं चीनी को 60:30:5:5 के अनुपात में मिलाकर शिशुओं हेतु खाद्य पदार्थ तैयार किया है। इस प्रकार के जौ और चना पर आधारित खाद्य पदार्थ शिशुओं को संतुलित पोषण एवं अच्छी वृद्धि को बढ़ावा देने में सक्षम पाया गया है।

दूध–अन्न आधारित किण्वित खाद्य पदार्थ

मानव स्वास्थ्य के लिए किण्वित दूध की उपयोगिता बेहतर समझी जाती है व इस हेतु परंपरागत रूप से किण्वित दूध उसमें साबुत अनाज का उपयोग भी इसकी कार्यात्मक गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए किया जाता है। मध्य पूर्व एशिया, अफ्रीका और यूरोप के कुछ हिस्सों में किण्वित अनाज–दही के मिश्रण लोगों के आहार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राबड़ी एक किण्वित स्वदेशी खाद्य पदार्थ है जो भारत की कम और औसत आय वाले ग्रामीण लोगों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। यह भारत

के उत्तर–पश्चिमी अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में लोकप्रिय है और इसका उत्पादन गर्मियों के महीनों में छाछ के साथ गेहूं के आटे, बाजरा, जौ या मक्का के मिश्रण को 4–6 घंटे के लिए कमरे के तापमान (40–45^0 से.) पर किण्वित कर तैयार किया जाता है। किण्वित उत्पाद को उबलने के बाद ठंडा कर स्वादानुसार नमक डाल कर खाने के उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार के उत्पाद के सेवन से लैक्टोज–असहिष्णुता की समस्या भी नहीं होती है। राबड़ी उत्पादन हेतु बाजरे के आटे के अलावा गेहूं और ज्वार के आटे का भी उपयोग किया जाता है।

बाजरे एवं मोठ के आटे को विभिन्न मात्रा में ऊँटनी के दूध में मिलाकर एक उच्च गुणवत्ता वाली राबड़ी बनाई गई (चित्र–1)। प्राप्त राबड़ी की समग्र स्वीकार्यता 7.45±0.46 पाई गई। इसमें नमी एवं वसा की मात्रा क्रमशः 80–85 प्रतिशत एवं 2.3–3.5 प्रतिशत पाई गई।

फ्रोजेन योगहर्ट

विभिन्न मात्रा में जई के आटे को उष्ट्र दुग्ध में मिलाकर उसकी गुणवत्ता की जांच की गई। कोलेस्ट्रॉल कम करने की क्षमता, मधुमेह में लाभदायक पौष्टिक फाइबर इत्यादि के

चित्र–2 :ऊँटनी के दूध से निर्मित फ्रोजेन योगहर्ट

रूप में जई का महत्वपूर्ण स्थान है। 5 प्रतिशत जई का आटा उष्ट्र दुग्ध में मिलाने पर सर्वाधिक गुणवता वाला उत्पाद बनाया गया (चित्र–2)। इसमें नमी एवं वसा की मात्रा क्रमशः 67.68 प्रतिशत एवं 4.3–4.6 प्रतिशत पाई गई।

तरहना एक तुर्की की पारंपरिक किण्वित खाद्य उत्पाद है जिसका उत्पादन दही, गेहूं का आटा, खमीर, सब्जियों और मसालों को मिश्रित कर 1–7 दिनों के लिए किण्वन कर तैयार किया जाता है। किण्वन के बाद मिश्रण को सुखा कर पिस लेते हैं। तरहना का स्वाद अम्लीय और खट्टा होता है और इसका उपयोग सूप बनाने के लिए किया जाता है।

इसी तरह, उष्ट्र दुग्ध–अनाज आधारित प्रोबायोटिक किण्वित उत्पादों का भी व्यावसायिक महत्व हो सकता है जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार के बीमारियों में भी किया जाता रहा है। दूध और अनाज को विभिन्न अनुपात में मिश्रित कर बहुत से उत्पाद बनाये जा चुके हैं। ऊँटनी के दूध का भी उपयोग इस प्रकार के उत्पाद बनाने में किया जा सकता है जिससे ऊँट पालकों को बेहतर आर्थिक मदद मिल सकती है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

मनोज कुमार, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी एवं ओम प्रकाश जोशी, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
भा.कृ.अ.प., कृषि भवन, नई दिल्ली

मानव सभ्यता के क्रमबद्ध विकास में प्रकृति के साथ मानव के संबंधों में निरंतर परिवर्तन हुआ है। प्राचीन समय में जनसंख्या कम होने के कारण प्रकृति पर जनसंख्या प्रभाव नगण्य था। इसके बाद जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, औद्योगीकरण, बिजली, कोयले, तेल व गैस की बढ़ती खपत से तापमान में लगातार वृद्धि हुई। विकास की दौड़ में जलाये जाने वाले पेट्रोलियम, कोयला से निकलने वाली कार्बनडाइक्साइड व अन्य (ग्रीन हाउस) हरित गृह गैसें (मिथेन, नाइट्रस आक्साइड एवं क्लोरो–फ्लोरो कार्बन आदि) तापमान वृद्धि के मुख्य घटकों में शामिल हैं। ग्रीनहाऊस गैसें वातावरण का एक हिस्सा है, यह ग्रीन हाऊस प्रभाव के कारण वातावरण में सम्मिलित होती है। वातावरण में कुछ ग्रीनहाऊस गैसें प्राकृतिक रूप से उपस्थित रहती हैं जबकि कुछ ग्रीनहाऊस गैसें मनुष्य की क्रियाओं/कार्यों के कारण वातावरण में बढ़ती रहती हैं। ग्रीनहाऊस गैसें जो प्राकृतिक रूप से वातावरण में रहती हैं वे हैं – कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड, मीथेन एवम् ओजोन। मनुष्य की कुछ क्रियाएँ/कार्यों से प्राकृतिक रूप से विद्यमान/उपस्थित विभिन्न ग्रीनहाऊस गैसेस के स्तर में वृद्धि हो रही है। विभिन्न ग्रीनहाऊस गैसों की सांद्रता वर्तमान समय में निरंतर बढ़ती जा रही है। ग्रीनहाऊस गैसों के कारण ही विश्व तापमान गर्मी (ग्लोबल वार्मिंग) हो रही हैं। यदि इन ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को जल्द ही कम नहीं किया गया तो पर्वतीय हिमखंडों/ग्लेशियर पिछलने के कारण समुद्र का जल स्तर बढ़ जाएगा, नदियां सूख जाएंगी; सूखा, वर्षा की कमी, असंतुलित वर्षा एवं अतिवृष्टि से विश्व को बर्बादी का सामना करना पड़ सकता है।

यूरोप और भारत सहित पूरे एशिया में बेमौसम बरसात, ठंड, गर्मी ने पर्यावरणविदों की चिंता बढ़ा दी है। वर्ल्ड क्लाइमेंट कांफ्रेंस डिक्लेरेशन एंड सपोर्टिंग डाक्युमेंट्स के अनुसार प्रौद्योगिकी के व्यापक विस्तार के कारण हवा में कार्बन डाईआक्साइड की मात्रा तेजी से बढ़ रही है। इस तापमान वृद्धि के कारण अत्यधिक गर्मी से ध्रुव प्रदेशों में लाखों मील तक फैली बर्फ पिघलकर बड़ी मात्रा में समुद्र में आने लगेगी। फलतः समुद्र का जलस्तर छह से लेकर दस मीटर तक ऊपर उठ जाएगा। ऐसे में जलप्रलय की विभीषिका भी पैदा हो सकती है। कई छोटे द्वीपों का नामोनिशान मिट जाएगा और बहुत से तटीय क्षेत्र समुद्र में समा जाएंगे। हिमालय के ग्लेशियर भी तेजी से पिघल रहे हैं। 1950 के बाद से हिमालय के करीब 2000 ग्लेशियर पिघल चुके हैं।

पूरी दुनिया जिस तरह कथित विकास की दौड़ में अंधी हो चुकी है, उसे देखकर यही लगता है कि आज नही तो कल मानव सभ्यता का विनाश निश्चित है। प्राकृतिक आपदाओं का आना और टलना हमें बार–बार चेतावनी दे रहा है कि अभी भी समय है। हम नींद से जाग जाएं नही तो कल कुछ भी नहीं बचने वाला। मानव सभ्यता के विनाश की शुरूआत हो चुकी है।

विश्व में हुए औद्योकीकरण ने कई तरह की विसंगतियों और असंतुलन को जन्म दिया है। भारत में ही ज्यादातर शहरों का विकास अनियोजित तरीके से हुआ है। बेतरतीब बसे शहरों के पास न तो कचरे के निस्तारण का जरूरी ढांचा है और न ही वहां फैल रहे प्रदूषण को बंद करने के लिए कोई बंदोबस्त किया गया है। योजना के बिना बसे शहरों की एक बड़ी खामी यह भी है कि इन शहरों में पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने के लिए हरित पट्टी नहीं विकसित की गई है।

दुनिया भर में पर्यावरण संरक्षण को लेकर काफी बातें, सम्मेलन, सेमिनार आदि हो रहे हैं, किंतु वास्तविक धरातल पर उसकी परिणिति होती दिखाई नहीं दे रही है। जिस तरह क्लाइमेंट चेंज दुनिया में भोजन पैदावार और आर्थिक समृद्धि को प्रभावित कर रहा है, आने वाले समय में जिंदा रहने के लिए जरूरी चीजें इतनी महंगी हो जाएगीं कि उससे देशों के बीच युद्ध जैसे हालात पैदा हो जाएंगे। यह खतरा उन देशों में ज्यादा होगा, जहां कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है। पर्यावरण का सवाल जब तक तापमान में बढ़ोत्तरी से मानवता के भविष्य पर आने वाले खतरों तक सीमित रहा, तब तक तापमान में बढ़ोत्तरी से मानवता के भविष्य पर आने वाले खतरों तक सीमित रहा, तब तक विकासशील देशों का इसकी ओर उतना ध्यान नहीं गया, किंतु अब जलवायु चक्र का खतरा खाद्यान्न उत्पादन पर पड़ रहा है।

जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से कृषि संरक्षण के लिए न्यूनीकरण तथा अनुकूलन हेतु अनेक नीतियों को लागू करना जरूरी है। हमें परम्परागत या आधुनिक तकनीकों का इस्तेमाल कर फसलों की ऐसी किस्में विकसित करनी होंगी जो जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के प्रति वहनीय हों।

सिर्फ जनसंख्या वृद्धि ही पर्यावरण असंतुलन के लिए जिम्मेदार नहीं है। हमारी उपभोगवादी संस्कृति भी इसके लिए प्रमुख रूप से जिम्मेदार है। दुनिया पूंजीवाद के पीछे इस समय इस तरह से भाग रही है कि उसे विकास के अलावा कुछ और दिख ही नहीं रहा। वास्तव में जिसे विकास समझा जा रहा है, वह विकास है ही नहीं। क्या सिर्फ औद्योगिक उत्पादन में बढ़ोत्तरी कर देने को विकास माना जा सकता है? जबकि एक बड़ी आबादी को अपनी जिंदगी बीमारी और पलायन में गुजारनी पड़े। अपनी हैसियत बढ़ा–चढ़ाकर दिखाने की कोशिश में आज आदमी जल, ऊर्जा, जमीन, जंगल जैसे प्राकृतिक संसाधनों का ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल कर रहा है। सबसे बड़ा संकट यह है कि इस इस्तेमाल का जरूरत से लेना–देना नहीं है, बल्कि यह नष्ट करने और बर्बाद करने जैसा ही होता है। वास्तव में प्रकृति का संरक्षण ऐसा ही है, जैसे अपने जीवन की रक्षा करने का संकल्प। पर्यावरण सुरक्षा तो हमारे जीवन की प्राथमिकताओं में सबसे ऊपर होना चाहिए। यह सामुदायिक के साथ–साथ व्यक्तिगत जिम्मेदारी है।

केवल सरकारी प्रयासों से पर्यावरण बदल जाएगा, यह सोच सही नहीं है। आज के दौर में केवल कागजों की खानापूर्ति के लिए वृक्षारोपण करने के बजाय वास्तविक वृक्षारोपण करना होगा। विद्युत, तेल, ईंधन व पानी की खपत कम करके आम आदमी जलवायु परिवर्तन की दिशा में व्यक्तिगत रूप से सहयोग कर सकता है। व्यक्तिगत वाहन के बजाय जहां तक संभव हो सार्वजनिक वाहन में यात्रा करके भी इस दिशा में प्रयास किया जा सकता है। स्वैच्छिक संस्थाएं बगैर प्रोजक्ट के भी इस दिशा में जन जागरूकता अभियान चला सकती है।

केवल प्रकृति, सरकारों व नेताओं को कोसने से काम नहीं चलेगा। आने वाले पीढ़ी के लिए प्रत्येक जागरूक इंसान को जलवायु परिवर्तन के बारे में चिंतन–मनन करना जरूरी है।

ऊँटों को राजस्थान का राज्य पशु घोषित करना–सरकार का स्वागत योग्य कदम

जगमाल सिंह राईका, पूर्व सदस्य
आई.एम.सी., राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राजस्थान राज्य के उत्तरी पश्चिमी आँचल में थार के मरुस्थल में एक अद्भुत प्रकृति का पशु पाया जाता है जिसे सभी ऊँट के नाम से पहचानते हैं। दूसरे शब्दों में इसे 'रेगिस्तान का जहाज' कहते हैं।

प्रदेश की अनेक लोक गाथाओं, किस्से–कहानियों, गीतों, लोकोक्तियों और मुहावरे में इस पशु का बखान किया गया है। ऊँट का मानवीय सभ्यता में महत्वपूर्ण योगदान के कारण ही इसे (मानव ने) अनेक नामों से अंलकृत किया है। किसी मूक प्राणी को 100 से अधिक प्रचलित नामों से पुकारा जाना उसकी लोकप्रियता को सिद्ध करने हेतु काफी है। यहां की संस्कृति और लोक जीवन में रचा–बसा यह प्राणी सदियों से किसी अथके सिपाही की भांति अपनी मंजिल पर निरंतर गतिमान है।

ऊँट के पारंपरिक उपयोग के अन्तर्गत ग्रामीण वर्ग गाँवों में खेती और आवागमन के कार्य में लोग काम लेते रहे हैं। प्रदेश की भौगोलिक परिस्थितियों हेतु सर्वोत्तम यह पशु प्राचीनकाल से भार ढाने व एक स्थान से दूसरे स्थान तक लोगों का परिवहन करने में कारगर रहा है।

परंतु आज के मशीनी युग में इस पशु का अस्तित्व ही संकट में आ गया है। ऊँट को पालने वाले किसान वर्ग के लोग व पुस्तैनी ऊँट पालक–राईका समाज के लोग अब इस पशु को पालना घाटे का काम मानने लगे हैं। ऐसी स्थिति में ऊँट की उपयोगिता पर ही प्रश्न चिन्ह खड़ा हो गया है। जिस पशु ने अपने फबकते कदमों से युगों–युगों से मानव का साथ निभाया, आज बदलते परिवेश में मानों किसी सहायता की पुकार कर रहा हो। ऐसे में इस पशु के अस्तित्व और उसकी उपयोगिता को लेकर अनेक कयास लगाए जाने लगें।

परंतु राजस्थान की सरकार ने और माननीय मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे ने बड़े ही मनोयोग से अपनी केबिनेट की बैठक में ऊँटों के लिए प्रसिद्ध जनपद बीकानेर की पावन धरा पर ऊँट को राजस्थान का 'राज्य पशु' घोषित कर इस विलुप्त होते पशु को संरक्षण का ऐतिहासिक फैसला कर बीकानेर के स्व. महाराजा गंगा सिंह जी को सच्चे अर्थों में श्रद्धा सुमन अर्पित किए हैं क्योंकि महाराजा साहब के राज्य में स्वयं के लगभग 2500 ऊँट थे और उनके राज्य में ऊँट पालकों को विशेष संरक्षण प्राप्त था।

राजस्थान सरकार के ऊँट को राजस्थान का राज्य पशु घोषित करने के ऐतिहासिक फैसले से मानों ऊँटों की निढ़ाल चाल में नूतन प्राण फूंक दिए गए हों।

बीकानेर स्थित उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिक अपनी लगन व परिश्रम के साथ ऊँटों की उपयोगिता पर जो अनुसंधान कर रहे हैं। इससे भविष्य में ऊँट पालकों को लाभ मिलेगा। सरकार इस केन्द्र के हित विकास पर ध्यान देवें और ऊँट पालकों के हित में ठोस योजना बनाकर ऊँट पालन को प्रोत्साहन दें ताकि इस पशु को बचाया जा सके।

कुपोषण : समस्या एवं निदान

निर्मला सैनी, वरिष्ठ वैज्ञानिक
केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, मरु क्षेत्रीय परिसर, बीकानेर,
ताराचन्द सैनी, व. चिकित्सक, पी.बी.एम. हॉस्पिटल, बीकानेर एवं राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

विश्व के अन्य देशों की तरह हमारे देश में कुपोषण स्वास्थ्य और विकास की दृष्टि से चिंतनीय विषय है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे–3 (2005–06) के सर्वेक्षण आँकड़ों के अनुसार पांच साल तक के बच्चों में कुपोषण एक गंभीर समस्या है। इससे बच्चों, महिलाओं और वयस्कों पर विपरीत प्रभाव पड़ने से सामाजिक और आर्थिक विकास प्रभावित होता है। संसदीय समिति ने देश के कुपोषण आँकड़ों पर चिंता जाहिर करते हुए इसे शर्मनाक कहा है। बाल विकास सूची (इंडेक्स) के अनुसार बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, ओडिसा, राजस्थान एवं उत्तरप्रदेश में पांच वर्ष तक की उम्र के बच्चों का स्वास्थ्य और पोषण राष्ट्रीय स्तर से काफी कम है। पांच वर्ष की उम्र के 59 प्रतिशत बच्चे अस्वस्थ है। संसार में 5 साल की उम्र के 25 मिलीयन बच्चे कुपोषित है जिनमें 1 तथा 8 मिलीयन अति कुपोषित है। राजस्थान में 6.7 लाख बच्चों में से 20 प्रतिशत बच्चों का उम्र के हिसाब से लम्बाई (+) अथवा वजन कम है तथा 11. 6 प्रतिशत बच्चे गंभीर कुपोषण का शिकार है।

कुपोषण का तात्पर्य सामान्यतः अल्प पोषण से होता है। जो मुख्यतः अपर्याप्त भोजन, भोजन पचाने की क्षमता में कमी तथा पोषक तत्वों के अवशोषण में बाधा के कारण उत्पन्न होता है। पोषक तत्वों की कमी तथा गुणवत्ता में कमी, अति पोषण भी कुपोषण के कारण हो सकते हैं। कुपोषण से बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक विकास रूक जाता है। ऐसे बच्चें ताउम्र कमजोर रह जाते हैं। अल्प वजन होने के साथ–साथ प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है जिससे स्वास्थ्य संबंधी विकार होने एवं मृत्युदर की संभावना बढ़ जाती है।

कुपोषण मुख्यतया दो प्रकार का होता है :–

1. **सूखा रोग** – इस रोग में शरीर की मांस पेशियाँ कमजोर हो जाती है। शरीर दुबला–पतला दिखाई देता है। उम्र के अनुपात में शारीरिक वजन बहुत कम होता है। सभी तरह की शारीरिक क्रियाओं में कमी आ जाती है। लम्बाई के अनुपात में औसतन वजन 70 प्रतिशत से कम हो जाता है।

2. **क्वाशियोकोर** – क्वाशियोकोर अपर्याप्त एवं असंतुलित भोजन से मुख्यतया होती है। भोजन में पोषक तत्वों की कमी अवशोषण में अवरूद्धता, आंतों का संक्रमण एवं संक्रमित भोजन इस कुपोषण में सहायक होते हैं। हाथ, पैर व पूरे शरीर में सूजन, विटामिन 'ए' की कमी, चमड़ी के रंग में बदलाव एवं सूखापन और रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी मुख्य लक्षण हैं।

अति गंभीर कुपोषण कम वजन और वृद्धि वाले कुपोषण से भिन्न होता है। अधिक कुपोषित बच्चों में शरीर के सभी अंग कम पोषण मिलने से शिथिल हो जाते हैं। सीमित ऊर्जा और पोषक तत्वों की कमी से कार्य करने की क्षमता कम हो जाती है। लीवर में सूजन आ जाती है। कम ग्लूकोज निर्माण से रक्त शर्करा कम हो जाती है जिससे

ताप हानि की संभावना बढ़ जाती है। कोशिकाओं में सोडियम की मात्रा बढ़ जाती है। पोटेशियम की मात्रा कम हो जाती है।

कुपोषण की पहचान

1. कुपोषण को उम्र के हिसाब से लम्बाई/भार कम होने के लक्षणों द्वारा पहचाना जा सकता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा मापित मानक स्तर माप माध्य से (<3 एसडी) नीचे
2. बाजू के ऊपर हिस्से का घेरा (115 मि.मी. से कम)
3. पोषण संबंधी सूजन/सूखापन
4. सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी (विटामिन/लवण)

कुपोषण का गरीबी, अशिक्षा, स्वास्थ्य सुविधा देखभाल में कमी से सीधा संबंध है। सामाजिक जागरूकता एवं कारणों की रोकथाम/उपायों द्वारा कुपोषण को रोका जा सकता है।

भोजन को स्थानीय उपलब्ध खाद्य पदार्थ का समावेश कर कम खर्चीला एवं पोषकता युक्त बनाया जा सकता है।

1. ऊर्जा प्रदान करने वाले तत्व – गेंहू, चावल, गुड़, तेल, घी, चीनी, अनाज
2. प्रोटीन जो शरीर के विकास एवं वृद्धि में सहायक होते हैं।–दूध, दाल
3. रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाले सूक्ष्म तत्वों से भरपूर भोज्य पदार्थ

हरी पत्तीदार सब्जियां एवं फल

अतः प्रत्येक बार के भोजन में उपरोक्त तीनों प्रकार के खाद्य पदार्थ उचित मात्रा और अनुपात में होने आवश्यक है। किसी एक की कमी से आहार असंतुलित हो जाता है तथा कुपोषण की समस्या उत्पन्न करता है। कुपोषण के बचाव में सूक्ष्म तत्वों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। सूक्ष्म तत्व हमारे शरीर में हारमोन निर्माण, रोग प्रतिरोधक शक्ति, दिन–प्रतिदिन की शारीरिक क्रियाओं के लिए जरूरी होते हैं। इनकी कमी से शरीर में स्पष्ट लक्षण दिखाई देते हैं। परंतु कोई गंभीर बीमारी नहीं होती तथा शरीर के विकास पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि शरीर इन्हें संग्रहित रखता है। आयरन, आयोडीन, कॉपर, कैल्शियम, सिलेनियम थायमिन, रिबोफलेविन, पाथरीडाक्सिन, फोलेट, विटामिन डी, ई, के, विटामिन 12 कुछ सूक्ष्म तत्वों का शरीर में संग्रहण नहीं होता। अतः प्रतिदिन के भोजन में निश्चित मात्रा में आवश्यकता होती है। शरीर में उत्तकों, आँतों तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए आवश्यक होते हैं। इन सूक्ष्म पोषक तत्वों की सही मात्रा में भोजन आपूर्ति से न सिर्फ कुपोषण से मुक्ति मिलती है बल्कि बीमारी बाद की कमजोरी दूर करने में मदद मिलती है। जैसे नाइट्रोजन, एमीनो एसिड, पोटेशियम, मैग्नीशियम, फास्फोरस, सल्फर, जिंक, सोडियम एवं क्लोराईड इन तत्वों की पर्याप्त मात्रा गंभीर कुपोषित बच्चों के भोज में प्रतिदिन आवश्यक है। क्योंकि इनका शरीर में संग्रहण नहीं होता। इनकी कमी से भूख कम हो जाती है। स्वास्थ्य लाभ नहीं मिल पाता। वजन वृद्धि के बावजूद कुपोषित बच्चें बीमारी एवं कुपोषण के प्रति संवेदनशील होते हैं। एक सूखा पीड़ित बच्चे को एक सामान्य बच्चे से अधिक पोषण की आवश्यकता होती है। जैसे–जैसे वजन में वृद्धि होती है, उसके पोषण में उसी अनुपात में वृद्धि जरूरी है। कुपोषित बच्चों की पाचन शक्ति कमजोर होती है। अतः आरिम्भक आहार इस तरह का दिया जाना चाहिए जिससे शारीरिक क्रियाएँ स्थिर हो, अधिक गंभीर कुपोषित बच्चा सामान्य भोजन में उपलब्ध P, Fe, Na का उपयोग करने में असमर्थ होता है। अतः आरम्भिक आहार ऐसा लेना चाहिए जो लवणों का संतुलन करें। शारीरिक क्रियाएं स्थिर करें। परंतु वजन वृद्धि में सहायक न हो।

ऊँट की शारीरिक क्रियाएँ : विलक्षण अनुकूलनता

सज्जन सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, जितेन्द्र कुमार, तकनीकी अधिकारी एवं
राकेश कुमार पूनियाँ, तकनीकी सहायक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

एशिया तथा अफ्रीका महाद्वीपों के शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में चारे, दाने तथा लोगों के वहन में ऊँट का उपयोग हो रहा है। उष्ट्र को अफ्रीका में 1970 व 1980 के दौरान पड़े भीषण अकाल के दौरान एक बहुआयामी पशु के रूप में पहचाना गया। इस दौरान इसी जानवर से लोगों की दूध, माँस, ऊन व अन्य रोजमर्रा की जरूरतें काफी हद तक पूरी हुई। एशिया व अफ्रीका महाद्वीपों के शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में पाले जा रहे घरेलू रूमिनेन्टस पशुओं की बजाय ऊँट ने यहां की विभीत्स परिस्थितियों में हर पहलू से ज्यादा अनुकूलन दर्शाया।

वर्तमान समय में उष्ट्र की दो प्रजाति है जिनमें एक कैमिलस बैक्टिरिअन्स जिसे 'बैक्टिरिअन ऊँट' कहा जाता है। यह प्रजाति मुख्य रूप से एशिया महाद्वीप में पाई जाती है व सामान्यतया शीत व शुष्क क्षेत्र में रहती है। उष्ट्र की दूसरी प्रजाति को अरब देशों के इतिहास व संस्कृति से घनिष्ठता के कारण 'अरेबियन ऊँट' भी कहा जाता है। यह प्रजाति एक कूबड़युक्त है तथा इसे प्राणीशास्त्र की भाषा में कैमिलस ड्रोमेडेरिअस कहा जाता है। यह प्रजाति उत्तरी अफ्रीका तथा एशिया के कुछ गर्म, शुष्क व अर्द्धशुष्क हिस्सों में प्रमुख रूप से मिलती है।

वर्गीकरण के हिसाब से ऊँट को आर्टीडेक्टाइला गण के टायलोपोडा उपगण में रखा गया है। इस उपगण में आने वाले जीवों के पैर गद्देदार व मुलायम होते हैं। ये वास्तविक रूमिनेन्टस से सींग की अनुपस्थिति के आधार पर भिन्न होते हैं। इनके अमाश्य का अग्र भाग संरचनात्मक व कार्यिकी से भी वास्तविक रूमिनेन्टस से भिन्नता लिए हुए होता है। ऊँट की लाल रक्त कणिकाओं की अण्डाकार आकृति उन्हें समस्त स्तनधारियों से अलग विशिष्ट पहचान दिलाती है। जीवाश्मों के अध्ययन से मिले परिणामों के अनुसार ऊँट का प्रारम्भिक उद्विकास उत्तरी अमेरिका से हुआ प्रतीत होता है। प्रादिनूतन युग से पहले मिला सर्वप्रथम पूर्वज खरगोश से बड़ा नहीं था। प्रातिनूतन युग तथा किसी एक हिम युग के दौरान भी ऊँट की प्रजाति को देखा गया जो अलास्का एवम् साइबेरिया के मध्य जमीनी जुड़ाव होने के कारण ये ऊँट धीरे–धीरे एशिया महाद्वीप में भी फैल गए। उत्तरी अमेरिका में उद्विकास तथा वहाँ से प्रवास के दौरान कुछ उष्ट्र टोले मृत्यु के शिकार हो गए परंतु कुछ जानवर वहाँ से प्रवासित होकर दक्षिणी अमेरिका चले गए जो वर्तमान में दक्षिणी अमेरिकन उष्ट्र के रूप में अपनी पहचान बना चुके हैं।

एक कूबड़ीय ऊँटों की संख्या दो कूबड़ीय ऊँटों से बहुत अधिक है तथा इस प्रजाति का 90 प्रतिशत हिस्सा है। कुल अरेबियन ऊँटों का 80 प्रतिशत (120 लाख) हिस्सा अफ्रीका महाद्वीप के 18 से अधिक देशों में पाया जाता है तथा ये वहाँ की घरेलू पशुधन संख्या का अहम हिस्सा है। एक कूबड़ीय ऊँट एशिया के मध्य–पूर्व हिस्सों जैसे तुर्की, ईरान, अफगानिस्तान, उत्तरी पूर्वी भारत, चीन तथा दक्षिणी पश्चिमी सोवियत संघ में प्रमुख रूप से पाये जाते हैं। दो कूबड़ीय ऊँट ज्यादातर दक्षिणी रूप के पहाड़ी क्षेत्रों, चीन

व मंगोलिया के ठण्डे रेगिस्तान में मिलते हैं। एक अध्ययन के अनुसार चीन के इन ऊँटों की संख्या 6 लाख के आस–पास है जिनमें से 60 प्रतिशत से अधिक तो मंगोलिया में आंतरिक हिस्सों में मिलते हैं।

एक कूबड़ीय ऊँटों में विशिष्ट कार्यिकी व भौतिकी विशेषताएं होती है जो इन्हें वीभत्स परिस्थितियों में जीवित रहने, वृद्धि करने तथा दूध व माँस उत्पादन में सक्षम बनाते हैं जबकि इन्हीं परिस्थितियों में गाय, भेड़ व बकरिया मुश्किल से ही जीवित रह पाती है।

किसी भी पशु के शरीर पर मौजूद आवरण, त्वचा का रंग व उसका संगठन तथा उपत्वचा में मौजूद वसा की परतें ही उसे वातावरण के उच्च तापमान से बचाती है। ऊँट के शरीर पर उच्च तापमान के दौरान आने वाली उच्च स्तरीय सौर विकिरणों से बचने के लिए एक मुलायम परावर्ती आवरण होता है जो न तो इतना घना होता है कि पसीने को रोके व न ही इतना पतला होता जो सौर विकिरणों को सीधे त्वचा तक पहुंचाने दें। इसके अलावा ऊँट की ऊँचाई, शारीरिक भार भी गर्मी से बचाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लम्बे पैरों के कारण यह जमीन से 6 फीट ऊँचाई लिए हुए होता है जिससे रेगिस्तान की हवा शरीर के नीचे से निकलती रहती है व शरीर को ठण्डा रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। अधिक शारीरिक भार होने के कारण छोटे व हल्के पशुओं की तुलना में धीरे–धीरे गर्म होता है। पैरों व कूबड़ में अधिक वसा उत्तकों की उपस्थिति त्वचा का सतही भाग, शारीरिक द्रव्यमान की बजाय बढ़ाती है जो उष्मा प्रबंधन में एक अन्य लाभप्रद लक्षण है। ये सभी कार्यिकी सरंचनाएँ ऊँट को गर्म व शुष्क प्रदेश में रहने के लिए अनुकूलित करती है।

उष्ट्र का सबसे महत्वपूर्ण अनुकूलन बहुत लम्बे समय तक बिना पानी पिए जीवित रहना है। हालांकि यह महत्वपूर्ण गुण चारे की गुणवत्ता व मात्रा दोनों पर निर्भर करता है। बसन्त व वर्षा ऋतु में जब चारे में पानी की अधिकता होती है तब वह बिना पानी के और भी अधिक दिन रह सकता है और जब ग्रीष्म ऋतु आती है तब चारे के सूखने के कारण उसमें नमी की उपलब्धता भी कम रहती है व उष्ट्र को पानी की आवश्यकता ज्यादा महसूस होती है। ग्रीष्म ऋतु में अपने शरीर में पानी की कमी के दौरान ऊँट अपने शारीरिक वजन के 30 प्रतिशत तक पानी पी सकता है। यद्यपि ऊँट पानी को संरक्षित रखता है परंतु इसका मतलब यह नहीं है कि यह अपने शरीर में पानी का भण्डारण करता है। पानी के संरक्षण हेतु ऊँट बहुत सारी विधियाँ अपनाता है। इनमें तापमान नियन्त्रण, वृक्क व आहारनाल द्वारा पानी संरक्षण तथा उपापचयी क्रियाओं द्वारा पानी की क्षति नहीं होती है। अधिक बालों वाले पशुओं में पसीने का वाष्पीकरण उनके बालों के सिरे से होता है जबकि ऊँट में यह प्रक्रिया सीधे त्वचा से होती है जिससे वाष्पीकरण हेतु जरूरी गुप्त उष्मा की कम मात्रा की जरूरत पड़ती है व साथ ही साथ बालों के सिरे से वाष्पीकरण की बजाय इसमें त्वचा बहुत जल्दी व प्रभावी ढंग से ठण्डी भी हो जाती है।

एक अन्य प्रक्रिया के तहत ऊँट वृक्कों ग्लोमेरुलर में फिलट्रेशन की दर को घटाकर, वृक्क नलिकाओं में पानी के निष्कर्षण को बढ़ाकर पानी की क्षति को कम करता है। इन दोनों क्रियाओं से मूत्र में पानी की मात्रा बहुत कम होती है तथा मूत्र बहुत सान्द्रित होता है। उष्ट्र के गुर्दे में मेड्यूला व कार्टेक्स का अनुपात भी 4:1 होता है जो इसे वृक्क द्वारा मूत्र को सान्द्रित करने में मदद करता है। इसके साथ–साथ कम मात्रा में बनाया यह सान्द्रित मूत्र भी ऊँट द्वारा अपने

पिछले पैरों तथा पूँछ को ठण्डा करने के काम आता है।

ऊँट की उपापचयी क्रियाएँ भी तापमान के उतार–चढ़ाव के प्रति संवेदनशील होती है। उच्च तापमान के दौरान अन्य पशुओं की तरह ऊँट की उपापचयी क्रियाओं की दर भी बढ़ती है। परंतु निर्जलीकरण के दौरान उच्च तापमान में थायरॉक्सीन हॉर्मोन का उत्पादन कम हो जाता है जिससे फुसफुसों से पानी की क्षति कम होती है व थायरॉक्सीन का स्तर कम होने से उपापचयी दर भी कम हो जाती है जिससे भी पानी की क्षति रूकती है। इस बात के भी प्रमाण है कि समान वातावरण में रह रहे ऊँटों में पानी का चक्रीकरण (टर्नओवर) अन्य पशुओं की अपेक्षाकृत आधा ही होता है जिससे भी पानी का संरक्षण होता है।

अतः इन सभी प्रक्रियाओं द्वारा ऊँट अपने शरीर में पानी का संरक्षण कर काफी लम्बे समय तक बिना पानी के भी अपनी शारीरिक क्रियाओं को सामान्य बनाए रखते हुए जीवित रह सकता है व इस मिथक को भी खारिज करता है जिसके अनुसार ऊँट अपने शरीर में बहुत अधिक मात्रा में पानी का भण्डारण कर सकता है। इस सभी वीभत्स परिस्थितियों में आवास होने के कारण व अपनी अनूठी व विलक्षण अनुकूलनीय क्षमताओं के कारण यह रेगिस्तान का जहाज वहाँ आवासित पशुपालकों व गरीब किसानों की जीविकोपार्जन का प्रमुख स्रोत रहा तथा आज भी है।

साभार – रिचर्ड

उष्ट्र दौड़ : एक प्राचीन खेल

राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं बलदेव दास किराड़ू, अनुसंधान अध्येता
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

उष्ट्र दौड़ एक प्राचीन खेल है जो कि सातवीं शताब्दी में इस्लामिक युग के दौरान अरब प्रायद्वीप में प्रसिद्ध था। उष्ट्र दौड़ परम्परागत रूप से उस क्षेत्र में घुड़–दौड़ से पिछड़ा होने के बावजूद, सामाजिक एकत्रण व उत्सव आदि पर लोक खेल के रूप में प्रचलित थी। उष्ट्र दौड़ में सामान्यतः एक कूबड़ीय ऊँट, अरबी ऊँट (केमलस ड्रोमिडेरियस) का ही उपयोग होता है, जो कि 65 किमी/घंटा की अधिकतम गति से दौड़ सकता है व 40 किमी/घंटा (25 मील/प्रति घंटा) तक की गति को काफी देर तक बनाए रख सकता है। यह कहा जाता है कि एक ऊँट लम्बी दूरी में घोड़े को भी दौड़ में पीछे छोड़ सकता है। एक घोड़े की औसत गति लगभग 46 मील प्रति घंटा है लेकिन घोड़ा थोड़े समय के लिए ही इस गति से दौड़ सकता है जबकि ऊँट अधिक समय के लिए। ''ड्रोमेडरी'' शब्द यूनानी/ग्रीक से लिया गया है जिसका अर्थ होता है ''दौड़ना''। ऊँट दौड़ पाकिस्तान, सऊदी अरब, मिस्र, बहरीन, जार्डन, कतर, संयुक्त अरब अमीरात, ओमान, आस्ट्रेलिया और मंगोलिया सहित दुनिया के कई देशों में आज भी लोकप्रिय है। व्यावसायिक ऊँट दौड़ इन देशों में सट्टेबाजी व पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। इन ऊँट दौड़ में बच्चे जॉकी (हल्के वजन के कारण) के रूप में इस्तेमाल किये जाते हैं। संयुक्त अरब अमीरात व खाड़ी देशों में ऊँट दौड़ के लिए जॉकी के रूप में उपयोग हेतु अफगानिस्तान, बांग्लादेश, ईरान, पाकिस्तान व सूडान देशों से बच्चे तस्करी कर लाये जाते हैं। ऊँट दौड़ में जॉकी बच्चे अक्सर ऊँटों से गिरने पर गंभीर रूप से घायल हो जाते हैं। इसलिए वर्ष 2002 से संयुक्त अरब अमीरात व कतर में मानव अधिकारों के हनन को ध्यान में रखते हुए जॉकी बच्चों (15 साल की उम्र से कम) के उपयोग पर कानूनी प्रतिबंध लगाया गया है। अब रोबोट जॉकी भी उपलब्ध है जिनका ऊँट दौड़ में प्रयोग किया जा रहा है।

सबसे लोकप्रिय ऊँट दौड़ आस्ट्रेलिया के क्वींसलैंड में होती है जिसे 'बोउलिया डेजर्ट सैंड' कहा जाता है। इसमें 25,000 डॉलर (आस्ट्रेलियाई) का पुरस्कार प्रदान किया जाता है। दूसरी सबसे लोकप्रिय ऊँट दौड़ आस्ट्रेलिया के एलिस स्प्रिंग्स में आयोजित की जाती है और इसे 'कैमल कप' के नाम से जाना जाता है। भारत में राजस्थान के पुष्कर में हर वर्ष ऊँट दौड़ आयोजित की जाती है।

अरब देशों में, 20 वीं सदी के अन्तिम तीन दशकों में ऊँट दौड़ प्रतियोगिताओं को नियंत्रित करने के लिए तथा नियमों व विनियमों को तैयार करने हेतु संगठन स्थापित किए गए। अरब देशों व मध्य पूर्व में यह खेल अत्यधिक लोकप्रिय है, इसलिए अब ऊँटों को चयनात्मक प्रजनन, विशेष प्रशिक्षण व पोषण के द्वारा दौड़ में उपयोग के लिये तैयार किया जाता हैं। संयुक्त अरब अमीरात में परिष्कृत प्रशिक्षण विधियाँ, उपकरण व तकनीकें जैसे ट्रेडमीलें व तरणताल भी ऊँटों के लिए उपलब्ध है। ऊँट दौड़ नियम सभी देशों में भिन्न हैं। संयुक्त अरब अमीरात में ऊँट दौड़ अक्टूबर से अप्रैल (वर्ष के सबसे ठंडे समय) में सम्पन्न होती

है। इसमें सामान्यतः 25 से 30 पंजीकृत ऊँट भाग ले सकते हैं। दौड़ से पहले, प्रशिक्षक व मालिक अपने भाग लेने वाले जानवरों के साथ दौड़ की दूरी व नियम (हैंडी कैपिंग) तय करते हैं। हैन्डीकैपिंग एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा कुछ ऐसे उपाय किए जाते हैं जिससे कि भाग लेने वाले ऊँटों की शारीरिक क्षमताओं में अंतर का दौड़ पर असर को कम किया जा सके। हैन्डीकेपिंग मुख्यतया नस्ल, उम्र और लिंग के आधार पर तय की जाती है। ऊँटों की उम्र के आधार पर दौड़ की दूरिया निर्भर करती है। ऊँटों की दौड़ उम्र 2 से 3 वर्ष से शुरू होती है तथा आठ या नौ वर्ष तक रहती है, यद्यपि कुछ ऊँटों की दौड़ उम्र सामान्य से दुगनी हो सकती है। कम उम्र के ऊँटों के लिए दौड़ की दूरी 2.5 मील (4 किमी) व उम्रदराज जानवरों के लिए 6 मील (10 किमी) तक होती है। नर व मादा ऊँटों के वजन में अन्तर होने के कारण, दौड़ भी अलग से होती है। मादाएं सवारी के रूप में पसंद की जाने के कारण दौड़ में अधिक प्रयुक्त होती है। प्रारंभिक तैयारियाँ हो जाने के पश्चात् ऊँटों को लाइन में खड़ा कर दिया जाता है तथा प्रतियोगिता शुरू हो जाती है। एक परिपक्व ऊँट 20–25 मील प्रति घंटे (32–40 किमी) की गति से सरपट दौड़ सकता है। दौड़ के पश्चात् किसी भी तरह की बईमानी को रोकने हेतु मूत्र के नमूने एकत्रित कर प्रतिबंधित पदार्थ की उपस्थिति का परीक्षण किया जाता है। दौड़ में भाग लेने वाले ऊँटों को उनकी गर्दन में प्रत्यारोपित कोडित माइक्रोचिप के द्वारा पहचाना जाता है।

ई–कृषि शिक्षा : कृषि का ई–लर्निंग पोर्टल

रामदयाल रैगर, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी एवं डी. सुचित्रा सेना, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राष्ट्रीय कृषि नवोन्मेषी परियोजना (एनएआईपी) के सीखने तथा दक्षता बढ़ाने के कार्यक्रम के तहत राज्य कृषि विश्वविद्यालयों तथा अन्य संगठनों में कृषि विज्ञान, मत्स्य विज्ञान, डेयरी विज्ञान, पशु–चिकित्सा तथा पशुपालन, बागवानी, गृह विज्ञान तथा कृषि अभियांत्रिकी विषयों की स्नातक स्तरीय संवाद मूलक तथा मल्टीमीडिया ई–पाठ्य सामग्री विकसित की गई है। दूरदराज के संस्थानों/संकाय सदस्यों/छात्रों की सुविधा हेतु इस पोर्टल के माध्यम से ई–पाठ्य सामग्री को ऑफ लाइन डाउनलोड करने की सुविधा भी प्रदान की गई है।

उद्देश्य

ई–कृषि शिक्षा पोर्टल बनाने के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

1. कृषि शिक्षा के लिए एक स्वतंत्र वेब आधारित एकीकृत ई–लर्निंग पोर्टल की स्थापना करना,
2. कृषि विज्ञान (पशु चिकित्सा, पशु विज्ञान, मात्यसिकी, डेयरी, बागवानी तथा गृह विज्ञान आदि सहित) हेतु कृषि शिक्षा हेतु ई–पाठ्यक्रम डाटा प्रबन्धन हेतु उपयोगी साधन बनाना,
3. एन.ए.आई.पी. के शिक्षण तथा क्षमता विकास कार्यक्रम हेतु बनाए गए ई–शिक्षण पाठ्यक्रम के परिष्करण, अद्यतन तथा अनुरक्षण हेतु प्रभावी साधन एवं समाधान उपलब्ध कराना,
4. दूरस्थ क्षेत्रों में स्थित संस्थानों, संकाय सदस्यों/छात्रों के लिए ई–शिक्षण पाठ्यसामग्री को इसी पोर्टल पर डाउनलोड करने की सुविधा उपलब्ध करवाना जिससे कि ई–पाठ्यसामग्री को सीडी/डीवीडी आदि को डाक या कुरियर द्वारा भौतिक रूप से भिजवाना ना पड़े,
5. इससे यह भी आंका जा सकेगा कि इसका कितना उपयोग किया जा रहा है।

कृषि शिक्षा का संस्थागत ढांचा नेटवर्क :

–भागीदार/सहयोगी केन्द्र

(अ) वित्तीय सहायता : राष्ट्रीय कृषि नवोन्मेषी परियोजना (एनएआईपी) की वित्तीय सहायता एवं शिक्षण तथा क्षमता बढ़ाने के कार्यक्रम के तहत कृषि विश्वविद्यालयों तथा अन्य संस्थानों में सात विषयों (कृषि विज्ञान, मत्स्य पालन विज्ञान, डेयरी विज्ञान, पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान, बागवानी, गृह विज्ञान तथा कृषि अभियांत्रिकी) की स्नातक स्तरीय संवादमूलक तथा मल्टीमीडिया आधारित ई–पाठ्यक्रम सामग्री बनाई गई है।

(ब) समन्वयक इकाई : भा.कृ.अनु.परिषद, नई दिल्ली का कृषि शिक्षा संभाग

विभिन्न विषयों की बनाई गई ई–शिक्षण सामग्री की परिष्करण, अद्यतन, अनुरक्षण तथा जीवंत रखने हेतु

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का शिक्षा संभाग निम्नलिखित विश्वविद्यालयों/संस्थानों के बीच समन्वय बनाता है–

– तमिलनाडू पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, चैन्नई द्वारा पशु चिकित्सा एवं पशु पालन विज्ञान के स्नातक स्तरीय (बीवीएससी एंड एएच) के ई–शिक्षण सामग्री का परिष्करण तथा अद्यतन किया जाता है,

– गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा कृषि में स्नातक स्तरीय (बी.एस.सी. –कृषि) पाठ्यक्रम का परिष्करण एवं अद्यतन किया जाता है,

– आनंद कृषि विश्वविद्यालय, आनंद (गुजरात) द्वारा कृषि अभियांत्रिकी में स्नातक स्तर (बी.टेक.) के ई–पाठ्यसामग्री का परिष्करण एवं अद्यतन किया जाता है,

– आचार्य एन.जी. रंगा कृषि विश्वविद्यालय, हैदराबाद द्वारा बीएससी (गृह विज्ञान) के ई–पाठ्यक्रमों का परिष्करण एवं अद्यतन किया जाता है,

– राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा बी.टेक. (डेरी टेक्नोलॉजी) के ई–पाठ्यसामग्री का परिष्करण एवं अद्यतन किया जाता है,

– डॉ. वाय एस परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन द्वारा बी.एससी. (बागवानी) डिग्री कार्यक्रम के ई–पाठ्यसामग्री का परिष्करण तथा अद्यतन किया जाता है।

समन्वयक इकाई होने के नाते भा.कृ.अनु.परिषद, नई दिल्ली के शिक्षा संभाग की जिम्मेदारियाँ निम्नलिखित हैं –

– समेकित ई–शिक्षण पोर्टल हेतु बनाए गए सॉफ्टवेयर को अद्यतन रखना,

– कृषि शिक्षा से जुड़े संकाय सदस्यों एवं छात्रों को दिन–रात 24/7 सुविधा उपलब्ध करवाने हेतु बनाए गए एकीकृत ई–शिक्षण पोर्टल का रखरखाव करना,

– सभी सहभागी संस्थानों द्वारा पाठ्यसामग्री के परिष्करण, अद्यतन तथा अपलोड गतिविधियों बाबत सलाह देना तथा उसका पर्यवेक्षण करना,

– ई–शिक्षण सामग्री का नियमित रखरखाव तथा जीवंत बनाए रखने हेतु निगरानी करना,

– संकाय सदस्यों/छात्रों हेतु सहभागी विश्वविद्यालयों के बीच समन्वय स्थापित कर कार्यशालाओं का आयोजन करना,

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के शिक्षा संभाग के साथ समन्वय करने वाले विश्वविद्यालयों/संस्थानों की जिम्मेदारियाँ :–

– ई–पाठ्य सामग्री अपलोड तथा अद्यतन करने हेतु लक्ष्य/उपलब्धियाँ तय करना,

– परिष्करण समूह द्वारा सुझाए गए सुझाओं के आधार पर ई–पाठ्यसामग्री को अद्यतन करना,

– विभिन्न विषयों के सम्बन्धित विषय–विशेषज्ञों की पहचान करना तथा ई–पाठ्यसामग्री बनाने तथा वर्तमान एवं भविष्य की चुनौतियों को समाहित करने वाली विषय–वस्तु तैयार करवाना,

– ई–शिक्षण सामग्री में संशोधन, अद्यतन तथा अपलोड करने हेतु टीम बनाना,

– एकीकृत ई–शिक्षण सामग्री पोर्टल पर संशोधित ई–शिक्षण सामग्री अपलोड करना,

– ई–शिक्षण पोर्टल पर ई–पाठ्यसामग्री विषय वस्तु की गुणवत्ता एंव मात्रा आदि का ध्यान रखना।

कीटनाशक रसायनों के प्रयोग में सावधानियाँ

रवि प्रकाश नागा, *कृषि अधिकारी, देना बैंक, बीकानेर* एवं जगन सिंह गोरा, वैज्ञानिक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर

आधुनिक एवं वैज्ञानिक खेती के युग में अधिक पैदावार लेने के लिए फसल सुरक्षा अति आवश्यक है। कीटनाशी, फफूंदनाशी एवं अन्य रसायन जो फसल सुरक्षा में प्रयोग होते हैं, प्रायः बहुत जहरीले होते हैं। इसलिए इनके प्रयोग में सावधानी रखना भी उतना ही आवश्यक हैं, जितना कि इनसे फसल सुरक्षा का अधिक पैदावार एवं अच्छी गुणवत्ता वाली फसल लेकर अधिक लाभ उठाना। इसलिए फसलों के कम पैदावार के कई कारणों में से कीट, बीमारियाँ एवं खरपतवार प्रमुख हैं। अधिक उत्पादन लेने हेतु बुआई से पूर्व बीजोपचार तथा बुवाई के उपरान्त कीट नियन्त्रण एवं समय–समय पर बीमारियों से बचाव हेतु विभिन्न रासायनिक दवाओं का प्रयोग किया जाता है। जिनमें से अधिकतर रसायन अति विषाक्त होते है। जितना इनके प्रयोग की आवश्यकता हैं उससे कहीं अधिक इनके प्रयोग में सावधानी रखने की है।

कीटनाशकों को निर्धारित मात्रा से अधिक या गलत तरीके व असावधानी से प्रयोग करने पर हानिकारक परिणाम हो सकते हैं। कीटनाशक रसायन न केवल मनुष्यों बल्कि पशुओं–पक्षियों इत्यादि के लिए भी घातक है।

इनके प्रयोग में किसी प्रकार की दुर्घटना या हानि से बचने के लिए या इनका पर्यावरण पर कोई बुरा असर न हों, इसलिए कुछ बातों का ध्यान रखने के साथ–साथ इनके प्रयोग के समय क्या–क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए, इनकी जानकारी किसानों को होना आवश्यक है। कीटनाशकों के घातक प्रभावों से बचने के लिए आवश्यक होता है कि उन पर लिखे हुए निर्देशों का पालन ठीक ढंग से किया जाए। जिसमें किसी प्रकार की लापरवाही न बरती जाए। इसलिए इनका प्रयोग करते समय हमें अत्यधिक सावधानी रखनी चाहिए।

कीटनाशकों की खरीददारी के समय सावधानियाँ

1. कीट की पहचान व उसकी गम्भीरता के आधार पर सिफारिश किए गए कीटनाशक ही खरीदें।
2. कीट नाशकों के विषैलेपन की जानकारी को पैकिंग पर छपे बर्फीनुमा आकृति के रंगों से समझना चाहिए। लाल रंग सबसे खतरनाक तथा पीला, नीला व हरा रंग क्रमशः कम खतरनाक होते हैं। यथासम्भव सुरक्षित कीटनाशक का ही चयन करें।
3. कीटनाशक के निर्माता, उसमें उपस्थित सक्रिय तत्व तथा निष्क्रिय तिथि ध्यान से पढ़ कर उसका अनुसरण करें। ताकि ज्यादा पुराना नहीं दिया जा सके।
4. कीटनाशक खरीदने, उनके भण्डारण व उपयोग करते समय बच्चों को शामिल न करें।
5. कीटनाशक हमेशा मूल पैकिंग में ही खरीदें, खुली पैकिंग वाला कीटनाशी कभी ना खरीदें।
6. केवल उतना ही कीटनाशी खरीदें जितना आवश्यक हो,
7. कीटनाशक खरीदते समय साबुन की टिकिया व अंगोछा या तौलिया अवश्य खरीदें तथा इसे प्रयोग करने के बाद उपयोग करें।
8. कीटनाशक ज्यादा मंहगा नहीं हो ताकि कम खर्चे में अधिक लाभ मिल सकें।

कीटनाशको के प्रयोग से पहले सावधानियाँ

1. कीटनाशकों के प्रयोग से पहले लेबल व निर्देश पुस्तिका अवश्य पढें।
2. केवल निर्धारित मात्रा में ही प्रयोग करें।
3. प्रयोग से पहले स्प्रेयर की जांच कर लें तथा पम्प द्वारा पानी से टेस्ट करें। अगर आवश्यक हो तो छिड़काव यंत्र को पहले ठीक करवा लें ताकि कोई रिसाव न हों।
4. घर में काम आने वाले बर्तनों को छिड़काव के लिए इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।
5. कीटनाशक व पानी को हाथ से न मिलाएं बल्कि दस्ताने पहनकर किसी लकड़ी की छड़ी से ही मिलाएं।
6. छिड़काव के समय मुंह पर कपड़ा या मास्क का होना जरूरी है।
7. जहाँ तक हो सकें अपने शरीर को कपड़ों से पूरा ढक कर रखें।
8. शरीर पर किसी प्रकार का तेल इत्यादि लगाकर छिड़काव न करें।
9. छिड़काव करने से पहले शरीर पर देख लेवें की लगी (चोट) हुई तो नहीं है। यदि हो तो किसी दूसरे से व्यक्ति से प्रयोग करना चाहिए।
10. कीटनाशक तथा खरपतवार का प्रयोग एक स्प्रेयर से कभी न करें, उनके लिये अलग–अलग स्प्रेयर होने चाहिए।
11. यदि बारिश आने की संभावना हो तो कीटनाशक का प्रयोग स्थगित कर देना चाहिए। स्प्रे के बाद अगर बारिश हो जाए तो फिर से स्प्रे कर देना चाहिए।

कीटनाशकों का प्रयोग करते समय रखी जाने वाली सावधानियाँ

1. कीटनाशक डिब्बों को आंख व नाक से दूर रखकर खोलें।
2. कीटनाशकों का प्रयोग करते समय उचित परिधान उपयोग में लें।
3. बीज उपचार के समय हाथों में दस्तानें पहनने चाहिए। उपचारित बीज को छाया में सुखाना चाहिए और इसे बाकी अनाज से पृथक रखें । बीज उपचार बिजाई से 1–2 दिन पहले कर लेना चाहिए।
4. दानेदार कीटनाशक प्रयोग के समय हाथों में दस्ताने पहनना अति आवश्यक है। यह कीटनाशक केवल निर्धारित मात्रा के अनुसार ही प्रयोग करें। कीटनाशक की ज्यादा मात्रा पत्तों को जला देती है।
5. डस्टिंग (धूड़ा) सुबह के समय जब ओस होती हैं तभी कर लेना चाहिए।
6. कीटनाशक का छिड़काव करते समय यह ध्यान रखें कि यह आंख, कान या शरीर किसी अन्य भाग पर न गिरें।
7. कभी भी अकेले में कीटनाशक छिड़काव के लिए न जाएं।
8. शराब व अन्य नशीले पदार्थों का सेवन करके छिड़काव न करें।
9. कीटनाशक को घर या पशुओं के रहने के स्थान पर न मिलाएं बल्कि खेत में ही मिलाएं।
10. स्प्रयेर को ऊपर तक न भरें, बल्कि कुछ भाग खाली रखें।
11. कीटनाशक का छिड़काव करते समय नाक व मुंह को किसी साफ कपड़ें से ढक ले एवं आँख पर चश्मा लगाएं।
12. कीटनाशक का छिड़काव करते समय कपड़ों के ऊपर से स्प्रे ओवर कोट का प्रयोग करना चाहिए।
13. कीटनाशक का छिड़काव करते समय धूम्रपान, तम्बाकू चबाना या अन्य खाद्य पदर्थो का सेवन न करें, ये सभी करने से पहले स्प्रेयर को एक तरफ रखकर साबुन से हाथ–मुंह धो लें।

14. कीटनाशक रसायनों का स्प्रे व डस्टिंग (धूडा) करते समय स्प्रे करने वाले का वायु की दिशा के विपरीत उल्टे चलना चाहिए। ऐसा करने से रसायन उसके ऊपर नहीं गिरेगा।
15. कीटनाशकों का छिड़काव सुबह या शाम को ही करना चाहिए।
16. कीटनाशकों का छिड़काव करने के बाद गाय–भैंस का दूध नहीं निकालें, उससे पहले अपने हाथों को साबुन से अच्छी तरह धोना चाहिए।

कीटनाशक छिड़काव के बाद की सावधानियाँ

1. कीटनाशक छिड़काव के बाद साबुन से भली–भाँति स्नान करना चाहिए।
2. कीटनाशक छिड़काव के बाद पहने हुए वस्त्रों को धोकर रखना चाहिए।
3. छिड़कने के बाद बचे हुए कीटनाशक को मूल पैकिंग मे ढक्कन बंद करके सुरक्षित स्थान पर रखें।
4. कीटनाशक छिड़काव के बाद स्प्रयेयर को पानी से धो कर साफ करें एवं सुखा कर रखें।
5. कीटनाशक छिड़काव के बाद कोई तकलीफ महसूस हो तो टोटके अपनाने की बजाए तुरंत डॉक्टर की सलाह लें तथा उपचार करवाएं।
6. खाली डिब्बों का निपटारा, कागज के डिब्बे को जला दें या इनके छोटे–छोटे टुकड़ें करके पीने के पानी के स्त्रोत से दूर किसी अन्य जगह पर दबा दें। प्लास्टिक व धातु के डिब्बे या ड्रमों को दो या तीन बार पानी से धोयें तथा बाद में तोड़कर चपटा बनाकर पानी के स्त्रोत से दूर जमीन में दबा दें।
7. थोड़ी मात्रा में बचे–खुचे कीटनाशक को किसी अन्यत्र स्थान पर पानी के स्त्रोत से दूर या खेत में एक तरफ गड्डे में डालकर डिब्बे को भी तोड़कर दबा दें।
8. उपचारित खेतों में से कुछ दिनों तक चारा, सब्जी इत्यादि न काटें।
9. उपचारित खेतों में बैठ कर कुछ दिनों तक खाना–पीना ना करें।
10. छिड़के गये कीटनाशी का ब्योरा लिखकर रख लेना चाहिए।
11. कीटनाशक छिड़कने के बाद उस जगह किसी मनुष्य व जानवर को नहीं जाने देना चाहिए।

कीटनाशको का भण्डारण

1. कीटनाशकों को हमेशा ठण्डे हवादार सूखे व खाली कमरे में रखें।
2. कीटनाशकों के भण्डार में ताला लगा कर तथा बच्चों की पहुँच से दूर रखें।
3. कीटनाशक, खरपतवारनाशक एवं फफूंदीनाशकों को अलमारी के अलग–अलग खानों में लेबल लगा कर रखें ताकि गलती से उनका उल्ट–पुल्ट प्रयोग न हो सकें, तथा आसानी से ढूंढ़ा जा सकें।
4. कीटनाशकों का भण्डारण रसोई या सोने के कमरे में नहीं करना चाहिए।
5. कीटनाशकों को रिहायशी स्थान, पशु, चारे व पालतू जानवरों से दूर बंद कमरे में रखें।
6. कीटनाशकों को खुले कमरे, टपकती छत, टीन या एसबैस्टस की छत वाले कमरे में न रखें।
7. कीटनाशकों को किसी अन्य बोतल या डिब्बे में भण्डारण ना करें, इन्हें मूल पैक में ही रखें।
8. कीटनाशकों को पहचानने के लिए उन्हें सूंघना या चखना नहीं चाहिए बल्कि उन पर लिखे लेबल को पढ़कर उसकी पहचान करना चाहिए।

इस तरह उपरोक्त सावधानियों को ध्यान में रखते हुए यदि कीटनाशक का प्रयोग किया जाए तो इनसे होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।

थार रेगिस्तान में ऊँट सफारी का बढ़ता कारोबार : एक आकलन

जितेन्द्र सोलंकी, ऊँट सफारी संचालक
विनायक डेजर्ट सफारी व गेस्ट हाऊस, बीकानेर

थार रेगिस्तान विश्व का सबसे छोटा तथा सबसे अधिक घनी आबादी वाला रेगिस्तान है। राजस्थान की कुल आबादी का लगभग 40 प्रतिशत भाग आबादी थार रेगिस्तान में निवास करता है। रेगिस्तान में लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि व पशुपालन है।

थार मरुस्थल की वेशभूषा, रीति–रिवाज, संस्कृति, त्यौहार, लोक नृत्य, लोक संगीत अपने आप में अनूठे हैं तथा बहुत संख्या में देशी व विदेशी पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं और इसी राजस्थान की अनूठी संस्कृति से पर्यटकों को अवगत कराने के लिए मैंने सफारी व्यवसाय सन 2005 को चुना तथा लगभग पिछले 7 वर्षों से मैं पर्यटकों को रेगिस्तान के गाँव की संस्कृति व पर्यावरण से अवगत करवा रहा हूँ और इसके लिए ऊँट सफारी सबसे उत्तम है।

राजस्थान में पर्यटक सारे विश्व से आते हैं परंतु सबसे अधिक पर्यटक जर्मनी, फ्राँस, इंग्लैण्ड व अमेरिका से आते हैं। इन देशों के लोगों ने हमेशा ऊँट के बारे में सुना होता है कि ऊँट 'रेगिस्तान का जहाज' है तथा यह विषम परिस्थितियों (50 डिग्री सेल्सियस) में भी प्यासा रह सकता है या ऊँट को जन्तुआलयों में देखा होता है। अतः जब ये पर्यटक राजस्थान आते हैं व सड़कों पर ऊँट पालकों द्वारा ऊँट का प्रयोग ऊँट गाड़े व सामान लाने–ले जाने में देखते हैं तो इनके मन में भी ऊँट सफारी करने की इच्छा जागृत हो जाती है। अतः इसी फलस्वरूप मैंने विनायक डेजर्ट टूर व सफारी की स्थापना सन् 2005 में की है।

ऊँट सफारी एवम् ऊँट सवारी पर्यटकों के लिए एक बहुत बड़ा रोमांच होता है वहीं दूसरी तरफ गाँव वालों के लिए एक नया व्यवसाय का रुप लेता जा रहा है। जैसलमेर में तो ऊँट सवारी वहाँ के गाँव वालों का मुख्य व्यवसाय बन चुका है। बीकानेर में ऊँट सफारी का प्रचलन पिछले कुछ वर्षों से शुरू हुआ है। बीकानेर के आस–पास के गाँवों जैसे रायसर, हिम्तासर, गाढ़वाला, देशनोक, रासीसर, पितृरासर आदि गाँवों में हम लोग ऊँट सफारी का संचालन करते हैं। यह ऊँट सवारी दो घण्टे की, एक दिन, दो दिन, तीन दिन, पाँच दिन, सात दिन व पंद्रह दिन तक जैसलमेर तक करते हैं। इस दौरान हम लोग ऊँटों व ऊँट गाड़ों का प्रयोग करते हैं।

रायसर गाँव में पाँच वर्ष पूर्व तक ऊँट बहुत कम थे परंतु आज लगभग हर घर में कम–से–कम एक व कई घरों में दो से तीन ऊँट भी है। वह मुख्यतः इन ऊँटों का प्रयोग ऊँट सफारी में करते हैं। इस ऊँट सफारी के दौरान हमारे एक समूह में कम–से–कम पाँच पर्यटक होते हैं। सभी पर्यटकों की ऊँट की सवारी की इच्छा पूर्ण करने के लिए अलग–अलग ऊँट की व्यवस्था होती है तथा खाना बनाने का सामान, राशन, पानी, टेन्ट आदि जरूरी सामान ऊँट गाड़े में होता है।

इस तरह पर्यटक एक दिन, दो दिन या जितने भी दिन चाहे ऊँट सवारी का आनंद लेते हुए गाँवों के रीति–रिवाज, संस्कृति, सभ्यता, लोक गीत–संगीत, वेशभूषा से अवगत होते हुए रेगिस्तान को काफी करीब से जान पाते हैं। यहाँ तक कि इस दौरान वे गाइड व ऊँट पालकों से मरुस्थलीय वन्य–जीव व वनस्पति की जानकारी भी प्राप्त करते हैं।

एक ऊँट पालक को हम एक दिन का छः सौ रूपये से लेकर आठ सौ रुपये तक देनगी देते हैं तथा उनका खाना–पीना सब मुफ्त होता है। यहाँ तक कि ऊँट सवारी के समापन पर पर्यटकों द्वारा उनके कार्य व आचरण से खुश होकर अलग से बख्सीश/टीप भी दी जाती है। अतः लगभग यह ऊँट पालक सफारी द्वारा हर माह 8000–12000 रुपये अतिरिक्त कमा पाते हैं। सफारी के दौरान ऊँट पालक को ज्यादा कार्य नहीं करना पड़ता है व ऊँट के लिए भी बहुत सरल कार्य होता है। इसी कारण गाँवों में आजकल ऊँट सफारी के व्यवसाय के प्रति चाह बढ़ी है तथा इसका यह प्रभाव हुआ है कि ऊँट पालक ऊँट की सवारी के लिए विशेष ऊँट खरीद रहे हैं। ऊँट सफारी के प्रति पर्यटकों की चाह की वजह से गाँवों के प्रति गाँव वालों का लगाव व रूझान बढ़ा है जिससे जाने–अनजाने गाँव की संस्कृति भी समृद्ध व संरक्षित हो रही है।

जीवन दर्शन : रोटी–सा फुलाएँ जिन्दगी को

संगीता सेठी, पूर्व राजभाषा अधिकारी
भारतीय जीवन बीमा निगम, बीकानेर

बचपन की बहुत सारी बातें बाद में समझ आती है जब हम जीवन दर्शन के बहुत नजदीक होते हैं। बचपन में घर की देहरी पर बुआ के इंतजार में खड़ी होती और जब टैक्सी घर के सामने आती तो हम सबके चेहरे खिल उठते। बुआ हमारी दादी से मिलकर रो पड़ती। मुझे यह समझ नहीं आता था कि भला मिलकर भी क्या रोना। बुआ कहती – मायके आना कितना सुखद होता है। एक तरफ तो तवे पर पड़ी रोटी भी जल जाती है। इसलिए तो कभी ससुराल और कभी मायके के चक्कर लगने ही चाहिए। फिर बुआ मेरी माँ से चिरौरी करती कि मेरे रहते तू भी अपने मायके का चक्कर लगा आ। मैं तेरे बच्चे भी सम्भाल लूँगी और अम्मा को भी। आज मुझे बुआ की वो तवे पर पड़ी रोटी में पूरा जीवन दर्शन दिखाई देता है। हमारा जीवन का पूरा सफर ही एक रोटी की तरह है। रोटी का सफर गेहूँ के बीज से शुरू होता है। जितना उम्दा गेहूँ का दाना होगा उतना ही उसे छानने, बीनने और फटकने में कम समय लगेगा। इसी तरह मानव जीवन के बचपन में पड़े अच्छे संस्कार हों तो उसे तराशने में ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी। गेहूँ का आटा जितना बारीक होगा आटे में उतनी चोकर नहीं होगी कि उसे फेंका जाए। मानव जीवन में भी जितनी अच्छी आदतें होंगी तो कोई आदत छोड़ने को मजबूर नहीं होना पड़ेगा। अब बारी आती है आटा गूँथने की। आटे को जितना पानी चाहिए उतनी मात्रा में पानी डालकर मसला जाए, दबाया जाए तो आटा उतना ही मुलायम और लोचदार होगा। इसी तरह जीवन में जितने कठिन रास्तों से गुजरा जाए उतनी ही जिन्दगी आसान होगी। आटे को गूँथकर जितने अधिक समय रखा जाए आटा उतना ही मुलायम होगा और रोटी उतनी ही उम्दा बनेगी। जीवन में ऐसे ही रिश्तों का आटा है जिसे बेहतरी से गूँथना है। जितना ज्यादा समय उन्हें सहलाने में दुलारने में देंगे रिश्तों में उतनी ही मिठास होगी। मेरी दादी–माँ कहा करती थी कि आटे को गूँथ कर जितना देर रखोगे उतना ही उसमें मोह पड़ेगा और रोटी भी उतनी ही स्वाद बनेगी। आज उनका ये दर्शन भरा वाक्य समझ आता है।

अब बारी आती है रोटी बेलने की। जिन्दगी का आटा जितना मुलायम होगा उतनी रोटियाँ अच्छी बेली जाएँगी। पर जिन्दगी के गर्म तवे पर तो ये रोटियाँ जल ही जाएँगी ना। पर नहीं..... नहीं यहाँ बचपन में सुना हुआ मेरी बुआ का वो रोटी दर्शन याद आता है कि एक तरफ तो गर्म तवे पर रोटियाँ भी जल जाती हैं। हाँ ! तवे पर रोटी को बड़ी मुस्तैदी से उलट–पलट कर सेंकना पड़ता है तब रोटी पूरी फूलती है। जितना बनाने वाले को मजा आता है उतना ही खाने वाले को भी मजा आता है। माँ के तवे की रोटी जब फूलती थी तो कहती थी "तुझे भूख लगी है ना, तभी रोटी फूली है" असलियत तो ये है कि फूली हुई रोटी देखकर तो वैसे भी भूख लग जाती है। ऐसे ही जिन्दगी की रोटी भी कभी दुख तो कभी सुख के तापमान पर उलटती–पलटती फूल जाती और जिंदगी में आनन्द आता है। जिन्दगी की फूली हुई रोटी देखकर जिजीविषा पैदा हो जाती है। यदि जिन्दगी को केवल सुख के तापमान पर या केवल दुख के तापमान पर ज्यादा देर के लिए रख दिया जाए तो जिंदगी की रोटी फूलती नहीं है और नीरस बन जाती है। इसलिए जिन्दगी में विविध रस होने चाहिए। तो आइए! जिन्दगी को गेहूँ सा उम्दा, आटे–सा लोचदार, और रोटी–सा फुलाएँ और जिन्दगी को स्वादिष्ट बनाएँ ताकि हमारी जिजीविषा बनी रहे।

मेरे पग

झूमते छनछनाते पगों की आहट से, घर आँगन खिल जाता था,
जीवन मेरा दुलार की परिभाषा बन जाता था,
उन पगों की आहट को पकड़ने पूरा घर लग जाता था।
धोरों पर थिथकते थे ये पग, बागों में चहकते थे ये पग।
समय बीता मेरे पगों की आहट इंतज़ार में वो दिन रात बिताया करती थी,
मुझे भी चकमा देकर, दिल में छिप जाया करती थी।
लुका छिपी के खेल में अपने पगों को फुसलाता था,
नयनों से ही बाहर का संकेत कर डयूटी पर भाग जाया करता था।
मेरे पगों की आहट सुनकर बॉस भी खिल खिलाया करता था,
यह कह कर की अब तो काम हो जाएगा अपना दिल बहलाया करता था।
पगों की आहट व्यक्ति विशेष होती है, फुरती से पग रखने वाले अक्सर भुलक्कड़ होते हैं,
देर से पग रखने वाले अधिक गंभीर होते हैं, मध्यम गति की चाल निराली होती है।
पगों की आहट अब मंद हो गयी है,
वर्षों से इस चोले का वजन उठाए चाल भी धीमी हो गयी है।
इससे पहले की ये पग डगमगायें उन बाहों का सहारा दे दो,
जिनके सहारे ये पग आगे बढ़ रहे हैं।
पग–पग चलकर यह जीवन पल–पल घटने लगा है,
इससे पहले के जीवन की शाम हो जाये, मुझे इन पगों के निशां तो बनाने दो।
शायद कुछ पग इन पर चलकर, जीवन बदलें, हौंसले बन जाएंगे।
अपने पगों की चाल को कैसे भूल पाएंगे, ईश्वर की माया को कैसे जान पाएंगे।

राजेश कुमार सावल, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राजभाषा हिन्दी और उसका कार्यान्वयन

मदन केवलिया, पूर्व उप प्राचार्य
राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

कार्यान्वयन (कार्य+अनु+अयन) का अर्थ कार्य के बाद की गति अर्थात् कार्य निष्पादन में आने वाली समस्याओं का निराकरण। राजभाषा की क्रियान्विति में अनेक बाधाएँ आती है जिनका निष्ठापूर्वक समाधान हमें करना पड़ता है।

हमारे देश में 22 भाषाएँ मान्यता प्राप्त हैं। सभी का महत्व हम स्वीकारते हैं। राजभाषा के कार्यान्वयन हेतु केन्द्र सरकार का दिशा–निर्देश भी समय–समय पर मिलता रहता है। 1976 के राजभाषा नियम (यथा संशोधित 1987 ई.) के अनुसार राजभाषा के कार्यान्वयन हेतु 12 (बारह) धाराएं उपलब्ध हैं। धारा 1 में संक्षिप्त नाम आदि हैं। धारा 2 में देश को राजभाषा की दृष्टि से तीन भागों में विभक्त किया गया है। 'क' क्षेत्र में समस्त हिन्दी भाषी राज्य तथा अंडमान निकोबार शामिल है। 'ख' क्षेत्र में गुजरात, महाराष्ट्र तथा पंजाब राज्य आते हैं। क्षेत्र 'ग' में शेष सभी राज्य (तमिलनाडू को छोड़) आते हैं।

धारा 2 से स्पष्ट है कि हिन्दी में कार्य करने की क्षमता प्रत्येक अधिकारी/कर्मचारी में होनी चाहिए। धारा तीन से लेकर धारा बारह तक कर्मचारियों, अधिकारियों तथा प्रबंध मंडल के सदस्यों के लिए राजभाषा के क्रियान्वयन) का उल्लेख किया गया है। इन्हें संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

- राज्यों तथा केन्द्र सरकार से भिन्न कार्यालयों के साथ पत्र–व्यवहार– इसके लिए आवश्यक है कि ''पत्रादि मामूली तौर पर हिन्दी में होंगे। ''यदि अंग्रेजी में पत्राचार हो तो उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा।' यह भी कहा गया है कि ' हिन्दी में पत्रादि ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्य साधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या' आदि पर आघृत होंगे।
- केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि–

क क्षेत्र में स्थित कार्यालयों से केन्द्र के बीच पत्राचार हिन्दी में ही होगा।

- हिन्दी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर हिन्दी में ही केन्द्र द्वारा दिए जाएंगे।

धाराएँ 6,7,8 भी राजभाषा के क्रियान्वयन पर बल देती है।

धारा 9 हिन्दी में प्रवीणता तथा धारा 10 हिन्दी में कार्यसाधक ज्ञान होने की स्थिति को स्पष्ट करती है। हाई स्कूल/स्नातक स्तर तक हिन्दी शिक्षित व्यक्ति 'प्रवीण' माना जाएगा। हाई स्कूल या केन्द्र सरकार द्वारा प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति कार्यसाधक या काम चलाऊ हिन्दी का जानकार माना जाएगा।

धारा 11 में द्विभाषीय रूप पर बल दिया गया। मैनुअल संहिताएं, प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, लेखन सामग्री, नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्रशीर्ष, लिफाफे आदि हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में होंगे।

धारा 12 में कार्यान्वयन संबंधी नियमों के अनुपालन का दायित्व प्रशासनिक प्रधान पर ही रखा गया है। केन्द्र

सरकार भी समय–समय पर आवश्यक निर्देश जारी कर सकती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि राजभाषा के नियमों की अनुपालना गंभीरतापूर्वक करनी चाहिए।

कार्यालयों में प्रयोग

कार्यान्वयन संबंधी सिद्वान्त ऊपर दिए जा चुके हैं, अब इनका प्रयोगात्मक रूप भी देखना है। राजभाषा के व्यवहार संबंधी कठिनाइयाँ बहुत हैं किन्तु 'जहां चाह, वहां राह' वाला समाधान भी है।

कार्यान्वयन के लिए सभी अधिकारियों, कर्मचारियों तथा प्रबंध मंडल के अधिकारियों को समग्र रूप से कार्य करना होगा।

1. कर्मचारियों का दायित्व तथा समस्याएं (क क्षेत्र में)

सरकारी भाषा नीति इस प्रकार है –

1. हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर केवल हिन्दी में दिया जाएगा।
2. यदि पत्र अंग्रेजी में भेजा गया है तो उसके साथ हिन्दी अनुवाद भी होगा।
3. 'क' क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी में होंगे।

समस्याएं तथा समाधन

अधिकारियों/कर्मचारियों के सम्मुख लेखन के समय अनेक कठिनाइयाँ आती हैं, जैसे– (क) अंग्रेजी में कार्य करने की आदत (ख) अशुद्ध लिखने का डर (ग) अनुवाद संबंधी समस्याएँ संदर्भ ग्रन्थों का अभाव, (घ) हिन्दी में अंग्रेजी के समतुल्य शब्दों की जानकारी न होना (ड़) संकल्प शक्ति का अभाव इत्यादि।

समाधान

इच्छाशक्ति तथा मानसिकता में परिवर्तन के लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती है। कहा गया है– 'हिम्मत करे इन्सान, तो क्या हो नहीं सकता।' सब कुछ हो सकता है–

करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान
रसरी आवत जात ते, सिल पर परत निसान –वृंद

निरंतर राजभाषा संबंधी भाषण प्रतियोगिताएँ तथा कार्यशालाएँ इन सभी बाधाओं को दूर कर सकती है। हमें साहित्यिक हिन्दी की अपेक्षा सहज, सरल तथा समझ में आने वाली भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

निरंतर कार्य करने से भाषा में प्रवाह बनता है। कार्यालय टिप्पण, पत्रादि संकटमोचक हैं।

अनेक अशुद्ध शब्द भी लिए जाते हैं–महत्व (शुद्ध है महत्त्व)

अशुद्ध–उपरोक्त शुद्ध–उपर्युक्त (उपरि+उक्त) इकाई/ईसाई/दवाई/भाई का बहुवचन होगा –इकाइयाँ/दवाइयाँ या दवाइयों/भाइयों आदि। इसी प्रकार टिप्पणी की टिप्पणियाँ, स्त्री–स्त्रियाँ आदि।

कार्यसूची (Agenda) हिन्दी में लिखते हैं तो अन्य विषयों का भी अभ्यास करना चाहिए।

हिन्दी अधिकारी/प्रभारी के सम्मुख भी उपर्युक्त समस्याओं को रखा जाता है जिनका समाधान उन्हें अपने स्तर पर करना पड़ता है। कर्मचारी (स्टॉफ) भी कम होते हैं, फिर भी सभी का सहयोग लेकर कार्य सम्पन्न करना पड़ता है। वार्षिक पत्रिका भी प्रकाशित करनी होती है, अतः सभी अधिकारी/कर्मचारी पूरा सहयोग करते हैं और अत्यंत उत्कृष्ट पत्रिका का प्रकाशन होता है। करभ (राष्ट्रीय उष्ट्र

पत्र का नमूना

क्रमांक..... दिनांक.....

प्रेषक.....

सेवा में

विषय.....

संदर्भ.....

महोदय,

उपर्युक्त पत्र के संदर्भ निम्नांकित तथ्य प्रस्तुत किए जा रहे हैं.

2.

3.

भवदीय

.....

संलग्न.....

कई बार पत्र की प्रतिलिपियाँ भी भेजनी पड़ती है–

1. क्रमांक तथा दिनांक वही
2. प्रतिलिपि प्रेषित–

1.

2.

3.

अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर) इसका शानदार और जानदार उदाहरण है।

राजभाषा अधिकारी के कई पदनाम है। मंत्रालयों में इन्हें सहायक निदेशक/उप निदेशक कहा जाता है। कहीं हिन्दी अधिकारी/प्रभारी, राजभाषा भी कहा जाता है, किन्तु सभी के कार्य लगभग समान हैं।

1. राजभाषा अधिनियमों, नियमों आदि का ज्ञान तथा अपने प्रशासनिक प्रधान के कार्यों में सहायता करना।

2. कार्यान्वयन समिति की बैठकें बुलाना तथा उनका संचालन। वे प्रशासनिक प्रधान के परामर्श पर कार्य करते हैं। वे इसके सचिव सदस्य हैं।

3. हिन्दी का प्रचार–प्रसार, पत्रिका प्रकाशन आदि में सहयोग।

4. राजभाषा संबंधी पुस्तकें मंगवाना, पुस्तकालय में संदर्भ सामग्री की व्यवस्था करना इत्यादि।

5. अनुवाद की व्यवस्था।

6. हिन्दी संबंधी प्रोत्साहन योजनाओं को लागू करना तथा जानकारी देना।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि राजभाषा के कार्यान्वयन का मुख्य भार राजभाषा प्रभारी के कंधों पर हैं और वे इसका सफलतापूर्वक निर्वहन कर भी रहे हैं। हिन्दी दिवस, हिन्दी सप्ताह, हिन्दी पखवाड़ा आदि इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

भाषा का संबंध हमारी भावनाओं से हैं। राष्ट्रीयता सभी में कूट–कूट कर भरी हुई है, यह मानकर राजभाषा प्रभारी अपना दायित्व सहजता से निर्वाह (निभा) लेता है।

प्रशासनिक प्रधान : अनुपालन का दायित्व

नियम 1976 की धारा 12 में राजभाषा के कार्यान्वयन का दायित्व प्रशासनिक प्रधान को दिया गया है। प्रधान जी ही इस संबंध में दिशा–निर्देश तथा प्रभावी जाँच के लिए उपाय करने में सक्षम है।

प्रबंध मंडल के सम्मुख कर्मचारियों/अधिकारियों की सभी समस्याओं की उपस्थिति होती है जो राजभाषा के कार्यान्वयन से जुड़ी हुई है। उनके पास प्रशिक्षित कार्मिकों का अभाव होता है, कर्मचारियों में हिन्दी में कार्य करने की इच्छा शक्ति भी नहीं होती, जिसे जगाना पड़ता है। यदि प्रशासनिक प्रधान स्वयं भाषाविद् तथा सहिष्णु हैं, तो कार्यान्वयन में कभी कमी नहीं आ सकती। वस्तुतः "हिन्दी ही हमारे राष्ट्रीय एकीकरण का सबसे शक्तिशाली और प्रधान माध्यम है। (कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी)

और अंत में मेरा निवेदन है–

स्वाधीनता आन्दोलन का अभिलेख है हिन्दी
देश की एकता–अखंडता का अभिषेक है हिन्दी
अपनी सभी भाषाएँ राष्ट्र की वंदनीय वाणी हैं–
पर संस्कृत और संस्कृति का शिलालेख है हिन्दी।

कीड़ा पड़ै गोबर रै मांय, पपइयों मीठो बोल सुणाय।
अमल चामड़ौ गीलो होय, बिरखा हुवै, नी संसै कोय।।
यदि गोबर में कीड़े पड़े, पपीहा मीठी वाणी में बोले, अफीम व चमड़े में गीलापन आ जाए तो निश्चय ही वर्षा होगी।

हिन्दी भाषा का बाजारीकरण

संगीता सेठी, पूर्व राजभाषा अधिकारी
भारतीय जीवन बीमा निगम, बीकानेर

हम कौन थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी
आओ विचारें आज मिलकर, ये समस्याएँ सभी
(मैथिली शरण गुप्त)

कवि की यह पंक्तियाँ हिन्दी के आरम्भ से बाजारीकरण के दौर तक एकदम सटीक बैठती हैं। हम याद करें इतिहास की बातें तो हिन्दी प्राकृत भाषा से पालि भाषा और पालि भाषा से संस्कृत भाषा की डगर पकड़कर हिन्दी स्वरूप बनी। संस्कृत भाषा से बनी यह हिन्दी भले ही कितनी वैज्ञानिक थी पर उतनी ही क्लिष्ट थी। वह हिन्दी केवल पढ़ने लिखने और मंत्रोच्चार या वेदों–ऋचाओं और उपनिषदों की भाषा रही। लोक हृदय से दूर इस भाषा को आम आदमी कतई आत्मसात नहीं कर पाया। इसलिए हर भारतीय लोक–संस्कृति में हिन्दी अपभ्रंश होती चली गई और एक नई लोकभाषा पनपती गई पर हिन्दी का वास्तविक स्वरूप केवल पुस्तकों तक ही सीमित रहा।

मुगल काल और हिन्दी

फिर आया भारत में मुगलों का शासन जिसने भारत पर शासन तो किया ही बल्कि भारतीय सभ्यता–संस्कृति के साथ भारत की भाषा पर धावा बोल दिया। हिन्दी की क्लिष्टता में उर्दू की सहजता और मृदुता ने प्रभावित किया। अब क्लिष्ट हिन्दी उर्दू के साथ मिलकर लोकजुबान में बहने लगी। भले ही इसको शिक्षाविदों ने हिंदी की विकृति बताया या उर्दू का हिन्दी पर हमला बताया तो कुछ ने उर्दू को हिन्दी की बहन बताकर समर्थन भी दिया।

ब्रिटिश काल और हिन्दी

भारत का दुर्भाग्य कहें कि एक समृद्ध सभ्यता संस्कृति वाला देश बाहरी आक्रमणों से अब नहीं बचा और मुगल शासन के बाद ब्रिटिश शासकों ने भारतीय सभ्यता–संस्कृति को बुरी तरह प्रभावित किया। ब्रिटिश के 200 साल के शासन काल ने भारतीय सता की आत्मा में बुरी तरह घुसपैठ की। आम नागरिक तो जैसे अपना अस्तित्व ही खो बैठा। स्वतंत्रता की लम्बी लड़ाई के लिए भारतीयों को प्राणोत्सर्ग की सीमा तक पहुँच कर भारत को आजाद कराने की कहानी किसी से छिपी नहीं है। ऐसी परिस्थितिओं में जब देश का अस्तित्व बचाना मुश्किल हो रहा था तब ऐसे में भाषा की चुनौती तो गौण थी। ब्रिटिश काल में भारत के बच्चों को अंग्रेजी में पढ़ना पड़ता था, अंग्रेजियत के माहौल में रहना पड़ता था और सबसे बड़ी बात यह है कि हमें गुलामी की भाषा सिखाई जा रही थी। अगर शब्दों पर जाएँ, तो छठी कक्षा की बात याद आती है जब बीमारी के अर्जी लिखना सिखाया जा रहा था। "sir I beg to say that I am sick" और हमने रट्टू तोते की तरह यह अर्जी रट ली थी। जब वही अर्जी सातवीं कक्षा में हमारे एकक खुद्दार मास्टर जी ने सिखाई तो कहा देखो बच्चों! शब्दों पर ध्यान दो –sir I beg to say– यानि आप भीख माँगते हुए छुट्टी का आवेदन कर रहे हो। बच्चों ये भाषा अंग्रेजों की है उसे भूल जाओ। आप अर्जी इस तरह लिखो – "sir, this is my humble request that" – तब हमारा भी स्वाभिमान जाग चुका था ।

स्वतंत्रता के बाद की हिन्दी

स्वतंत्रता के बाद की हिन्दी भाषा अपना अस्तित्व खो चुकी थी। यहाँ हम छुट्टी की अर्जी लिखते थे वो भी अंग्रेजी में sir I beg to say– कहते हुए। "छुट्टी" और "अर्जी " उर्दू शब्दों का वर्चस्व और अंग्रेजियत के माहौल में हम तीतर रहे ना बटेर। शुरू के दो दशक तो हमने स्वयं को पहचानने में निकाल दिए फिर शुरू की अपने अस्तित्व को बचाने की लड़ाई। अपनी सभ्यता–संस्कृति को वापिस पाने की लड़ाई। अपनी खोई हुई भाषा को ढूँढने की लड़ाई। हमारे भाषाविद्‌ों ने फिर आवाज उठाई कि हिन्दी को फिर से अस्तित्व में लाया जाए। कार्यालयों मे अंग्रेजी भाषा अपनी गहरी जड़े जमा चुकी थी। सभी प्रपत्र, दस्तावेज, अनुबन्ध, करार संविदा जैसे काम–काज अंग्रेजी भाषा में ही हो रहे थे। आखिर इतनी गहरी जड़ों को उखाड़ फेंकना असंभव तो नहीं पर मुश्किल जरूर था। विभिन्न विचारधाराओं के भाषाविदों का तर्क–वितर्क चला। आम आदमी समझ ही नहीं पाया कि आखिर अंग्रेजी शब्दों का विस्थापन हिन्दी शब्दों से कैसे करें। क्योंकि ढेर सारे अंग्रेजी शब्द हमारी भाषा में तसल्ली से बैठ चुके थे। जिसमें स्टेशन, स्कूल, स्वेटर, कोट पेन्ट, बटन, ट्रेन, स्टॉप और भी ना जाने क्या–क्या। आम आदमी स्टेशन का अनुवाद कैसे करे और बटन को क्या कहे। अब इन पर अंग्रेजी भाषा समर्थकों का मखौल बनाया जाता है। स्टेशन को विश्राम–स्थल बटन को घुन्डी, ट्रेन को लोहपथ गामिनी या सिगरेट को धूम्रदन्डिका। लेकिन ये सब शब्द व्यावहारिक नहीं लगते थे, ना ही बोल–चाल की भाषा में समाहित लगते थे। इसी वाद–विवाद में 5 दशक निकल गए। भले ही इस दौरान 1 सितम्बर 1949 को हिन्दी को सदन में राजभाषा का दर्जा दे दिया गया और 5 दशकों में गृह मंत्रालय द्वारा राजभाषा को क्रियान्वयन के लिए समिति का गठन कर लिया गया। पिछले दशकों में हिन्दी के विकास की गति जितनी धीमी रही उससे ज्यादा बाजारीकरण के युग में हिन्दी के विकास की गति रही।

बजारीकरण के दौर में हिन्दी

और अब आया है बाजारीकरण का युग जब पूरा विश्व एक गाँव के समान सिमट कर रह गया है। विपणन विदों ने समूचे विश्व को एक बाजार मान लिया है। विपणन के लिए देशज सीमाएँ गौण हो गई हैं। हर देश व्यापार के लिए अपने देश की सीमाएँ, तोड़ कर पूरे विश्व में व्यापार करने को आतुर होने लगे हैं। ऐसे में किसी देश विशेष की सभ्यता संस्कृति गौण हो गई और सिरमौर हो गया उस देश का उत्पाद। अब ऐसे में भाषा का गौण होना तो स्वाभाविक था।

उत्पादों का बाजार

विपणन के विशेषज्ञों ने यह नारा दिया "थिंक ग्लोबली एण्ड एक्ट लोकली "यानि विश्व के अनुसार सोचें पर उसे स्थानीय जरूरत के अनुसार प्रस्तुत करें तो इसमें ना केवल उत्पादों को अनुकूल बनाने की जरूरत थी बल्कि स्थानीय भाषा समझने और बोलने की भी जरूरत थी। मल्टीनेशनल कम्पनी अपने उत्पाद बेचने के लिए हमेशा स्थानीय लोगों से सम्पर्क करती हैं जो स्थानीय भाषा में उनके उत्पाद बेच सकें। तब भारत, जो विश्व पटल पर एक बहुत बड़ा बाजार बन कर उभरा है, में अपना उत्पाद बेचने के लिए हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है।

विज्ञापनों का बाजार

विपणन विशेषज्ञों की यह संकल्पना पुख्ता होती चली गई कि अगर आपको अपना उत्पाद बेचना है तो ग्राहक की भाषा को जानना और समझना ही नहीं होगा बल्कि उस भाषा को बोलना भी होगा। अब भारत ठहरा विकासशील

देश तो व्यापार की सम्भावनाएँ, तो विश्व को मिली ही बल्कि हिन्दी का अस्तित्व ही बदल गया। मल्टीनेशनल कम्पनियों के उत्पादों की बिक्री कुछ इस तरह करने लगी "ठण्डा–ठण्डा––कूल–कूल" या "व्हाट एन आइडिया सर जी" और नहीं तो रोमन लिपि में बड़े–बड़े होर्डिंग पर लिखा नजर आने लगा–"KYA SWAAD HAI !"

आरम्भ में तो कट्टर भाषाविद्‌ों को हिन्दी का यह स्वरूप रास नहीं आया। भाषाविदों की तीखी बहस छिड़ गई। कुछ ने कहा–"हिन्दी का स्वरूप विकृत हो रहा है" तो कुछ ने कहा–"इसकी आत्मा से छेड़छाड़ की जा रही है" तो कुछ उदारवादी भाषाविदों का कहना था –"हिन्दी तो गंगा है जिसमें अनेक धाराएँ मिलती है। तो आने दो ना शब्दों को मिलने दो हिन्दी की पावनी गंगा में।"

जब भी कोई क्रांति होती है तो उसके प्रतिरोध अवश्य खड़े होते हैं लेकिन शनैः–शनैः उसके सुखद परिणाम भी आने लगते हैं। बाजारीकरण के युग में जो स्थान हिन्दी को मिला वो आश्चर्यजनक है। भारत में अपने व्यापार की सम्भावनाएँ, तलाशने के लिए बी–बी–सी लन्दन को अपनी वेबसाइट हिन्दी में बनानी पड़ी। बी–बी–सी–रेडियो बरसों से हिन्दी में बात कर रहा है। अब तो चीन का रेडियो भी अपने कुछ कार्यक्रम हिन्दी में प्रसारित करता है। ये हिन्दी का विस्तार नहीं तो और क्या है? क्या हुआ अगर हिन्दी के शब्दकोश में कुछ शब्द अंग्रेजी के जुड़ गए या कुछ चीनी शब्दों का ताना–बाना बुना गया। हम विश्व की किसी भी भाषा का अवलोकन करें तो उसमें ढेर सारे शब्द किसी ना किसी अन्य भाषा के अवश्य मिलेंगे। अंग्रेजी जैसी अंतर्राष्ट्रीय भाषा में भी हमें लैटिन से मैलाफाइड, एक्स्ग्रेशिया और ग्रीक से उबेरेमाफाइड जैसे शब्द मिलेंगे। फिर अगर हिन्दी में कुछ शब्द मिलकर यह विश्व के कैनवास पर लिखी जा रही है तो बुराई कहाँ है।

कम्प्यूटर का बाजार

बाजारीकरण में एक सहयोगी कम्प्यूटर भी रहा है। पूरे विश्व में कम्प्यूटर ने कब्जा करके एक दुन्दुभि बजा दी है। चारों ओर कम्प्यूटर–क्रांति का तहलका मचा है। उसमें इंटरनेट के तड़के ने विश्व को सुगन्धमयी बना दिया है। आज एक कमरे में बैठ कर आप विश्व के किसी भी कोने में बैठे व्यक्ति से ना केवल आप सम्पर्क कर सकते हैं बल्कि धड़ल्ले से बात भी कर सकते हैं। कम्प्यूटर की इस व्यवस्था ने ही सम्पूर्ण विश्व को बाजार का एक सुदृढ मंच प्रदान किया है।

आरम्भ में जब कम्प्यूटर आया तो अंग्रेजियत से भरा था। हिन्दी भाषी लोगों के गले यह कम्प्यूटर भी नहीं उतरा। लेकिन कच्ची सोच और परिपक्व सोच में अंतर होता है। कईं भाषाविदों ने इन विचारों को खंगाला तो एक बेहद सुरुचिपूर्ण विचार निकल कर सामने आया कि जब भी कोई देश खोज–आविष्कार करता है तो उसका नामकरण उसकी कार्यप्रणाली उस देश की सभ्यता–संस्कृति और भाषा से ओत–प्रोत होता है। लेकिन हर्ष का विषय तब होता है जब कोई देश उस आविष्कार को अपने देश की सभ्यता संस्कृति और भाषा के अनुकूल बना लें। यह हम भारतीयों के लिए बेहद हर्ष का विषय है कि कम्प्यूटर जैसी क्लिष्ट संरचना हमारे भारतीय सॉफ्टवेयर इंजीनियरों ने भारतीय सभ्यता संस्कृति के ना केवल अनुकूल बना दिया है बल्कि उसके अंग्रेजियत भरे की–बोर्ड को खुल जा सिम–सिम की जादुई तर्ज पर हिन्दी में बदल दिया है। अब हिन्दी भाषी लोगों के लिए कम्प्यूटर के विन्डोज पर काम करना इतना आसान हो गया है कि बस की–बोर्ड पर अंग्रेजी के शब्द रोमन लिपि में टाइप करो और संवाद हिन्दी की देवनागरी लिपि में बदलता जाएगा। जी हाँ ! यह मंगल फॉन्ट की करामात है।

कम्प्यूटर के इस बाजार में हिन्दी फॉन्ट की भरमार हो गई है। ना केवल आगरा, अमन, अंकित, अजय, कृतिदेव, अजय, सरोज जैसे हिन्दी के ढेर सारे फॉन्ट उपलब्ध हैं बल्कि युनिकोड जैसी व्यवस्था भी उपलब्ध है। युनिकोड मंगल फॉन्ट के नाम से जाना जाता है। जिसमें अंग्रेजी के की–बोर्ड को जैसा दबाएँगे वो वैसा ही देवनागरी लिपि उभर कर आएगा। जैसे हमें हिन्दी का बाजारीकरण लिखने के लिए HINDEE KAA BAAZAAREEKARAN टाइप करना पड़ेगा। हिन्दी भाषा का बाजारीकरण यहीं नहीं रुक गया। कहते हैं ना आवश्यकता आविष्कार की जननी है। टाइप करने वालों की आवश्यकताएँ बढ़ी तो इंजीनियरों ने ऐसे सॉफ्टवेयर उपलब्ध करवाए जिसमें मंगल फॉन्ट से कृतिदेव फॉन्ट या अन्य में और कृतिदेव फॉन्ट से मंगल फॉन्ट में बदलाव भी सम्भव हो पाया। इन्टरनेट की साइट्स पर भी गूगल ट्रांस्लिट्रेटर नाम से साइट हैं जो रोमन लिपि को देवनागरी में लिखना संभव करवा रही है। जब हिन्दी भाषा का बाजारीकरण हुआ तो अनुवाद की जरूरत भी महसूस हुई और गूगल पर तमाम भाषाओं का अनुवाद उपलब्ध है जिसमें हिन्दी भाषा भी सीना तान कर खड़ी है।

सोशल नेटवर्किंग का बाजार

इन्टरनेट पर सोशल नेटवर्क साइटस ने खलबली मचा दी है। अब तो चाहे ऑर्कुट हो या फेस बुक, नेटलॉग हो या इदहीस, लिंकेडिन हो या श्यामक, पूरा विश्व ही इन साइट्स पर उमड़ आया है। भाषाविदों की फिर वही बात आती है कि हिन्दी भाषी मुश्किल में हैं। पर नहीं, इन साइटस पर हिन्दी साहित्यकार और तमाम हिन्दी भाषी बेहद आरामदायक स्थिति में अपना सम्प्रेषण कर रहे हैं और हिन्दी प्रेमियों में भी यह साइटस विख्यात है। हिन्दी का बाजारीकरण यहाँ भी नजर आता है।

ब्लॉग्ज का बाजार

कमोबेश यही स्थिति ब्लॉग्ज की भी है। शुरू में तो ब्लॉग का नाम सुनकर ऐसा लगता था कि यह सब हिन्दी भाषी लोगों की पहुँच से कहीं दूर की चीज है पर ब्लॉग्ज पर तो सीधा हिन्दी लिखने का विकल्प मौजूद है। बस 'अ' विकल्प पर क्लिक करें और शुरू हो जाए रोमन में टाइप करना। तो फिर हिन्दी भाषियों के लिए यह एक सुखद सपना है जो साकार हुआ।

ई–मेल का बाजार

जब ई–मेल के पोस्टऑफिस इन्टरनेट के बाजार में आया, तो याहू बेहद प्रभावी था। पर हिन्दी भाषी लोगों के लिए यह अनुकूल नहीं था। वो अपना संवाद अंग्रेजी में लिखें या रोमन में टाइप करें। सच कहें तो रोमन में देवनागरी की आत्मा नदारद रहती है। फिर हिन्दी–भाषियों ने स्वयं ही एक विकल्प निकाला। गूगल ट्रांस्लिट्रेटर की सहायता से देवनागरी लिखते पर उसे कॉपी–पेस्ट करना पड़ता। यह सुखदायक नहीं था पर इसके अलावा चारा भी क्या था। जल्द ही हिन्दी भाषियों की बाजार पर कब्जा करने के लिए जी–मेल एक खूबसूरत विकल्प लेकर आया। इसमें 'अ' विकल्प पर क्लिक करें और रोमन टाइप करें और उसे देवनागरी में बदलने का जादू देखें। इस तरह हिन्दी भाषा का बाजारीकरण होता चला गया।

सिनेमा का बाजार

सिनेमा की बाजार में भी हिन्दी अपनी जड़े जमाए बैठी है। हिन्दी सिनेमा को पूरे विश्व में पहचान मिली है। ऑस्कर अवार्ड में नामित होने के लिए 'लगान' और 'स्लम डॉग मिलेनियर' जैसी फिल्मों में भी हिन्दी कहीं आड़े नहीं आई। आर–रहमान के दिए संगीत और गुलजार के लिखे

गीत "जय हो" को जब ऑस्कर अवार्ड से नवाजा गया तो हिन्दी के उदघोष "जय हो" का स्वतः ही विश्वव्यापीकरण हो गया। हिन्दी भाषा के बाजारीकरण में सिनेमा की महती भूमिका रही है।

ध्यान का बाजार

भारत के पास जो आध्यात्मिक शक्ति है वो किसी भी देश के पास नहीं है। अपने अमूल्य वेदों, ऋचाओं, ध्यान और योग की नैतिक सम्पत्ति के कारण भारत विश्व गुरू बना हुआ है। अपने ध्यान, योग और प्राचीन चिकित्सा पद्धतियों से उसने विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। ऐसे में विश्व को भारत का यह अमूल्य ज्ञान लेने के लिए हिन्दी भाषा का अध्ययन करना पड़ेगा। यदि उसे इस ज्ञान को अपनी भाषा में अनूदित करना हो तब भी उसे हिन्दी को तो आत्मसात करना ही होगा और ऐसा हो भी रहा है। भौतिकवादी परम्परा वाले देश अब शांति की तलाश में भारत के ध्यान योग और वेदों की ओर आकर्षित हो रहे हैं और हिन्दी का जादू सिर चढ कर बोल रहा है।

हिन्दी भाषा का बाजारीकरण और दुविधाएँ

इसमें कोई संशय नहीं कि हिन्दी भाषा का बाजारीकरण हुआ है। इससे हिन्दी को व्यापक विस्तार मिला है। पर भाषाविदों और आम नागरिक को भी यह महसूस हुआ है कि बाजारीकरण की भाषा में ढेर सारे अन्य भाषाओं के शब्दों की घुसपैठ हुई है। इससे भाषा में बदलाव भी आया है। लेकिन पूरे विश्व के उत्पादों और तकनीकों को अपनाने का सुख लेना है तो यह घुसपैठ तो स्वीकार करनी ही होगी। क्योंकि कोई भी उत्पाद या तकनीक जिस देश से आई है उस की भाषा का प्रभाव उस पर होगा ही। अब कम्प्यूटर को "कम्प्यूटर" कहलवाना ही प्रभावी है, इसे चाहे हम कितना ही संगणक कह लें यह आत्मसात नहीं हो पाएगा। हमें किसी देश का व्यंजन का लुत्फ उठाना है तो हमें उन्हीं शब्दों के साथ स्वाद लेना होगा। उन व्यंजनों को हम चाउमीन, पास्ता, नूड्ल्स के अनुवाद में पड़कर वो स्वाद नहीं ले सकते। आप और हम यह क्यों भूलते हैं कि हमारे भारतीय व्यंजन छोले–भटूरे, डोसा–साम्भर, इडली, रोटी, परांठे भी इन्हीं शब्दों के साथ प्रसिद्ध हैं तो अनुवाद की कशमकश में क्यों पड़ें।

अंतत

हिन्दी भाषा के बाजारीकरण से हिन्दी को लाभ ही हुआ है। इसे विश्वपटल तक विस्तार मिला है। नेट पर हिन्दी इस कदर छा गई है कि हम भारतीयों को यह चिंतन करने की जरूरत नहीं कि हिन्दी कहीं लुप्त हो जाएगी। यह हिन्दी का बाजारीकरण ही है जिसके भरोसे हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी की उम्र इस पृथ्वी की उम्र से कहीं कम नहीं हो सकती।

अपना तो है ये नारा
वसुधैव कुटुम्बकम हमारा
हिन्दी भाषा हो बस अपनी
बाजारीकरण चाहे जग सारा

ऊँट कुंण –सी घड़ बैठे ?
ऊँट पता नहीं किस करवट बैठे ? भविष्य का कुछ कहा नहीं जा सकता।

राजभाषा संबंधी कार्यक्रम एवं गतिविधियाँ

हिन्दी पखवाड़ा, 2013

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पत्रांक 10(1)/2013–हिन्दी/दिनांक 26 अगस्त, 2013 की अनुपालना में केन्द्र द्वारा हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य पर हिन्दी पखवाड़ा मनाए जाने का निर्णय लिया गया। इस हिन्दी पखवाड़ा के अन्तर्गत राजभाषा के प्रगामी प्रयोग व उपयुक्त वातावरण के सृजन हेतु दिनांक 14–28 सितम्बर, 2013 तक विभिन्न कार्यक्रम एवं गतिविधियाँ आयोजित की गई। इस दौरान श्री शरद पवार, माननीय केन्द्रीय कृषि एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्री, भारत सरकार के प्रेरणादायी संदेश को केन्द्र के सभी मुख्य सूचना पट्टों एवं स्थलों पर चस्पां करवाया गया।

(1) हिन्दी में आशुभाषण प्रतियोगिता

हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत केन्द्र में दिनांक 16.09.2013 को हिन्दी में आशुभाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें केन्द्र के वैज्ञानिकों/अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने हिन्दी भाषा के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति क्षमता का प्रदर्शन किया। आशुभाषण प्रतियोगिता में कूट क्रमांक के अनुसार विविध विषयों पर प्रतिभागियों की प्रस्तुति ने केन्द्र में हिन्दी मय वातावरण का सृजन किया।

इस आशुभाषण प्रतियोगिता के निर्णायक मंडल के रूप में पधारे डॉ. ए.के. पटेल, प्रभागाध्यक्ष, केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान, बीकानेर ने प्रतिभागियों की कौशलता की सराहना करते हुए कहा कि हिन्दी जन–जन की भाषा है और यह देश को जोड़ने का माध्यम भी है। उन्होंने राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र की इस अनूठी प्रतियोगिता की भूरि–भूरि प्रशंसा की। निर्णायक मंडल के अन्य सदस्य के रूप में पधारे श्री ब्रजरतन जोशी, व्याख्याता, हिन्दी साहित्य, राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर ने कहा कि केन्द्र द्वारा सभी वर्गों के कार्मिकों को साथ लेते हुए इस प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है जो कि एक प्रशंसनीय कार्य है। श्री जोशी ने सभी प्रतिभागियों को सम्बन्धित विषय पर विचारों की अभिव्यक्ति हेतु कुछ जरूरी पहलुओं, प्रतियोगिता

हिन्दी में आशुभाषण प्रतियोगिता के विजेता प्रतिभागी

वर्ग अ	वर्ग ब एवं स	वर्ग द
प्रथमः डॉ. उमेश कुमार बिस्सा	प्रथमः (1) श्री सतनाम सिंह	प्रथमः श्री राजेश कुमार
द्वितीयः डॉ. राघवेन्द्र सिंह	(2) डॉ. बलदेव दास किराडू	द्वितीय : श्री दुर्गासिंह
तृतीय : डॉ. सज्जन सिंह	द्वितीय : श्री हरपाल सिंह	तृतीय : श्री माणक किराडू
पारितोषिकः डॉ. सुमन्त व्यास	तृतीय : डॉ.दाऊलाल बोहरा	पारितोषिक : श्री सुमेर सिंह
	पारितोषिकः श्री भरत आचार्य	
	(2) श्री अविनाश शर्मा	

हेतु की जाने वाली पूर्व तैयारी आदि के संबंध में भी अवगत करवाया। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि यह किसी भी व्यक्ति के लिए कठिन कार्य है कि उसे तत्काल विषय का आवंटन किया जाए और निर्धारित समय में विचार प्रकट करने हेतु पाबद्ध किया जाए, राजभाषा हिन्दी के लिए ऐसे ही प्रयास सच्चे रूप में हिन्दी को आगे बढ़ाएंगे।

इस अवसर पर केन्द्र के निदेशक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि इस प्रकार की प्रतियोगिता के पीछे उद्देश्य यही है कि प्रत्येक कार्मिक की अभिव्यक्ति क्षमता में अभिवृद्धि की जा सके। उन्होंने केन्द्र के सभी प्रतियोगियों की तारीफ करते हुए कहा कि प्रतियोगिता में विचारों की अभिव्यक्ति सहज रूप में सामने आई है और यह सब अभ्यास के कारण हैं। इससे नेतृत्व के गुणों का विकास होता है और आप जितने ज्यादा अच्छे वक्ता हैं आपका प्रभाव भी उसी अनुरूप आस–पास के वातावरण पर होगा।

कार्यक्रम का संचालन करते हुए प्रभारी राजभाषा डॉ. एफ.सी. टुटेजा ने हिन्दी की संवैधानिक स्थिति के संबंध में जानकारी दी। साथ ही इस अवसर पर डॉ. एस. अय्यप्पन, माननीय महानिदेशक, भाकृअनुप, नई दिल्ली की ओर से जारी अपील को पढ़कर सुनाया गया। प्रतियोगिता के अन्त में श्री नेमीचन्द, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) द्वारा धन्यवाद ज्ञापित किया गया।

(2) हिन्दी में टंकण प्रतियोगिता

केन्द्र के कार्मिकों व अधिकारियों में कम्प्यूटर पर हिन्दी प्रयोग के प्रति रूझान बढ़ाने एवं प्रोत्साहित करने के प्रयोजनार्थ दिनांक 18.09.2013 को हिन्दी में टंकण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। यह प्रतियोगिता दो स्वरूपों में यथा–रेमिंगटन कुंजीपटल एवं फोनेटिक हिन्दी टाईपिंग (गूगल इंडिक) आधारित रखी गई जिसमें प्रतियोगियों ने उत्साहपूर्वक अपनी भागीदारी निभाई। केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने प्रतियोगिता स्थल पर प्रतियोगियों का उत्साहवर्धन किया तथा कहा कि इस प्रकार की प्रतियोगिताएं अधिक–से–अधिक आयोजित की जाए जिससे सभी अधिकारी एवं कर्मचारी कम्प्यूटर पर हिन्दी में कार्य करने हेतु आत्मनिर्भर बन सके। हिन्दी में टंकण प्रतियोगिता में निम्नलिखित विजेता रहे –

रेमिंगटन कुंजीपटल द्वारा	फोनेटिक गूगल इंडिक द्वारा
प्रथम : श्री भरत कुमार आचार्य	प्रथम : डॉ. सुमन्त व्यास
द्वितीय : श्री हरपाल सिंह	द्वितीय : डॉ. राकेश कुमार पूनियाँ
तृतीय : श्री राम कुमार सूरी	तृतीय : डॉ. अशोक नागपाल
पारितोषिक : श्री राजेश कुमार	पारितोषिक : डॉ.शिरीष नारनवरे

(3) हिन्दी में निबन्ध लेखन प्रतियोगिता

हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत ही दिनांक 21.09.2013 को हिन्दी में निबन्ध लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें निम्नलिखित प्रतिभागी विजेता रहे :–

वर्ग –अ ब व स	वर्ग – द
प्रथम : डॉ.सुमन्त व्यास	प्रथम : श्री दुर्गा सिंह
द्वितीय : श्री हरपाल सिंह	द्वितीय : श्री माणक लाल किराडू
तृतीय : श्री दिनेश मुंजाल	तृतीय : श्री सुखदेव
पारितोषिक : डॉ.बलदेव दास किराडू	पारितोषिक : श्री सुमेर सिंह

(4) हिन्दी में प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

हिन्दी पखवाड़े की गतिविधियों के अन्तर्गत दिनांक 23.09.2013 को केन्द्र सभागार में हिन्दी में प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन रखा गया। वस्तुनिष्ठ आधार पर रखी गई इस प्रतियोगिता में अधिकारियों/कर्मचारियों ने सहर्ष अपनी भागीदारी निभाते हुए पुरस्कार अर्जित किए :–

वर्ग – अ ब व स	वर्ग – द
प्रथम : डॉ. सुमन्त व्यास	प्रथम : श्री दुर्गा सिंह
द्वितीय : श्री भरत कुमार आचार्य	द्वितीय : श्री सुमेर सिंह
तृतीय : (1) डॉ. काशीनाथ (2) श्री हरपाल सिंह	तृतीय : श्री माणक लाल किराडू
(3) डॉ. बलदेव दास	पारितोषिक : श्री किशन कुमार
पारितोषिक : (1) श्री दिनेश मुंजाल (2) डॉ. राकेश पूनियाँ	

(5) शोध आदि सामग्री का आकर्षक स्वरूप में प्रदर्शन

हिन्दी पखवाड़े से प्रारम्भ हुई इस गतिविधि हेतु केन्द्र के वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों को उनके कार्यक्षेत्र से जुड़ी शोध सामग्री को आकर्षक स्वरूप में प्रदर्शन के उद्देश्य से इन्हें हिन्दी व अंग्रेजी में तैयार करने हेतु प्रोत्साहित किया गया ताकि आमजन व केन्द्र भ्रमणार्थ आने वाले पर्यटक सरल व आकर्षक स्वरूप में प्रदर्शित सामग्री को देखते हुए उपयोगी जानकारी का संग्रहण कर सके। इस हेतु केन्द्र के वैज्ञानिकों को विषयों का आवंटन भी किया गया है।

(6) राजभाषा कार्यशाला

राजभाषा संबंधी प्रतियोगिताओं के आयोजन के अलावा इस पखवाड़े में दिनांक 26 सितम्बर, 2013 को केन्द्र सभागार में राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें राजभाषा की स्थिति व प्रगति पर गहन चिन्तन हुआ।

केन्द्र में आयोजित इस राजभाषा कार्यशाला में डॉ. नीरज दइया, विभागाध्यक्ष (हिन्दी साहित्य), केन्द्रीय विद्यालय नम्बर 01, बीकानेर ने **''हिन्दी कितनी पास कितनी दूर ''** विषयक व्याख्यान में कहा कि देश को एकसूत्र में बांधने के लिए भाषा ही सबसे सशक्त माध्यम है, अतः आधुनिक युग में हमें हिन्दी को वास्तविकता में अपनाना होगा। इस हेतु गहन व पुनः विचार किया जाना होगा। डॉ. दइया ने उन सभी दावों को खारिज किया जो कि प्रादेशिक भाषाओं को हिन्दी भाषा के विकास में बाधक मानते हैं। कार्यशाला के दूसरे व्याख्यान **''हिन्दी और हमारी भूमिका''** की प्रस्तुति देते हुए डॉ. प्रकाश आचार्य, वरिष्ठ व्याख्याता, जीव विज्ञान, राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर ने कहा कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी का संपूर्ण कार्य अपनी भाषा में होने से हमारा राष्ट्र विकसित होगा। डॉ. आचार्य ने उच्च अध्ययन में हिन्दी के अध्ययन व अध्यापन को एक महती आवश्यकता बताया। उन्होंने कहा कि हिन्दी हृदय तक पहुंचने वाली भाषा है तथा इससे व्यक्तित्व का विकास होगा, अतः दूरी पाटने का दायित्व हम सभी का हैं। उन्होंने कहा कि हिन्दी देश की 'आत्मा' बन सकती है इस हेतु भाषा में शब्दों का संवर्धन, शोध व तकनीकी विषयों को अधिक–से–अधिक प्रसारित किए जाने के महत्ती प्रयास किए जाने चाहिए। कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि यह अदभुत संयोग है कि इस कार्यशाला में एक हिन्दी भाषा विशेषज्ञ है और एक विज्ञान विषय का विशेषज्ञ है, देश में अगर हिन्दी की प्रबल दावेदारी स्थापित करनी है तो इस प्रकार के संगम किया जाना प्रासंगिक होगा क्योंकि अब वह समय नहीं है जब हिन्दी भाषा को केवल साहित्य की भाषा तक ही सीमित किया जा सके, जरूरत है देश की हर एक नूतन प्रौद्योगिकी को इस भाषा के माध्यम से सरल से सरल रूप में प्रसारित किया जाए। डॉ. फतेह चन्द टुटेजा, प्रभारी राजभाषा ने कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डाला तथा धन्यवाद प्रस्ताव डॉ. सुमन्त व्यास, प्रधान वैज्ञानिक ने दिया।

हिन्दी पखवाड़ा : पुरस्कार वितरण एवं समापन समारोह

हिन्दी पखवाड़े (14–28 सितम्बर) का पुरस्कार वितरण एवं समापन समारोह दिनांक 28.09.2013 को केन्द्र सभागार में आयोजित किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. एन.डी. यादव, अध्यक्ष, काजरी, बीकानेर ने कहा कि मातृभाषा की प्रगति हेतु हमें हमेशा तत्पर रहना होगा। उन्होंने हिन्दी को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए इसे सरल एवं शुद्ध रूप में प्रयुक्त किए जाने की बात पर जोर देते हुए कहा कि हिन्दी भाषा को अधिकाधिक कम्प्यूटर पर उपयोग में लाए जाने से हिन्दी और तेजी से प्रसार पाएगी।

इस हिन्दी पखवाड़े के पुरस्कार वितरण व समापन समारोह के अध्यक्ष एवं केन्द्र निदेशक डॉ. नितीन वसन्तराव

पाटिल ने केन्द्र द्वारा आयोजित हिन्दी पखवाड़े की विभिन्न गतिविधियों पर बोलते हुए कहा कि राजभाषा के बेहतर कार्यान्वयन व उपयुक्त वातावरण के सृजन हेतु हिन्दी प्रतियोगिताओं जैसे प्रयास प्रासंगिक है तथा जरूरत इस बात की भी है कि इनमें सभी कार्मिक अपनी सहर्ष भागीदारी निभाएं, क्योंकि भाषा किसी व्यक्ति या प्रांत की नहीं है अपितु यह संपूर्ण देश का प्रतिनिधित्व करती है, ऐसे में भाषा के विकास में हमारे द्वारा प्रदत्त सहयोग देश हित में एक सर्वोपरि कर्त्तव्य का निर्वहन होगा। उन्होंने प्रतियोगिताओं में नूतनता व विविधता लाए जाने की बात कही। मुख्य अतिथि एवं अध्यक्ष महोदय द्वारा हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत आयोजित प्रतियोगिताओं के विजेताओं को बधाई संप्रेषित करते हुए पुरस्कार वितरित किए गए। केन्द्र के प्रभारी

राजभाषा डॉ. फतेह चन्द टुटेजा ने कहा कि हम यदि हिन्दी भाषा के शब्द कोश की बात करें तो उसमें बहुत सारे अन्य भाषाओं के शब्द समाहित है जो कि इस भाषा की उदारता व आत्मसात करने की विशेषता को प्रकट करते हैं। इस अवसर पर बीकानेर के वरिष्ठ साहित्यकार श्री विजय कुमार धमीजा ने भी हिन्दी भाषा पर अपनी रचनाएं प्रस्तुत की। धन्यवाद प्रस्ताव श्री नेमीचंद, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) द्वारा ज्ञापित किया गया।

राजभाषा कार्यशाला : 11 फरवरी, 2014

राजभाषा कार्यशाला का कार्यवृत्त

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा राजभाषा नीति कार्यान्वयन के अन्तर्गत दिनांक 11 फरवरी, 2014 को एक दिवसीय राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया। राजभाषा के बेहतर उपयोग एवं तकनीकी विषय पर आधारित इस कार्यशाला में बिन्नाणी महाविद्यालय, बीकानेर के डॉ. घनश्याम व्यास, वरिष्ठ व्याख्याता, हि.सा. को आमन्त्रित किया गया। साथ ही तकनीकी विषय पर केन्द्र के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. अशोक कुमार नागपाल द्वारा व्याख्यान प्रस्तुत किया।

स्वागतम्

कार्यशाला में केन्द्र के निदेशक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष, आमंत्रित वक्ताओं तथा उपस्थित सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों का स्वागत करते हुए कार्यशाला सत्र प्रारम्भ किया गया।

राजभाषा कार्यशाला : उद्देश्य व महत्व

सर्वप्रथम कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए प्रभारी राजभाषा डॉ. फतेह चन्द टुटेजा ने बताया गया कि भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल

क्रियान्वयन हेतु केन्द्र में नियमित रूप से राजभाषा कार्यशालाएं आयोजित की जाती है। राजभाषा कार्यशालाओं में बहुआयामी विषय भी शामिल किए जाते हैं जो केन्द्र के सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों को उनके कार्यक्षेत्र के ज्ञान में अभिवृद्धि करने में मददगार हो सके। आज की आयोजित कार्यशाला का मुख्य ध्येय राजभाषा के बेहतर व शुद्ध प्रयोग एवं विज्ञान का प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में योगदान से संबंधित हैं।

व्याख्यान सत्र

राजभाषा कार्यशाला में **'विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का योगदान'** विषयक प्रथम व्याख्यान केन्द्र के डॉ. अशोक कुमार नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक ने प्रस्तुत किया। डॉ. नागपाल द्वारा रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन, नई दिल्ली द्वारा 5–7 दिसम्बर, 2013 में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी सम्मेलन में भाग लिया गया। बतौर डॉ. नागपाल इस सम्मेलन में केन्द्र की ओर से **'संतुलित आहार द्वारा ऊँटों का वैज्ञानिक पोषण प्रबंधन'** पर आलेख प्रस्तुत करते हुए सभी का उष्ट्र प्रजाति के संरक्षण एवं विकास की ओर ध्यान खींचा गया। कार्यशाला के इस अवसर पर अपने व्याख्यान में उन्होंने बताया कि यह सम्मेलन विश्व का सबसे बड़ा हिन्दी सम्मेलन था तथा लिम्का बुक ऑफ रिकॉर्ड में 2015 में इसका उल्लेख किया जाएगा। इस अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का उद्देश्य विज्ञान को जनमानस तक उनकी अपनी भाषा में पहुंचाना था ताकि उनको इससे अधिक से अधिक लाभ मिल सके। डॉ. नागपाल ने कहा कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के आविष्कारों यथा– कम्प्यूटर, मोबाइल, नेटवर्किंग, घरेलू सामान और परिवहन के विविध साधनों ने हमारे जीवन में आमूलचूल परिवर्तन कर जीवन की राह आसान कर दी तथा विज्ञान पर ही जीवन का आधार टिका है, यदि सीधे लफ्ज़ों में कहें तो बिना विज्ञान के हम खड़े भी नहीं हो सकते। अपने व्याख्यान प्रस्तुति में उन्होंने बताया कि हिन्दी का विकास किसी एक व्यक्ति, संस्थान, राजभाषा विभाग, तथा वे व्यक्ति, जिनकी मातृभाषा हिन्दी है, का ही नहीं, अपितु सभी का नैतिक कर्तव्य है कि हम न केवल अपने कार्यालयों में इसका अधिक से अधिक प्रयोग करें, बल्कि इसको अपनाने, बोलने में गर्व का अनुभव करें। सम्मेलन से जुड़ी स्मृतियों का हवाला देते हुए डॉ. नागपाल ने कहा कि भाषा के क्षेत्र में भी बहुत बड़े स्तर पर संतोषजनक कार्य हो रहा है तथा सम्मेलन में सभी द्वारा हिन्दी में आलेखों का प्रस्तुतीकरण उत्साहवर्धक रहा।

राजभाषा कार्यशाला में आमंत्रित अतिथि वक्ता डॉ. घनश्याम व्यास, वरिष्ठ व्याख्याता, बिन्नाणी महाविद्यालय, बीकानेर ने **'हिन्दी भाषा शुद्ध स्वरूप में'** विषयक व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए कहा कि भाषा का मूल आधार उसकी ध्वनियाँ हैं, ऐसे में यदि हम सार्थक और शुद्ध और व्यावहारिक उच्चारण के प्रति गंभीर रहेंगे तो निश्चित रूप से भाषा के प्रति हमारा सामाजिक और राष्ट्रीय दायित्व कुशलता के साथ निभाया जा सकेगा। डॉ. व्यास ने यह भी बताया कि वैज्ञानिक एक संत की तरह है जो अपने वैज्ञानिक अनुभवों एवं खोजों को समाज के बीच साझा करता है और साझा की यह प्रक्रिया भाषा के सरलीकरण के द्वारा ही संभव हैं क्योंकि यह भाषा का स्वभाव है जो निरन्तर कठिन से सरल की ओर बढ़ती है। वैज्ञानिक संसाधनों के उपयोग के चलते आज हमारा विशेष कर्म भाषा के शुद्धिकरण पर होना चाहिए ताकि भाषा का सही और सार्थक संप्रेषण एक सेतु की तरह जन समाज के साथ जुड़ सके। भाषा शुद्धिकरण के लिए हमें व्याकरणिक क्षमता को बढ़ाना होगा ताकि हम भाषा की अस्मिता के साथ खिलवाड़ करने से बच सके और आने वाली पीढ़ी को भाषा का वही रूप हम उन्हें उपहार के रूप में दें जो हमें प्राप्त हुआ है।

अपने व्याख्यान के दौरान डॉ. व्यास ने तत्सम्, तद्भव, देशज्, विदेशी व अन्य शब्दों के साथ–साथ राजभाषा, राष्ट्रभाषा व मातृभाषा के भावार्थ को प्रस्तुत किया। डॉ. व्यास ने अपने व्याख्यान के अंत में कहा कि हिन्दी भाषा का भविष्य किसी भी दृष्टि से असुरक्षित नहीं है परंतु आवश्यकता इस बात की भी है कि हमें इसे गंभीरता एवं सामूहिक प्रतिबद्धता से आगे ले जाना होगा।

इस अवसर पर केन्द्र के निदेशक एवं राजभाषा कार्यशाला कार्यक्रम के अध्यक्ष के रूप में बोलते हुए डॉ. नितीन वसन्तराव पाटिल ने कहा कि एक अनुसंधान संस्थान होने के नाते हमारा दायित्व भाषा को लेकर भी और अधिक बढ़ जाता है क्योंकि ऊँट पालक व किसानों के साथ परस्पर संवाद की स्थिति में हमें भाषा के शुद्ध व व्यावहारिक पहलू की आवश्यकता पड़ती है। यदि संवाद की स्थिति संतोषजनक नहीं हैं तो वैज्ञानिक व तकनीकी ज्ञान का हस्तांतरण करने में कठिनाई आएगी और जरूरतमंद ऊँट पालक व किसान उस लाभ से वंचित रहेंगे जो उनके लिए ही किया गया हो, अतः हम हिन्दी भाषा को अधिकाधिक व्यवहार में अपनाएं तथा नियमित रूप से कार्यशाला जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से कार्मिक गण इसमें सुधार लाएं तो अनुसंधानों की सार्थकता तय होगी। डॉ. पाटिल ने कार्यशाला में प्रतिभागियों को प्रोत्साहित करते हुए कहा कि वे हिन्दी को पूरे मनोयोग से अपनाएं और इसका उन्हें लाभ होगा, विचारों के सामजस्य वाले ऐसे मंच बहुत ही महत्वपूर्ण हैं जहां वक्ता अपनी बात को एक सीमित समय में प्रस्तुत करता है और भाषी संबंधी बाधाओं एवं जिज्ञासाओं का निराकरण प्रस्तुत करता है। डॉ. पाटिल ने भाषा के सरलीकरण पर जोर देते हुए मौलिक लेखन को बढ़ावा दिए जाने की आवश्यकता जताई।

केन्द्र में आयोजित इस कार्यशाला का संचालन डॉ.फतेह चन्द टुटेजा ने किया तथा धन्यवाद प्रस्ताव में केन्द्र के सहायक एवं वित्त लेखाधिकारी श्री भरत कुमार आचार्य द्वारा वक्ताओं, केन्द्र निदेशक एवं उपस्थित सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों को इस कार्यशाला को सफल बनाने में सहयोग प्रदान करने पर आभार व्यक्त किया गया।

राजभाषा कार्यशाला : 25 जून, 2014

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा राजभाषा नीति कार्यान्वयन के अन्तर्गत दिनांक 25 जून, 2014 को केन्द्र के समिति कक्ष में एक दिवसीय राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया। 'राजभाषा हिन्दी और उसका कार्यान्वयन' विषय पर आधारित इस कार्यशाला में व्याख्यान प्रस्तुति हेतु राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर के पूर्व उप प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष (हि.सा.) डॉ. मदन केवलिया को आमंत्रित किया गया। केन्द्र के समिति कक्ष आयोजित राजभाषा कार्यशाला में 'राजभाषा हिन्दी और उसका कार्यान्वयन' विषयक व्याख्यान में डा. मदन केवलिया ने कहा कि हिन्दी में काम करने में झिझक महसूस न करें, इस हेतु सर्वप्रथम भाषा का सरल रूप अपनाएं तत्पश्चात् भाषा की शुद्धता पर ध्यान दें, शुरू में अशुद्धियों की अधिकता से विचलित न हों तथा हिन्दी में प्रचलित शब्दों का ही प्रयोग करें। अतिथि वक्ता ने प्रतिभागियों को भाषा की क्लिष्टता से

बचने की सलाह दी ताकि असंजस की स्थिति से बच सके और भाषा का प्रवाह भी बना रहे। डॉ. मदन केवलिया ने कहा कि कार्यालय में राजभाषा को दत्तचित्त होकर अपनाने से उसका कार्यान्वयन बेहतर ढंग से सुनिश्चित किया जा सकता है। इसके लिए सकारात्मक दृष्टिकोण व मजबूत इच्छा शक्ति परम आवश्यक है। उन्होंने राजभाषा के उत्तरोत्तर विकास हेतु प्रशासनिक मंडल, अधिकारी एवं कर्मचारी गणों तथा कार्यालय प्रमुख के समन्वित प्रयासों की महत्ती आवश्यकता जताई। साथ ही कहा कि राजभाषा को हिन्दी पखवाड़ा सप्ताह दिवस तक सीमित न रखते हुए इसके लिए सतत प्रयत्नशील रहने पर ही सही मायने में भाषा का विकास सुनिश्चित होने में मदद मिलेगी। उन्होंने अपने व्याख्यान में कहा कि हिन्दी एक सशक्त भाषा है तथा इसमें सभी भाषाओं के शब्द विद्यमान हैं, यह भाषा खुले मन से अन्य भाषाओं का स्वागत करती है, आत्मसात् की इसी विशेषता के साथ कई अन्य विलक्षणताएं इसे महत्व प्रदान करवाती है। अतिथि वक्ता ने सउदाहरण अपनी बात रखते हुए हिन्दी भाषा के मानकीकरण होने की बात का पुरजोर पक्ष रखा।

व्याख्यान के पश्चात् सामान्य चर्चा सत्र में प्रतिभागियों द्वारा राजभाषा हिन्दी के प्रयोग से जुड़ी विभिन्न समस्याओं यथा– शब्दों के शुद्ध लेखन, व्याकरण नियम तथा शब्दों के चलन आदि को अतिथि वक्ता के समक्ष रखा गया, एक स्वस्थ चर्चा के साथ कार्मिकों की राजभाषा से जुड़ी सभी जिज्ञासाओं का उचित निराकरण किया गया।

इस अवसर पर केन्द्र के निदेशक एवं कार्यशाला अध्यक्ष डा. नितीन वसन्तराव पाटिल ने कहा कि राजभाषा का अपने आप में विशेष महत्व है तथा इसका अधिक से अधिक प्रयोग किया जाना समय की मांग है क्योंकि जब कई अन्य देशों यथा– जर्मनी, जापान, चीन, कोरिया आदि अपनी मातृभाषा को महत्व देते हैं तो हमें इनसे प्रेरणा लेते हुए हिन्दी भाषा को आत्मीयता से अपनाना चाहिए। डा. पाटिल ने प्रतिभागियों को प्रोत्साहित करते हुए कहा कि कार्यशालाओं के माध्यम से अतिथि वक्ताओं द्वारा प्रदत्त ज्ञानवर्धक बातें अमल में लाने से उन्हें निश्चित रूप से लाभ मिलेगा है तथा भाषा विशेषज्ञों का भरपूर सान्निध्य राजभाषा प्रयोग हेतु सुगम मार्ग प्रशस्त करेगा। उन्होंने प्रतिभागियों को विशेष रूप से प्रोत्साहित करते हुए कहा कि भाषा प्रयोग को लेकर अपनी झिझक को दरकिनार करते हुए अपनी लेखनी में निरंतर अभ्यास द्वारा सुधार कर सकते हैं। यह प्रवृत्ति उनमें पूर्ण विश्वास व नूतन ऊर्जा का संचार करने में सहायक सिद्ध होगी जिससे अंततः उनका व्यक्तित्व अधिक प्रखर बनेगा।

कार्यशाला के अंत में श्री नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी द्वारा भाषा विशेषज्ञ तथा केन्द्र निदेशक की प्रेरणा एवं प्रोत्साहन, केन्द्र वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों का राजभाषा हिन्दी के प्रति कुशल दायित्व निवर्हन हेतु आभार व्यक्त किया गया। केन्द्र में आयोजित इस कार्यशाला संबंधी समाचार का प्रचार–प्रसार की दृष्टि से नगर के विभिन्न समाचार–पत्रों द्वारा पर्याप्त स्थान दिया गया।

केन्द्र को मिला राजभाषा सम्मान

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर की ओर से वर्ष 2013–14 के दौरान नगर में राजभाषा में सर्वाधिक एवं उत्कृष्ट प्रयोग के लिए नराकास, बीकानेर की दिनांक 30.06.2014 को आयोजित बैठक में सम्मानित किया गया।

आपके पत्र

आपके द्वारा प्रकाशित वार्षिक गृह पत्रिका 'करभ'–2013 का अंक विविध विषयों, आकर्षक साज–सज्जा और रंगीन चित्रों से सुसज्जित है। अंक में प्रकाशित वैज्ञानिक लेखों के माध्यम से संस्थान द्वारा किए गए अनुसंधानों को किसानों तक पहुँचाने में तथा हिन्दी के प्रचार–प्रसार में अपना उद्देश्य पूर्ण करती प्रतीत होती है। इस अथक प्रयास के लिए आप तथा संपादक मंडल बधाई के पात्र है। आशा है, भविष्य में प्रकाशित होने वाले अंकों में इसकी गुणवत्ता को बनाए रखेंगे।

मुरारी लाल गुप्ता
सहायक निदेशक (राजभाषा)
केन्द्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसंधान संस्थान
अविकानगर

करभ का ताजा अंक देखा, पढ़कर सुखद प्रतीति हुई कि एक भिन्न अनुशासन का संस्थान भी राजभाषा के लिए उचित रीति और नीति से काम कर रहा है। पत्रिका का आकल्पन बेहद सुंदर है, विषय से सम्बन्धित जानकारियाँ भी ज्ञानवर्धक है। नए अनुसंधान की सूचना भी सब के लिए उपादेय है, नवाचार की ओर उन्मुख होंगे तो स्थिति आर गति के साथ दशा और दिशा में भी परिवर्तन आएगा।

ब्रज रतन जोशी
व्याख्याता (हि.सा.)
राजकीय डूँगर महाविद्यालय,
बीकानेर

आपके केन्द्र की करभ पत्रिका पढ़ने का अवसर मिला। पत्रिका में समाहित आलेखों से यह पता चलता है कि करभ अपनी उपयोगिता निरंतर सिद्ध कर रही है। अनुसंधान आलेख के साथ–साथ कविता आदि पाठकों की रूचि बढ़ाने में सहायक बन पड़े हैं। आगामी अंक की शुभ कामनाओं के साथ।

प्रेम प्रकाश पारीक
केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीकानेर

ऊँट गाजै अर बिलोवणौ बाजै।
जिस घर में मस्त ऊँट बलबलाते रहते हैं और बिलौना चलता रहता है, गांव में वह घर सम्पन्न माना जाता है।

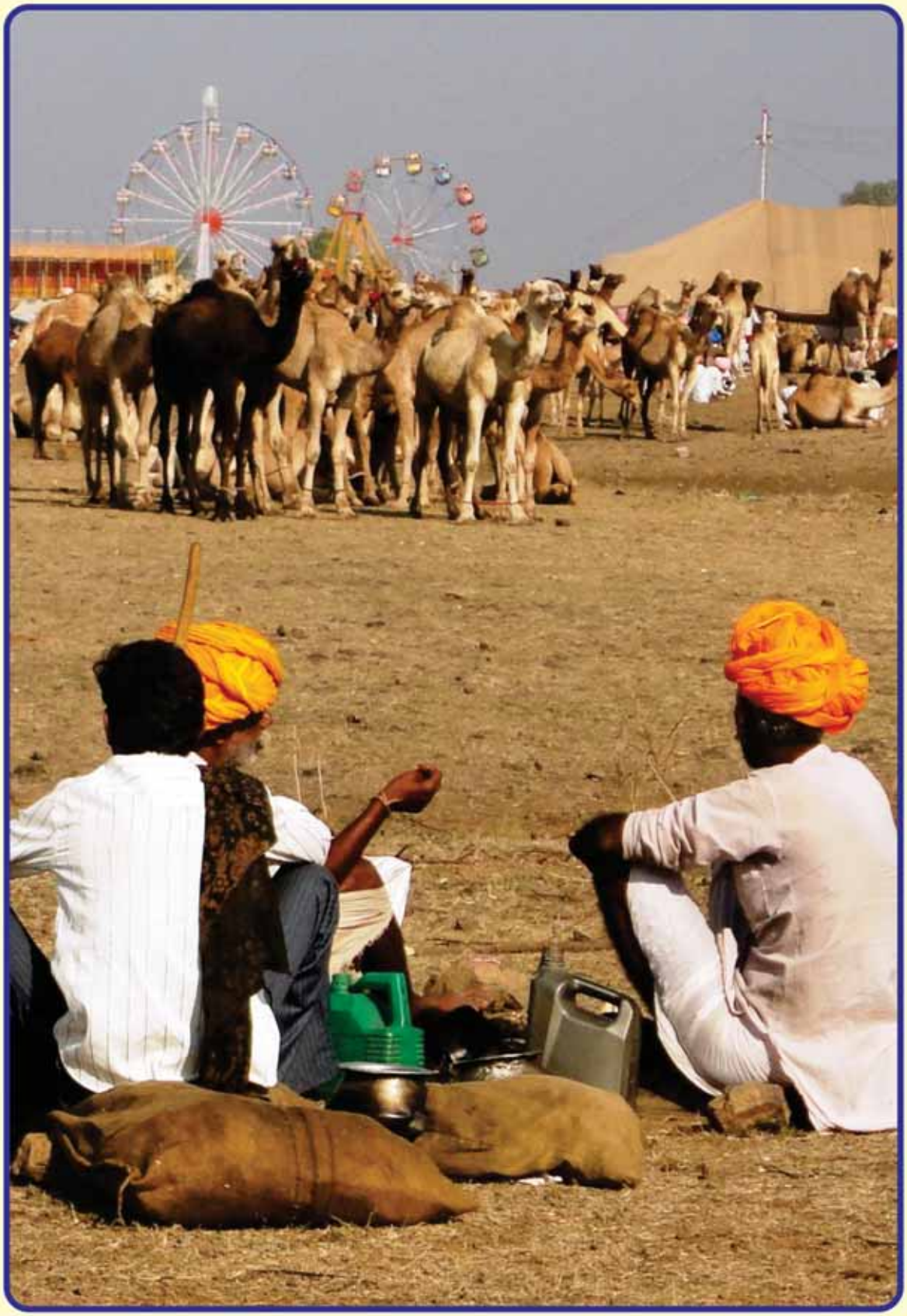

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch